7178

सोमसी

हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी का
त्रैमासिक मुख-पत्र

र्ष 4 जुलाई, 1978 अंक

मुख्य सम्पादक
अध्यक्ष अकादमी
दौलत राम चौहान

सम्पादक
हरिचन्द पराशर

सहयोगी
सरोज शर्मा

१५

जनवरी, अप्रैल, जुलाई तथा अक्तूबर में प्रकाश्य ।

लेखक के विचारों तथा दिए गए तथ्यों से सम्पादक की सहमति आवश्यक नहीं ।

प्राप्ति स्थान:
हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी, परीमहल, शिमला-171009

Scanned with CamScanner

"SOMSI" Quarterly Literary Magazine

Form IV

1. Place of publication	..	Simla (Himachal Pradesh)
2. Periodicity of its Publication	..	Quarterly
3. Printer's name	..	Shri K. C. Rajput
(a) Nationality	..	Indian
(b) Address	..	Controller, Printing and Stationery, Himachal Pradesh, Simla-3.
4. Publisher's name	..	Hari Chand Prasher
(a) Nationality	..	Indian
(b) Address	..	Secretary, Himachal Academy of Arts, Culture and Languages, Simla-9.
5. Editor's name	..	Hari Chand Parasher
(a) Nationality	..	Indian
(b) Address	..	Secretary, Himachal Academy of Arts, Culture & Languages, Simla-9.
6. Owner	...	Himachal Academy of Arts, Culture & Languages, Simla-9.

I, Hari Chand Prasher, hereby declare that particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

Sd/-
H. C. Prasher,
Publisher
21st October,

सम्पादकीय

1. "सोमसी" जनवरी, 75 से आरम्भ हुई थी। यह इसका चौथा साल है। वर्ष 1977 तक इसके बारह अंक छपे हैं, 1978 में दो छप चुके हैं, यह तीसरा है। बारह अंकों में प्रकाशित सामग्री की विषय-सूची समेकित रूप में इस अंक में सामान्य पाठकों की जानकारी के लिए दे रहे ह। "सांस्कृतिक हिमाचल" का संधान इसका मुख्य प्रयोजन है। यहां की देवगाथा, लोकगाथा, भाषा, कला, इतिहास और साहित्य पर गवेषणात्मक और समीक्षात्मक रचनाएं इसमें विशेष स्थान प्राप्त करती हैं। यहां की पार्वती संस्कृति समग्र भारतीय प्राचीन संस्कृति की ही झलक है। इसलिए इस का संधान और अध्ययन समग्र "सांस्कृतिक भारत" में योगदान है। बहुत से भाव, बिम्ब और प्रतीक समग्र "सांस्कृतिक भारत" में समान हैं।

2. "सांस्कृतिक हिमाचल" के चैत्य की गहराइयों में शिव और शक्ति हैं। अनादि सत्ता का विभेदन विरोधी तथापि सहयोगी प्रतिपक्षी युग्मों में हुआ था और होता है। मानवीय कल्पना में ये प्रतिपक्षी युग्म बैकुण्ठ पिता और पृथ्वी माता; शिव और शक्ति; जेग्रस और हेरा; यंग और यिन आदि रूपों में उतरे हैं। भारतीय धर्म के हिन्दू ब्राह्मणी मत और बौद्ध मत में इन युग्मों की परिकल्पना का तार्किक विकास हुआ है। प्रत्यक्ष रूप से शृंगारात्मक दीखने वाली मूर्तियों का नितान्त प्रतीकात्मक महत्त्व है। वह अनादि विभेदन प्राणी जगत में प्रतिपक्षी पुलिंग-स्त्रीलिंग के रूप में प्रकट होता है। मूर्तियों में इस विभेदन और उस विलय को प्रतीकित करके अनादि निरपेक्ष सत्ता की ओर संकेत है, शैव और बौद्ध कला का यही अर्थ है। प्राचीन भारतीय कला शत प्रतिशत प्रतीकात्मक है, उसे सामाजिक दर्पण समझना भूल है।

3. महायोगी भगवान शिव संसार की चिंताओं से अलग थलग हिमाचल की ऊंची चोटी "कैलाश" पर बैठते हैं। कैलाश का भी एक प्रतीकात्मक अर्थ है। यह हृदय का पर्वत है, वहां जीवन की ज्योति अपने पूरे उत्ताप और उत्साह के साथ निवास करती है। वहां समय की धड़कन भी निरन्तर चलती है, सर्जन की ऊष्मा और रचना की ऊर्जा भी इसी हृदय पर्वत पर रहती है, ब्रह्मण्ड का वह आदि प्रहर्ष अपने लघुरूप में हर्षोन्माद बन कर इसी हृदय पर्वत के एक कोण में दुबके बैठा रहता है। यह मिथक पर्वत उस मिथक सागर से भिन्न है, जिस में सभी सम्भावनाएं थीं परन्तु प्रसुप्त और निष्क्रिय।

शिव-शक्ति-कैलाश हमारे चैत्य के आद्यक हैं। हमारा देव मण्डल इसी आद्यक का विस्तार है। सोमसी के लिए हिमाचल की देवगाथा के सम्बन्ध में सार्थक सामग्री का सादर आमंत्रण है।

—हरिचन्द पराशर

Scanned with CamScanner

सोमसी जुलाई, 1978

क्रमांक	विषय	लेखक	पृष्ठ संख्या
1.	हिमाचल में वृक्ष पूजा	प्रो0 हरि राम जसटा	1
2.	हिमाचली में दूध-छाछ और हाण्डोपारू	श्रीमती श्यामा कुमारी	6
3.	पहाड़ी लोक काव्य 'गुग्गा चौहान' का सांस्कृतिक तथा सामाजिक विश्लेषण ।	श्री योगेन्द्र सिंह तूर	18
4.	प्राचीन जनपद 'कुलिन्द' और वर्तमान हिमाचल प्रदेश, उसका कुछ क्षेत्र ।	प्रो0 चतुर सिंह	24
5.	महासूई लोक गाथा—माठी अ टअंकू—	श्री रामानन्द शास्त्री	33
6.	लाहुल की बोलियां	श्री बलराम	46
7.	मढोड़ देवता	श्री बद्री सिंह भाटिया	63
8.	बौद्ध तीर्थ रिवालसर	श्री तोबदन	70
9.	कुल्लू की भेखली देवी	श्री चन्द्रशेखर बेबस	73
10.	महाराजा संसार चन्द	श्री प्रेम पखरोलवी	78
11.	गादी पहाड़ी भाषा में अनेकार्थक शब्दों का विवेचनात्मक अध्ययन ।	श्री अमर सिंह रणपतिया	83
12.	बोइन्द्रा देवता की देवगाथा	श्री योगेश गम्भीर	95
13.	'सोमसी' के बारह अंकों में क्षेत्रीय अध्ययन	कु0 सरोज शर्मा	106

प्रकाशित रचनाओं को पूर्ण अथवा आंशिक रूप में उद्धृत करने के लिए सचिव, हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी, परीमहल, शिमला-9, की अनुमति अनिवार्य है ।

वार्षिक चन्दा—12 रु0

एक प्रति—3 रु0

Scanned with CamScanner

हिमाचल में वृक्ष पूजा

—प्रो० हरि राम जसटा

सृष्टिकाल से ही मानव का वृक्षों से गहरा सम्बन्ध रहा है। प्रागैतिहासिक काल के उस मानव की कल्पना कीजिए जिसका अपना न कोई घर था और वह जंगलों में कन्दमूल और फल खाकर जीवन यापन करता था। ज्यों ज्यों सभ्यता और संस्कृति का विकास हुआ, वृक्षों के महत्त्व को भी समझा जाने लगा।

भारतीय संस्कृति की महानतम और श्रेष्ठतम विभूतियों, ने वृक्षों की घनी और शीतल छाया से घिरे आश्रमों में जन्म लिया। वेद पुराण दर्शन शास्त्र एवं उपनिषदों की रचना इन्हीं पवित्र वृक्षों के दामन में हुई। उनमें से एक ऋषि गा उठे थे: "हमारी प्रार्थना देवता, जल, पौधे और वन वृक्ष स्वीकार करें। सैमुल वृक्ष का आर्शीवाद सदैव हमारी रक्षा करे" भारतीय संस्कृति की आभा उस विद्यास्थली नैमिष अरण्य की घनी छाया से विश्व में फैली, जहां तपस्वी शौंणक के कण्ठ से महाभारत की अमर करूणामयी वाणी विश्व में बिखरी थी। भारतीय संस्कृति के पवित्र धाम तपोवन से उठते ऋषि मुनियों के वेद मन्त्र के उद्घोषों से इस संस्कृति को सप्राण और सशक्त बनाया। हमारी जातीय संस्कृति, नंदनवन, अशोकवन और डण्डक अरण्य के वृक्षों की लता बेलों से लिपटी हुई है। जीवन की मधुरतम स्मृतियां उस वृदांवन से जुड़ी हैं, जहां श्री कृष्ण का बाल्यकाल व्यतीत हुआ और जिन्होंने कुरुक्षेत्र के मैदान में अर्जुन को उपदेश देते हुए कहा था—"मैं वृक्षों में अश्वथा वृक्ष हूं। यही नहीं, अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त में एक जगह कहा गया है:—

वस्थावक्षा वानस्वत्वा
अथा स्तिष्ठन्ति विश्वहा
पृथ्वी विश्वासघात घृतामच्छवदामति

इस का हिन्दी रूपान्तर यूं होगा।

अचल खड़े सब ओर जहां पर
विविध वनस्पति, वृक्ष महान्
हम उस विश्व भरा धरा के
करते गुण गौरव का गान

जिस दिन इस पृथ्वी पर मानव ने जन्म लिया होगा उसी दिन से वृक्षों और वनों से मनुष्य का अभिन्न सम्बन्ध स्थापित हो गया। न केवल उसने अपनी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इनका आश्रय लिया वरन् इनसे आध्यात्मिक प्रेरणा भी प्राप्त की। प्राचीनकाल से स्वच्छ वायु से पूरित वन और पर्वत ऋषि मुनियों के तपस्या स्थल बने रहे। वहां आश्रमों में ज्ञान विज्ञान के अनुसंधान के साथ शिष्यों को शिक्षा दीक्षा भी मिलती रही। हिन्दुओं में अनेक नर नारियों ने तो वृक्षों का देवताओं से सीधा सर्म्पक मानकर उनकी पूजा प्रार्थना भी प्रारम्भ कर दी। उदाहरणार्थ तुलसी विष्णु को प्रिय है तो बिल्व शिव को, महात्मा बुद्ध ने तो एक वृक्ष के नीचे ही ध्यानावस्थित होकर ज्ञान प्रकाश प्राप्त किया था। वही वृक्ष बोधि वृक्ष के नाम से विश्व विख्यात हुआ। उसकी एक शाखा ने श्री लंका में पहुंच कर वहां की बौद्ध जनता को आनन्दित किया।

Scanned with CamScanner

हिन्दुओं का विश्वास है कि वृक्षों में भी मानव की तरह चेतना शक्ति होती है और पूर्व जन्म के कर्मों के कारण वृक्ष का रूप धारण करते हैं। मनुस्मृति में लिखा है :–

तमसा बद्दू रूपेणवेष्टिताः कर्महेतुना।
अन्तः संज्ञा भवन्त्वेते सुख दुःख समन्विता।

यद्यपि सभ्यता और इतिहास बड़ी तेजी से आगे बढ़ रहे हैं, परन्तु मानवजाति अपनी परम्पराओं, विश्वासों मिथिकों, जादुई प्रभावों से कभी अलग नहीं रह सकी।

पुराण कथाओं में स्मृद्धि के प्रतीक "कल्पवृक्ष" का बार बार जिक्र आता है, देवदास जिसे भगवान शिव और मां पार्वती ने पुत्र की तरह पाला पोसा सती सावित्री का आर्शीवाद पाने के लिए वट वृक्ष की पूजा भारतीय स्त्रियों ने युगों युगों से की है। अक्षय वट से छलांग लगा कर पापी लोग मुक्ति पाने की कामना करते थे।

विभिन्न प्रकार के वृक्षों तथा वनस्पतियों से मानव न केवल ईंधन, लकड़ी, तरह तरह के सुस्वादु फल, साग सब्जी, जड़ी बूटियां तथा कतिपय उद्योगों के लिए बहुमूल्य पदार्थ प्राप्त करता है। वरन् वायु की शुद्धता के लिए भी वह इन्हीं पर निर्भर है। नगरों में स्वास्थ्य रक्षा की दृष्टि के अतिरिक्त उनके सौन्दर्य सुषमा की वृद्धि की दृष्टि से भी सुयोजित रूप में वृक्ष पंक्तियों का होना आवश्यक है।

भारतीय इतिहास इस बात का साक्षी है कि अनेक राजाओं ने मार्गों पर छायादार वृक्ष लगाने के साथ साथ जगह-जगह फलोद्यान भी लगवाये थे। अन्य देशों में भी वृक्षों और वनों के महत्त्व को स्वीकार किया गया है।

हिमाचल प्रदेश प्रमुखतः वनों और पहाड़ों का प्रदेश है। एक समय था जब इस प्रदेश का तीन चौथाई भाग वृक्षों से ही भरा पड़ा था। जनसंख्या और वैज्ञानिक प्रसार के साथ साथ वृक्षों की संख्या भी घटती गई।

हिमाचल प्रदेश में देवी देवताओं को समर्पित ऐसे असंख्य वृक्ष मिल जायेंगें, जो सैकड़ों वर्ष पुराने हैं, और जिनके आगे से गुजरने वाले श्रद्धालु यात्री नतमस्तक होकर गुजरते हैं। इस श्रद्धा का मूल कारण इन वृक्षों से जुड़े अनेक मिथक हैं, जो उनके मन और प्राणों पर छाये रहते हैं। ऊंचे क्षेत्र में गांव गांव में पीपल, नीम और बड़ के वृक्ष मिल जाते हैं। जिनके नीचे पत्थरों का कच्चा या पक्का चबूतरा अवश्य नज़र आ जाता है। वे वृक्ष बावड़ियों के किनारे, मंदिरों के समीप या खुली जगह पर अपनी शीतल छाया से सब मनुष्यों को सन्तुष्ट करते हैं। कहीं इनकी टहनियों के नीचे चबूतरे पर पत्थर की कुछ मूर्तियां पड़ी रहती है। वृक्षों में विशेष कर देवदार, चील या कैलू किसी न किसी देवी देवता, प्रेतात्मा, परी, वन देवता और वनदेवी को समर्पित होते हैं। जिसका पता इस पर बन्धी प्रायः लाल, सफेद और अन्य रंगों की ध्वजाओं से लग जाता है। मंदिरों के ईर्द गिर्द फैले वृक्षों को कोई नहीं काट सकता। वे मंदिर की तरह मंदिर की संगत्ति से पवित्रता ग्रहण कर लेते हैं। नाग देवता और देवी के मंद्रिर प्रायः देवदार के झुरमुटों में बने हैं। इसलिए देवदारू वृक्ष पूजा के योग्य माना जाता है। इस प्रकार वृक्ष प्रतीक पूजा को मोटे तौर पर तीन रूपों में बांटा जा सकता है। पहले वे वृक्ष जिनमें किसी देवी देवताओं का अवतार माना जाता है। दूसरे वे पवित्र वृक्ष हैं जिनकी छाया में समय समय पर व्रत और बलिदान किए जाते हैं। तीसरे ऐसे वृक्ष होते हैं जिन्हें लगाकर लगाने वाला न केवल इस जन्म में भाग्य और स्मृद्धि से भरपूर होगा, अपितु उसे अगले जन्म में भी मुक्ति मिलेगी।

इन वृक्षों में भी परस्पर सामाजिक श्रेष्ठता या अग्रगामिता रहती है। जैसे वृक्षों में पीपल को ब्राह्मण, सिरस अन्य वृक्षों में शिरोमणि समझा जाता है। कांगड़ा, चम्बा और हिमाचल प्रदेश के अन्य क्षेत्रों में जिनकी ऊंचाई

सोमसी

3,000 फुट से नीचे है, पीपल की ही पूजा होती है। इन क्षेत्रों में स्त्रियां पीपल के नीचे नरसिंह वीर की पूजा करती हैं। वर्ष में एक बार वे नई फसल के आने पर अनाज के दाने बबरू पका कर, रोट, धूप, टीका, दूध, जल और गुड़ लेकर पीपल के नीचे चढ़ाती हैं। कई जगह पर जब किसी की मनचाही इच्छा पूरी होती है तो इसे जातर भी देते हैं जिसमें बकरे की बलि भी देते हैं और रात भर भजन और गीत चलते हैं। बकरे की बलि का रिवाज अब धीरे धीरे समाप्त हो रहा है, और उसके बजाए प्रसाद बनाया जाता है।

कृष्ण पक्ष को कई विधवाएं भी प्रतिदिन सुबह साफ लोटे में चावल और फूल डालकर, बावड़ी या नलके का ताजा पानी और दूध लेकर पीपल के नीचे प्यास बुझाती हैं।

स्त्रियां पीपल वृक्ष को पुत्र दाता भी समझती हैं। ऐसी स्त्रियों सांय काल ढलते ही मिट्टी का दीपक जलाकर पीपल को पानी डालती हैं। उनका यह विश्वास है कि इस तरह से यह पानी उनके पति की आत्मा की प्यास बुझाता है।

इसी प्रकार विवाह, हवन, पूजापाठ में पीपल के पत्ते व लकड़ियां शुभ समझी जाती हैं। । विवाह के अवसर पर पीपल और आम के पत्तों की एक मुंज माला भी वर या वधू को उनके द्वारा बनाकर तेल साद के समय ब्राह्मण से फूल अस्तव पानी छिड़कवा कर बरामदे के ऊपर स्लेटों के साथ लटका देते हैं।

पीपल वृक्ष के साथ अनेक पौराणिक कथायें जुड़ी हैं । कहते हैं कि एक बार राजा दक्ष देवताओं की सभा में बैठे थे कि अचानक बकासुर राक्षस ने आक्रमण कर दिया। उसके आक्रमण से बचाओ के लिए देवताओं ने पक्षियों और वृक्षों का रूप धारण कर लिया। इन्द्रदेव मोर बन गये, शिव जी वट वृक्ष बन गये, विष्णु पीपल बन गये। बकासुर किसी पर आक्रमण न कर सका। इसलिए पीपल की पूजा विष्णु रूप में की जाती है। और वट वृक्ष की पूजा शिव जी के साथ संलग्न होने के कारण की जाती है।

पीपल से सम्बन्धित सृष्टि प्रलय कथा भी है, किस तरह मार्कण्ड ऋषि को भगवान पीपल के पत्ते के ऊपर बालक के रूप में तैरते नज़र आये थे। जब भी संसार में प्रलय आती तब भगवान विष्णु पीपल के पत्ते के ऊपर अवतार लेकर फिर से इस सृष्टि की रचना करते हैं। शनिवार को पीपल की पूजा प्रायः नहीं की जाती।

इसी प्रकार तुलसी के विषय में भी अनेक पौराणिक कथायें प्रचलित हैं। ब्रह्म बबर्त पुराण में लिखा है कि पहले तुलसी गोलोक में श्री कृष्ण की प्रिय गोपी थी। एक दिन उसे कृष्ण के साथ खेलते देखकर, ईर्ष्या से राधा उठी और उसे फिर धरती पर जन्म लेने का शाप दिया। इस पर श्री कृष्ण के चरणों पर गिर कर वह गिड़गिड़ाई तब श्री कृष्ण ने आश्वासन देते हुए कहा—प्रिया चिन्ता न करो। वहां जन्म लेकर तुम्हें तप करना होगा और तुम मेरे अंश में मिल जाओगी।

उसी गोपी ने महाराज धर्म ध्वज की महारानी माधवी की कोख से कार्तिक पूर्णिमा के दिन जन्म लिया। उसके असाधारण सौन्दर्य को देख कर लोगों ने उसका नाम तुलसी रखा क्योंकि तुलसी का शब्दार्थ है जिसकी तुलना न हो। बड़ी होकर तुलसी वनों में तपस्या करने चली गई।

पद्मपुराण में एक कथा है, कि एक बार भगवान शिव और पार्वती कैलाश पर्वत के एकाकी भाग में प्रेम विहार कर रहे थे। इस पर सभी देवताओं ने अग्नि देव को आज्ञा दी, कि वह ब्रह्मा का रूप धारण कर वहां जाए। यह देखकर, कि अग्निदेव ने उनकी गोपनीयता में दखल दिया है, देवी पार्वती बड़ी क्षुब्ध हुई और उन सभी देवताओं को यह शाप दिया, कि वे सभी वृक्ष के रूप में जन्म लें। इसी के फलस्वरूप ब्रह्मा पालस वृक्ष, विष्णु, अश्वथा वृक्ष और रूद्र वट वृक्ष के रूप में पैदा हुए। इसी पुराण में एक और कथा है, कि देव दानवों के समुद्र मंथन के समय लक्ष्मी से पहले, उनकी बड़ी बहन ज्योत्सना या लक्ष्मी प्रकट हुईं। जब देवताओं ने लक्ष्मी को विष्णु को भेंट करने का प्रयत्न किया तब लक्ष्मी ने कहा कि छोटी बहन का विवाह तब तक नहीं हो सकता जब तक बड़ी बहन का विवाह न हो जाए। इसलिए विष्णु ने ज्योत्सना का विवाह दुस्साह से कर दिया। लेकिन उसकी बुरी प्रकृति के कारण उसे अश्वथा वृक्ष के समीप अकेला छोड़ दिया गया। निस्सहाय लक्ष्मी एकाकीपन में जोर जोर से चिल्लाने लगी, उसका रोदन सुन उसकी छोटी बहन लक्ष्मी ने विष्णु से प्रार्थना की, वह उसकी बड़ी बहन की सहायता करें। विष्णु ने कहा, कि अश्वथा वृक्ष का जन्म उनसे हुआ है और उसे विश्वस्त किया, कि उस वृक्ष की पूजा शनिवार को छोड़कर सभी दिन करनी होगी। शनिवार के दिन वृक्ष के पास आएगी और उसके भक्त उसकी पूजा करेंगे। जो लोग लक्ष्मी की पीपल वृक्ष में पूजा करेंगें उन्हें रमृद्धि, प्रसन्नता और औलाद मिले।

एक अन्य पौराणिक कथा के अनुसार देव दानव द्वारा समुद्र मंथन द्वारा जब अमृत घट प्रकट हुआ तो उसमें से अमृत की कुछ बूंदें समुद्र तल पर गिर गई, जिससे तुलसी का जन्म हुआ। जो ब्रह्मा ने विष्णु को भेंट में दे दिया। इसलिए इसमें अनेक औषधी गुण भी हैं।

सभी हिन्दू घरों में कार्तिक के महीने में तुलसी का विवाह विष्णु के साथ रचाया जाता है और उनकी पूजा की जाती है।

हिमाचल प्रदेश में भी असंख्य घरों में पीपल और तुलसी की पूजा होती है। इसी प्रकार नीम वृक्ष की छाया फलदायनी भी समझी जाती है।

ऐसा कहते हैं, (नीम) कीकर वृक्ष में जादुई प्रभाव होता है। कई लोग रूई के धागे को लपेट कर जिस व्यक्ति को बुखार हो, उसे सात बार नीम के वृक्ष से लिपटाते हैं। इससे नीम वृक्ष प्रसन्न हो जाता है और बुखार निकल जाता है। ऐसी गुच्छियां नीम वृक्ष के गिर्द प्रायः लिपटी मिलती हैं।

अनेक उच्च वृक्षों को इसलिए पूज्य समझा जाता है, क्योंकि उनमें कोई पवित्र या भयानक आत्मा निवास करती है। शिमला और सिरमौर के जंगलों में कहते हैं: वणशीरा भूत रहता है, जो वनों का राजा समझा जाता है। अनेक लोक कथाओं और लोकगीतों में नींबू, अंजीर, कैंथ, सैमुल वृक्षों का जिक्र प्रायः आता है। वनशीरा रात के समय जंगल से गुजरने वाले लोगों को कई रूप बदल कर डराता है। उसका प्रभाव हटाने के लिए वृक्ष पूजा के साथ बकरे की बलि भी दी जाती है।

वृक्ष पूजा से जुड़े अनेक स्थानीय मिथिक भी हैं। शिमला के समीप सीपुर देवता का मंदिर है, जहां प्रति वर्ष मेला लगता है। कहते हैं किसी समय सीपुर देवता ने जब दूसरे देवता के क्षेत्र से देवदार वृक्ष लाने की कोशिश की तो दूसरा देवता उसके पीछे भागा। इस दौड़ भाग में सीपुर देवता गिर पड़ा और वृक्ष उसके हाथ से उलटा गिरा और कहत हैं, अब वह वृक्ष उसी तरह उल्टा उग रहा है और स्थानीय लोग उसे पूज्य समझते हैं।

इसी प्रकार कोटखाई के देवता बैन्द्रा के बारे में कथा है कि जब वह पहले इस क्षेत्र में आए तो अपनी टोपी में केले के बीज लाए, जो उन्होनें उस जगह बिखेर दिये जहां वह तपस्या करते थे। कुछ वर्षों में वहां जंगल उग आया। एक दिन वह एक वृक्ष की छाया में लेटे थे कि एक हरिजन ग्वालन लड़की ने उन्हें पतली

सोमसी

Scanned with CamScanner

डाली से छू कर पूछा—ए अजनबी पुरुष, तुम जीवित हो की मृत, जो सुनते नहीं। इस पर क्रोधित होकर देवता बैन्द्रा उठे और उसे शिला बना दिया। वह शिला आज तक उस वृक्ष के सहारे रखी हुई है और हर वर्ष एक काली बकरी की बलि दे कर उस वृक्ष और शिला की पूजा की जाती है। जितने क्षेत्र में देवता ने बीज बिखेरे थे उसे अब तक देवता का कलाल कहते हैं और उस जंगल में आज से 50 वर्ष पहले तक कोई वृक्ष काटने से लोग देवता के प्रकोप से डरते थे।

कहते हैं जिला शिमला के समीप ठियोग के भारना गांव में पांच ब्राह्मण भाई रहते थे। इनमें सब से बड़ा भाई कलू साधू बन गया था। एक बार कहते हैं भारना गांव में एक साधू आया और गांव के निकट केलू वृक्ष के नीचे अपना आसन लगाया। उस नए साधू ने कुछ खाना बनाया और कलू बाबा को भी कहा कि वह भी उसके साथ खाए। उसने कलू बाबा को चार रोटियां दीं। उसमें से उसने दो खा ली दो जेब में डाल दी। साधू के कहने पर कलू रात भर उस वृक्ष के नीचे ठहरा। आधी रात के समय कलू बाबा क्या देखता है, कि साधू के सामने गलीचे बिछ रहे हैं मशालें जल रही हैं और राजा इन्द्र की परियां आकर साधू के आगे नाच रही हैं। कलू बाबा ने भी यह सब देखा, पर सुबह होने से पहले न वह साधू था, न कुछ और। यह लम्बी कहानी है, कि किस प्रकार से कलू बाबा तब पागल हुआ और मर कर कलुवा नाग बन गया। उसकी कलुवा नाग के रूप में जगह जगह पूजा होने लगी और मंदिर बनाए गए। परन्तु उस वृक्ष को आज तक पवित्र समझा जाता है जहां यह घटना हुई।

इसी तरह ज्वालामुखी के समीप बड़ोह महादेव का मंदिर है। जिसके बारे में कहा जाता है, कि बड़ के नीचे एक बार पाषाण प्रतिमा कालीनाथ प्रकट हुए। बड़ के नीचे प्रकट होने के कारण उन्हें बाबा बड़ोह भी कहा जाता है। उस वृक्ष की भी आज तक पूजा होती है।

इसी तरह नाहन के स्थान पर सैंकड़ों वर्ष पूर्व एक घना जंगल था जहां वृक्ष के नीचे महात्मा बनवारी दास घोर तपस्या करते थे और शेरों से घिरे रहते थे। वृक्षों की छाया न केवल पवित्र समझी जाती है, अपितु हमें तेज धूप, आंधी, तूफान से भी बचाती है।

हिमाचल प्रदेश के प्रायः सभी स्थानीय देवी देवता और विशेष कर नाग और शक्ति के अनेक मंदिरों के साथ वृक्ष मिथक जुड़े हैं, जिनके अनुसार वे सभी किसी वृक्ष के समीप या वन में प्रकट हुए और इन मिथकों के प्रमाण हैं, इनको समर्पित अनेक वृक्ष जिन पर आज भी किसी मनौती के लिए श्रद्धालु लोग ध्वजाएं बांध देते हैं और विशेष अवसरों पर इन्हें पूजते भी हैं। इन वृक्षों के समीप न ही कोई अपवित्रता सहन की जा सकती है और न ही इनकी कोई टहनी या पत्र व्यक्तिगत उपयोग में लाया जा सकता है।

ऐसे लगता है जैसे आज हम अपनी प्राचीनतम वण्य संस्कृति की बृहद छाया की जीवन दायनी शक्ति को भूला बैठे हैं। भारतीय नारी कालीदास द्वारा अमर की गई शंकुतला की उस भावना को भूल गई है जो नित्य वृक्षों को जल देने से पहले स्वयं कुछ नहीं खाती थी। उसने वृक्षों में लगे फूलों को कभी अपनी सजावट के लिए इस डर से नहीं तोड़ा कि इससे वृक्षों को कष्ट होगा। हम सभी भारतीय वन संस्कृति के उत्तराधिकारी हैं जो वृक्षों की घनी और शीतल छाया में जन्मी। इन पवित्र वृक्षों के पत्तों पर गिरते ओस कणों ने इस संस्कृति का पालन पोषण किया हमारे पूर्वज वृक्षों की पूजा करते थे आज हमें भी उस परम्परा महान वण्य संस्कृति को जीवत करना होगा और व्यवहार से उसकी सुरक्षा द्वारा पूजा करनी होगी, जो हमारी समृद्धि के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

कुमार भवन,
संजोली शिमला-6.

लोक शब्द और लोक विज्ञान--

हिमाचली में दूध छाश और हाण्डोपारू

--श्याम कुमारी

दूध शब्द का व्यवहार प्रायः सभी भारतीय भाषाओं में समान है । कहीं ताल और लय का अन्तर है। जैसे पंजाबी में दुद्ध, बांगला और उड़िया में दुध, काशमीरी में दोद, सिन्धी में डुधू या खीरू का प्रयोग मिलता है। अन्तर है असमिया में जैसे गाखीर । तामिल, तेलगु और मलयालम में पालु और कन्नड़ में हालु कहा जाता है। हिमाचली में पंजाबी के समीपवर्ती भाग में दुध या दुद्ध और हिन्दी के समीपवर्ती भाग में दूध का प्रयोग मिलता है । किन्नौरी में खेरङ (क्षीर) तथा पेल का व्यवहार है । लाहुल की गारी बोली में पेल्की शब्द का प्रयोग है ।

अन्न के कच्चे दानों से निकलने वाले दूध के रंग जैसे तरल पदार्थ को भी दूध कहा जाता है जैसे दुधिया दाने वाली मक्की की हरीबाल को गुल्लू या दोधली छल्ली कहते हैं । पौधों के अंगो से निकलने वाला दूध के रंग जैसा रस भी दूध कहा जाता है जैसे-गरने दा दुध, अक्के दा दुध, फोगड़े या धूड़े दा दुध, खरबूजे दा दुध आदि।

प्रस्तुत वर्णन में गाय, भैंस और बकरी के स्तन से निकलने वाले सफेद तरल पदार्थ का वर्णन है जिसका उपयोग यहां के जनजीवन में पाया जाता है । इसका रंग हलका पीला और सफेद होता है। सरस और स्वादु रूप में इसका आनन्द लिया जाता है । शाकाहारियों में सबसे अधिक सार पदार्थ दूध ही माना जाता है। इसमें शारीरिक तथा बौद्धिक शक्ति बढ़ाने वाले तत्त्व हैं । सन्तुलित आहार में इतने तत्त्व अन्य खाद्य पदार्थों में नहीं मिलते हैं जितने तत्त्व सन्तुलित मात्रा में दूध में पाये जाते हैं । बिटामिन ए. बी. सी. तथा डी. के अतिरिक्त लवणों में कैल्शियम तथा फास्फोरस का योग भी इसमें बताया जाता है। आयुर्वेद में बड़ा महत्व दर्शाया गया है ।

भिन्न भिन्न जातियों के प्राणियों के दूध में कुछ अन्तर होता है। इसमें विलक्षण गन्ध होती है । एक ही प्राणी में भिन्न भिन्न समयों में भी कुछ अन्तर हो जाता है ।

गौ का दूध सर्वोत्तम माना गया है । मस्तिष्क के लिए गौ और बकरी के दूध के गुण गाये जाते हैं । भैंस का दूध शारीरिक शक्ति के लिए उत्तम कहा गया है । पवित्रता में गौ के दूध का बड़ा महत्व है । जन-जीवन में ऐसा कोई संस्कार नहीं जो गौ के दूध के बिना सम्पन्न होता हो । नवजात शिशु से लेकर वृद्ध के पालन पोषण के लिए इसका महत्त्व तो है ही परन्तु संस्कारों, व्रत, उद्यापन, कथा वार्ता, पूजा आदि में भी दूध का प्रमुख स्थान है । शृंगार प्रसाधन कला दूध में दूध तथा इसके पदार्थों का उपयोग रूप निखारने में किया जाता है । घर में उत्सव में तथा मन्दिर में चरणामृत का पान कराया जाता है। चरणामृत जिसे चरनामत कहा जाता है उसमें जल, शक्कर तुलसीदल के साथ दूध का प्रयोग होता है । जीवन में इसका महत्त्व तो समय समय पर है ही परन्तु मरणोपरान्त भी दूध की आवश्यकता बनी रहती है । अन्त्येष्टि तथा श्राद्ध में पिण्ड-स्नान दूध से कराया जाता है । आंगन घर बाहर पवित्र करने के लिये तथा तन को पवित्र

करने के लिए पंचगव्य का प्रयोग मन्त्रविधि से किया जाता है पंचगव्य में दूध तथा इसके पदार्थ दही तथा घी के अतिरिक्त गौमूत्र और गोबर को भी पवित्र माना गया है जैसा कि वर्णन मिलता है:—

क्षीरं दधि तथा चाज्यं मूत्रं गोमयमेव च ।

सूतक के प्रंसग में शरीर शुद्धि के लिये परिवार के सभी सदस्यों को मूत्र का पान कराया जाता है जिसका वर्णन इस प्रकार है:—

गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सीर्पः कुशोदकम् ।
निसृष्टं पंच गव्येषु पवित्रं कायशोधकम् ।।

जीवन में सदा यही प्रार्थना की जाती है कि दूध का कभी अभाव न होने पाए । जन्म दिवस पर गीत गाया जाता है

जुग जुग जीए जी मेरा मारकण्डा
दुध पीए जी मेरा मारकण्डा ।

जिस घर में दूध न हो वह घर सुना सुना लगता है । उस घर में दूध के न होने से दैवी प्रकोप समझा जाता है । ऐसी संकट कालीन स्थिति के लिए घी और खोया रखा जाता है । अब तरल दूध को सुखाकर दुग्ध चूर्ण बनाया जाता है जिसका उपयोग दूध के अभाव ग्रस्त क्षेत्र में किया जाता है । बच्चों तथा बीमारों को घोल कर पान कराया जाता है तथा समय पर चाय में घोला जाता है ।

आजकल औद्योगिक क्षेत्र में दुग्ध चूर्ण दुग्धशर्करा आदि बनने से दूध का महत्त्व और भी बढ़ गया है। दुर्गम स्थलों में, संकट में दूध किसी न किसी रूप में सुलभ है ।

घर में दूध तथा इसके पदार्थों को बड़ी सावधानी से रखा जाता है । दादी अम्मा का पूरा नियन्त्रण रहता है । दादी अम्मा न हो तो जो भी घर में वयोवृद्धा हो-ताई, अम्मा, चाची, भाभी उसका नियन्त्रण होता है । जिससे सारा दिन हर समय आवश्यकतानुसार दूध मिलता रहे तथा कनिष्ठ वर्ग आपाधापी में अराजकता न फैला दे । इनकी अनुपस्थिति में बेटी का सहयोग महत्वपूर्ण है । दूहिता होने से वह भारतीय परम्परा लिये हुए है । वह दूध तथा इसके पदार्थों के संरक्षण और वितरण में दादी अम्मा का हाथ बंटाती है । दादी अम्मा की अनुपस्थिति में लेखा जोखा पूरा करती है ।

दूध के विशे ण एवं प्रकार ये है—

सजरा—ताजा निकला हुआ अधिक पसन्द किया जाता है ।

बाही—देर से रखा दूध शंका से देखा जाता है । इससे उदर विकार का सन्देह रहता है ।

बासो—महासू में बासी दूध के लिये प्रयोग है ।

Scanned with CamScanner

कच्चा—जिसे उबाला न गया हो । व्रत आदि में जब अग्नि में पकाई कोई चीज नहीं खाई जाती है यथा हरियाली (हरितालिका) के व्रत में कच्चा दूध पीने से व्रत भङ्ग नहीं माना जाता है।

नपाणूआं—जिस दूध में पानी का लेश भी न हो।

परलाणा—जिस दूध में पानी मिलाया हो।

पतला— लैरी (सद्यः प्रसूता) गौ का दूध पतला होता है।

गाढ़ा— तोक्कड या बाक्खड़ गौ या भैंस का दूध कम होता है।

प्रायः छः या सात मास बाद दूध थोड़ा निकलता है और यह गाढ़ा होने से अधिक स्वादु होता है।

ब्याल-बुआलेया—उबला हुआ दूध जो अधिक देर तक रह सकता है।

फटेआ-फुट्टों— जिस दूध में विकार आ गया हो।

तत्ता— गर्म दूध जो पिया न जा सके।

कोसुणा—कोरसा-सील गर्म-जो दूध मन्दोष्ण हो।

धारन— धारोस्ण दूध-जैसा ही निकाला और पिया यह बच्चे और दुर्बल के लिये स्वास्थ्य प्रद बताया जाता है।

दुधार— दुधारू-दोद्धण-गाय या भैंस जो अधिक दूध देती हो।

तोक्कड—बाखड-छः सात महीने बीतने पर जिसका दूध कम हो गया हो।

सुक्कड़—सण्ड-जिसने दूध देना बन्द कर दिया हो या कठिनता से बहुत कम दूध दे।

डंग—दूध देने का समय क्रम। आरम्भ में तीन डंग (बार) गौ या भैंस दूध देती है।

झग्ग—दूध का झाग जिसका प्रयोग औषधि में भी होता है।

जंछूड़— झाग जो बछड़े के मुंह से निकलता है।

गुलछ—छुआल-बच्चे के मुंह से जो झाग या वमन होता है।

मलयाई—पलाई-मलाई की रक्षा की जाती है । प्रायः दूध बांटते समय फूंक मार कर मलाई पीछे हटा ली जाती है जिससे दही लगाकर अधिक घी बन सके । महासू में इसे मलाई और मण्डियाली में इसे पडयाली या प्याली कहते हैं। सिरमौरी में इसे जावेण कहते हैं।

रघोड़ी—घरोड़ी-बर्तन के नीचे लगा दूध जिसे खुरच कर निकाला जाता है। महासू में इसे चिपाली कहते हैं।

खोरटू— खीरकणू-दूद्धू भत्त्—छटे महीने में या इसके बाद अन्न प्राशन संस्कार में बच्चे को दूधभात दिया जाता है। गद्दी खीरणू का उत्सव विशेष मनाते हैं । बच्चे के आगे खीर, लेखनी पुस्तक, तराजू आभरण, कुदाल आदि रख देते हैं बच्चा जिस पर पहले हाथ डाले उसे बड़े होने पर तत्सम्बन्धी कर्म में चतुर होने का अनुमान लगाया जाता है । यदि खीर की ओर लपके तो पेट्टू और कुदाल की ओर लपके तो कृषक होने का अनुमान लगाया जाता है।

लुगडा-सुगड़ा—सुगडू-गूंत्र या पंचाप के समय मां को दूध भात दिया जाता है।

घ्रेड़ू-तन्घेडू—खीर के बर्तन में नीचे जो पापड़ी जम जाती है उसे स्वाद से खाया जाता है।

सफाणी-म्योआ—सौंफ, इलायची, मेवे आदि डालकर जो दूध घी में छोंका जाता है इसका अन्य प्रकार—

सुड़का— कमजोरी को दूर करने के लिये दिया जाता है।

मिट्ठा—केले के खण्ड, गरी, दाख, छुहारे आदि दूध में उबाल कर बनाया जाता है । इसके अतिरिक्त दूध में सेईआं (सेंवई) सागूदाणा, संगाड़ा, आदि डालकर बनाया जाता है।

खोआ— अग्नि में दूध की तरलता हटा कर बनाया जाता है। यदि पतला अंश हो तो रबड़ी कहलाता है। इसके पेड़े, बर्फी, कलाकन्द आदि पदार्थ मेवा और चीनी मिलाकर बनाए जाते हैं।

दोद्धी—गांव से नगर या दुकान में दूध बेचने वाला । प्रायः गुज्जर (गूजर) यह व्यापार करते हैं।

लुहाई—दूध तथा इससे सिद्ध पदार्थ बेचने वाला हलवाई।

Scanned with CamScanner

डोहरी-तौलटू—दूध मापने का पतला कटोरा जिसके ऊपर भाप से बचने के लिये लकड़ी लगी होती है। लिटर माप प्रणाली का प्रयोग होने से अब यह व्यवहार में नहीं है । घड़ा भी मापने के काम आता है।

बाट्टू—दूध पीने के लिये दुकान में छोटी बाटी।

कटोरू-कटोरटू—घर में दूध पीने का बर्तन या कटोरा। अब गिलास का व्यवहार चल पड़ा है।

टूट्टू— छोटी सी टोंटी वाला पीतल का बर्तन जिससे बच्चों को दूध पिलाया जाता है अब इसका स्थान बोतल, फीडर ने ले लिया है।

दूहणू— दूध निकालने का बर्तन।

मग्घी—मिट्टी का बर्तन जिसमें कच्चा दूध एक स्थान से दूसरे स्थान तक वितरण के लिये लाया जाता है। यह एक लिटर से चार लिटर तक के परिमाण का होता है।

पारू-कुज्जू—एक या आधे लिटर के परिमाण का मिट्टी का बर्तन।

दुधून्नू— खुले मुंह वाला मिट्टी का बर्तन जिसे गोहट्टू (उपलों) की धीमी आंच पर रखा जाता है। समय समय पर गर्म दूध वितरण के लिये निकाला जाता है। अन्य शब्द हैं कुप्पी ऊंटों की खाल जिसे बर्तन सम व्यवहार में लाया जाता है।

घ्यालू— मिट्टी के बर्तन का दूसरा नाम पालमपुर क्षेत्र में प्रचलित है।

काढनी—एतदर्थ ऊना क्षेत्र में प्रचलित है।

तौलटू— चौपाल क्षेत्र में प्रचलित है।

सिप्पी-सूतड़ी—लोहे या पीतल का खण्ड जो गोल आकार में होता है। इससे कच्चे आम, सब्जी आदि छीले जाते हैं। इसको दूध की रखोड़ी (खुरचन) निकालने में काम लाया जाता है। सुखी मलाई की जो पापड़ी बन जाती है उसके खुरचने के लिये अन्य साधनों के नाम हैं—

तैन्थू— जो रोटी तवे पर बदलने के काम भी आता है।

डाम्मन—चौपाल में कहा जाता है।

दऊआ— पुराने ताम्बे के सिक्के जिन से अभी भी कहीं कहीं खुरचन निकाली जाती है क्योंकि ताम्बा श्रेष्ठ धातु मानी जाती है।

दूध के विकार वाचक शब्द इस प्रकार हैं:—

जग्याण-जाग—दूध को जमाने के लिये तरल खट्टा पदार्थ या दही लेश मात्र जामन के रूप में घोला जाता है।

देंही-दंऊ—रात का जमाया दूध प्रातः दही के रूप में हो जाता है। किन्नौरी में इसे दहिङ कहते हैं। इसके प्रकार हैं:—

थेफड़-ढेल्ला—दही जिसमें पानी न हो और ढेले की तरह हो। स्वाद में दही के भाव इस भांति प्रकट किये जाते हैं।

मिट्ठा—ताजा दही कहलाता है।

खट्टा— देर का रखा दही खट्टा हो जाता है।

महाणी-टीट—जिस दही में जामन अधिक लग गया हो और जो खट्टे पदार्थ की तरह न खाया जा सके उसके लिये यह शब्द है।

— दही को त्याग करने के लिये घृणावाचक शब्द ये हैं:—

कसैल्ला—कसा हुआ दही जो साफ बर्तन में न हो इसके लिये कशैलो का प्रयोग भी शिमला के आस-पास मिलता है।

बासला-बासलो—जिसमें दुर्गन्ध आ रही हो। इसके लिये अन्य शब्द हैं:—

Scanned with CamScanner

भुत्थी—दही जो बर्तन में सूख जाता है जिसका रंग पीला और काला हो जाता है। सफेद तार की तरह निकलता है और दुर्गन्ध देता है।

ठिड्डी— दुर्गन्धपूर्ण दही जो बर्तन में सूख जाता है।

अण जम्मा—जो दही जम न सके। दूध खटास लिये पतला ही रहे। खाने में तो इसका प्रयोग नहीं होता है परन्तु सिर हाथ पैर आदि अंगों की मैल निकालने के लिये इसका प्रयोग किया जाता है।

दही दूध के खानपान की प्रतीक्षा में सब बन्धु बान्धव रहते हैं। गौ और भैंस के प्रसूता होने पर एक भांति का उत्सव ही मनाया जाता है। इसके आरम्भवाचक शब्द ये हैं:—

सून्हार— शीघ्र प्रसूता होने वाली गौ या भैंस जिसकी सेवा में परिवार के जन लगे रहते हैं। दिन रात प्रतीक्षा की घड़ियां बिताते हैं।

हैंसा— आरम्भ के दूध के लिये प्रयोग है। इसे एक दो दिन भूमि में दबा दिया जाता है। प्रायः साठ दिन तक इसे पीना पाप और स्वास्थ्य के लिये हानिकारक समझा जाता है।

कीहड़— दूध की पहली धारें एक दो दिन के बाद का दूध जिसे पशु को पिला दिया जाता है।

पिंजू— आरम्भ के दूध के लिये महासू में इस शब्द का प्रयोग है।

खीस— चार पांच दिन का दूध। उबाल कर इसे परखा जाता है उबालने पर यह फट जाता है।

बौहली—चार पांच दिन के बाद का दूध जो पीने योग्य नहीं होता है। पीने पर उदर विकार का संशय रहता है। इसे बन्धुओं में बांट दिया जाता है। चावल डालकर उबालने से इस दूध की खीर बनाई जाती है।

छेरड़ा— चार या पांच दिन के बाद दूध जिसे परिचितों में बांटा जाता है।

नोढ्ढी— आरम्भ में दस बारह दिन तक दूध इक्ट्ठा होता रहता है उसे मिट्टी के बर्तनों में जामन लगा कर भर दिया जाता है इससे बढ़िया दही जम जाता है।

अणसेहरना—गाय का दूध 22 दिन के उपरान्त और भैंस का दूध 12 दिन के उपरांत पूजा के लिये रखा जाता है।

जखलू मखलू—कुल देवता की पूजा की जाती है। उन पर दूध दही चढ़ाया जाता है।

सुक्खण—प्रार्थना से अभिलाषा पूरी होती है। गांव तथा गांव के आसपास अपने इष्ट देवता के दर्शन किये जाते हैं। उनके लिये मक्की के आटे की रोटी और दूध दही अर्पित किया जाता है। इन देवताओं में प्रमुख हैं:—

लखदाता, गुग्गा, ढोढा पीर, बाब्बा फक्तू, भीक्खा शाह, मौन्दूशाह, नागदेवता, पहाड़ीआ, बासीआ आलू तथा अन्य ग्राम देवता तथा कुल देवता। यह एक उत्सव विशेष माना जाता है।

छिंज— इस अवसर पर बच्चों को इकट्ठा किया जाता है। हरी भरी घास पर उनके मल्ल युद्ध का आयोजन किया जाता है। दूध नोढ्ढी रोट पैसे उनमें बांटे जाते हैं।

बंडेर— वण्डनों-बंटवारा, नोढ्ढी और दूध अपने गांव तथा दूसरे गांव में सम्बन्धियों और मित्रों में उपहार स्वरूप भेजा जाता है। इस समारोह के उपरांत दूध का उपयोग अपने घर में दादी अम्मा के निमन्त्रण में किया जाता है।

बौन्व— हेछ (मन की इच्छा) पूरी होने पर दूध दही देवता के अर्पण किया जाता है। महासू के देवता हैं—कालका देवी, शिरगुल देवता नागा आदि।

दही के बर्तन और बिलौने के उपकरण हैं:—

जमैणू— कुण्डी जिसमें दही जमाया जाता है।

मग्घी-कुज्जू-पारू—कूण्डू-ये मिट्टी के पात्र हैं जिसमें वही जमाया जाता है और वितरित किया जाता है।
छलैहड़ू-छलैहण-छनाहड़ू—ये मिट्टी के पात्र हैं जिनमें दो तीन दिन का दही बिलोने के लिये इकट्ठा किया जाता है।
छौलणा-बिलोना —इकट्ठे किये दही का चाटी में मन्थन किया जाता है।
आछलणा—मथना । यह प्रयोग महासू में प्रचलित है।

मन्थन के उपकरण हैं:—
मधाणी-मधहाणू—मथनी । यह लकड़ी की बनी हुई होती है।
फाशनी—मथनी के लिये प्रयोग महासू में है।
घुरड़ा— मथनी का चक्र कहलाता है ।
ककराड़ी—मथनी के चक्र के लिये महासू में प्रयोग है ।
जोत्रा-नेत्री-डोरी—मथने की रस्सी के लिये प्रयोग हैं ।
नेच्ची—मथने की डोरी के लिये महासू में प्रयोग है ।
बिलड़ा-मल्ली-दूध—दही के ढक्कन मिट्टी के बनाये होते हैं ।
बीड़ा— दूध के पात्र का मुंह बन्द करने के लिये टौरे के पत्तों का बनाया होता है ।
गेड़ा— घास या रस्सी से बना गोल आकार का बिन्ना जिस पर पात्र टिकाये जाते हैं।
छिक्कू-छिक्का—छीका छत्र में निलम्बित रस्सी की बनी झोली जिसमें दूध दही, घी का पात्र चूहा बिल्ली आदि से बचाने के लिये टांग दिया जाता है ।
कोठड़ू-दयूट—दूध तथा दूध के पदार्थ सुरक्षित रूप में एक छोटी सी कोठरी में रखे जाते हैं जिससे चूहा बिल्ली आदि इन का भोग न कर सके । अब अलमारी और जाली व्यवहार में आ गयी है
गही-ताक—छोटी अलमारी जो दीवार में बनी होती है ।
लकोला-घर की दीवार में बना खुला या बन्द झरोखा जिसमें कुछ देर के लिये दूध आदि ठण्डा होने के लिए रखा जाता है।
झारना-घर की दीवार में बना वातायन जिसमें कुछ देर के लिये दूध आदि ठण्डा होने के लिए रखा जाता है तथा दूध, दही, छाछ के छोटे बर्तन धोकर दुधून्नू, हण्डू, पारु, मग्घी धूप और वायु में सूखने के लिये रखे जाते हैं । शीतकाल मे जब सूर्य के दर्शन कभी कभार होते हैं तो ये छोटे बड़े बर्तन अटली या आंगन में गर्म पानी से धोकर पंक्तिबद्ध सुखाये जाते हैं जिससे इनकी बास (गन्ध) दूर हो जाए।
नौणी-निडणी—नवनीत जो दही बिलोने से निकलता है सिरमौरी में इसे पाण्टू कहते हैं । इसे कूण्डू या पारू में संगृहीत किया जाता है ।
घ्यो-घीऊ—घी, पांच सात दिन का संगृहीत माक्खन कढ़ाई में डाला जाता है ।
गीहू-गीऊह—घी के लिये जुब्बल में प्रयोग होता है ।
ताड़्ना-नौणी को गर्म करने की क्रिया कही जाती है ।
छाणटू-छानने का बांस का पात्र या खददर का टल्लू (टुकड़ा)
साफी-साफटू—पौणा—पणयाणू-झारना—छानने के अन्य उपकरण हैं जिनमें घी नतारा (छाना) जाता है ।
खिद्धड़-काढ—कढ़ाई में जो शेष रहे उसके लिये प्रयोग है
सैहड़ू-दंधेड़ू—घी की मैल के लिये महासू में प्रयोग है ।
महेड़-घी की मैल के लिये जुब्बल में प्रयोग है ।
खराघ्यो-बढ़िया घी जिसमें छाछ का अंश न हो ।
छाहीआला-घ्यो—जिसमें छाछ का अंश हो और कुछ दिन रखने से दुर्गन्ध देने वाला हो ।

फुड़का-फिटकड़ी—कणीयां—दही और छाछ के अंश जो घी मे तैरते हैं । ऐसा घी अग्नि में गर्म करने पर तड़ तड़ की ध्वनि पैदा करता है ।

छाह-छाछ—दही से नवनीत का जो शेष रह जाता है । प्रायः इसे नमक मिर्च डालकर पिया जाता है या मक्की की रोटी के साथ खाया जाता है उक्ति प्रचलित है:—

छलियां दी रोटी छाही दा कटोरा

राती—किन्नौरी में छाछ का अभिधान है ।

पुरती—अधिक पानी वाली लस्सी कही जाती है ।

कुकड़ोली—मक्की की रोटी और छाछ का कटोरा मिल जाए तो भोजन में आनन्द आ जाता है । छाछ के लिए अन्य प्रयोग इस प्रकार हैं:—

मट्ठा—मण्डी में प्रयुक्त है ।

चाश—शाश का प्रयोग जुब्बल में है । शाश का प्रयोग सिरमौरी में है ।

छाश—का प्रयोग रोहड़ और रामपुर में है ।

छिद्दो–खिद्धड–छाछ-निकलने पर बरतन में जो शेष रह जाता है । छाछ का पान किया जाता है तथा अनेक प्रकार के व्यञ्जन बनाए जाते हैं जिनमें प्रमुख हैं:—

खोहरु—रेहड़-रोहड़-छाछ को धीमी आंच पर रखा जाता है उसमें नमक हल्दी मिर्च घोला जाता है । यदि अधिक गर्म किया जाए और हिलाया न जाए तो छाछ के फटने का भय रहता है ।

कहड़ी—कहड़—गर्म तेल में छाछ को छौंक कर नमक मिर्च हल्दी डालकर बनाया जाता है। आलू, सेंबई या पकौड़ी बीच में डाली जाती है ।

पलवा—गरी, दाख, छुआरा आदि मेवे तेल में पकाकर और मोटी सेंबई डालकर दही में बनाया जाता है ।

मधरा—बड़े चने, गोभी, आलू, दही के साथ घी में पका कर बनाया जाता है ।

रैत्ता—रायता-कद्दू, घिया आलू, आदि व्यञ्जनो का दही में बनाया जाता है ।

आसरा—लूह के कांटो को साफकर खुले पानी में धोकर नमक मिर्च ओहरी (राई) डालकर दही में बनाया जाता है ।

पकोड़—चने या उड़द की दाल भिगोकर पीसकर और तेल में पका कर दही में भल्ले बनाये जाते है ।

झोल—छाछ में चावल उबाल कर नमक मिर्च मसाले डालकर बनाया जाता है ।

निमला झोल-छाछ में हल्दी, नमक, मिर्च, मसाले डालकर बनाया जाता है इसमें चावल का प्रयोग नहीं होता है ।

औटो—झोल की भान्ति पर कुछ नर्म प्रकार में महासू में बनाया जाता है । पेट दर्द के लिये उपचार माना जाता है ।

लिमड़ी—चावल चलाई के दाने छाछ में मिलाकर बनायी जाती है । इसका प्रयोग चौपाल में है । बाबर (बबरू) औधले के बीज के चूले इसके साथ बनने से स्वादु भोजन माना जाता है ।

हलू—बेसन, छाछ पकाकर मिर्च मसाले से बनाया जाता है । महासू में प्रिय व्यञ्जन है ।

दनालटू—दही में चावल मीठा मिलकर बनाया जाता है । महासू में मिष्टान्न के रूप में दिया जाता है ।

अम्बुआ—आम्ररस दही या छाछ तेल में मिर्च मसाले छौंक कर बनाया जाता है ।

त्रिफला—हरड़, बहेड़ा, आमला भिगोकर मसल कर और छान कर मिर्च मसाला डाल कर दही या छाछ में पकाया जाता है और बरसात में मक्की की रोटी के साथ खाया जाता है। पाचन शक्ति बढ़ाने में इसका गुण माना जाता है ।

सोमसी

Scanned with CamScanner

पनीर——छाछ को कपड़े में बांध कर टांग दिया जाता है । शनैः शनैः, पानी का अंश निकल जाता है। घनीभूत द्रव्य पनीर कहलाता है इसके अनेक व्यञ्जन और पकौड़े बनते हैं । प्रायः दही का प्रयोग शक्कर या चीनी डालकर किया जाता है और छाछ का प्रयोग नमक मिर्च डालकर किया जाता है ।

घ्यो पकुआन——घी में भान्ति भान्ति के पकवान बनाये जाते हैं । जैसे बाबर, बबरू, लुच्ची पूरी, मालपूड़ा, सेईयां, सीरा, सीरनी, कड़ाह, बेहड़ी, मटूरु, परांठा, पराखड़ी, थोड़ी, चीऊं, चिलड़ू आदि आहार विशेष में आते हैं । इनके अतिरिक्त अनेक मिठाइयां बनाई जाती है यथा——लड्डू, जलेबी, मेस्सू बाल्लूशाही, सगीत, मठड़ी आदि,

रोट—प्रायः आधा किल्लो मक्की के आटे का रोट घी शक्कर में बना कर सिद्ध बाबा अथवा कुल देवता को अर्पित कर प्रसाद रूप में सबको बांटा जाता है ।

सस्सड़रोट——थाली के आकार का गेंहू के आटे का रोट घी में पकाकर बादाम, गरी, दाख, छुहारे आदि मेवे लगाकर विवाह में सास के लिये दिया जाता है जिसे सब बन्धुओं में बांटा जाता है ।

चूरमा—मक्की की रोटी घी, दूध और शक्कर में चूर कर खाई जाती है, गद्दियों में यह भोजन विशेष रूप से प्रिय है । मक्की की रोटी को घी और शक्कर में तोड़ मरोड़ कर हाथ से लड्डू बनाए जाते हैं और परिवार में बांटे जाते हैं । बच्चे बड़े आनन्द से इन्हें खाते हैं ।

तुड़का—कड़छी में घी मिर्च धनिया जीरा आदि मसाले डालकर दधकते अंगारों पर रखा जाता है । जब यह बहुत गर्म हो जाए तो दाल में छौंक लगाया जाता है। छौंक की ध्वनि इतनी होती है कि पड़ोसियों को पता लग जाता है-कि अमुक घर में भोजन सिद्ध हो गया है । रोटी के लिए घी न हो परन्तु छौंक के लिए अवश्य सुरक्षित रखा जाता है अन्यथा दाल में यदि घी का छौंक न हो तो उसे प्रेत भोजन समझा जाता है ।

थिन्दी रसो—जिस रसोई में घी का प्रयोग अधिक हो हाथ मुंह सन जाएं उसे चिकनाई वाला भोजन कहते हैं । ऐसा भोजन देने वाला प्रशंसा का पात्र बनता है ।

दूध दोहने की क्रिया की अभिव्यक्ति इन शब्दों से हैः—

दूहणा—दुहना सामान्य अर्थ में है । विशेष भाव की अभिव्यक्ति के शब्द हैः——

खड़ोना—दूध देने के लिये तैय्यार हो जाना ।

परसूणा—बछड़े का मुंह जब थन पर पहुंचता है तो गाय या भैंस दूध उतारती है । उसे एक दम हटाकर थनों को पानी से धोकर और सहलाकर दूध निकालने की क्रिया के लिये यह प्रयोग है ।

धार मणना—धार तेजी से निकालना ।

फीश गाढनो—धार निकालने के लिये महासू में प्रयोग है ।

दुद्ध चढ़ाना—गौ का बछड़े के लिये दूध छुपाना।

दुद्ध उतारना—जब बछड़े की दूध पीने की बारी आती है तो एक दम गौ दूध उतार देती है ।

चूंधणा—बछड़े की दूध पीने की क्रिया ।

उडकणा—व्यारणा-मच्छरना-छरटाणा—दूध देने के समय जो गौ कूद जाती है उसका नियन्त्रण इन साधनों से किया जाता है:—

ढांगी—लज्ज-लीणा—गौ के पांव में रस्सी बांध दी जाती है जिससे वह टांग न मार सके और दूध आसानी से लिया जा सके ।

सुरेड़ा—बन्धन के लिये महासू में प्रयोग है ।

मन्धेरला—डोहलणा—दूध गिराने के लिये प्रयोग है ।

सड़पणा—भूमि पर दूध गिर जाए या थाली में फैल जाए तो उसे झुक कर पीने की क्रिया के लिये प्रयोग है।

Scanned with CamScanner

जो गौ दूध देने में आना कानी करती है उसके लिए इन शब्दों का व्यवहार है:—
कौड़, लताक्कड़, मारखुण्डी, चोरटी,

शकुन विचार

दध दुहने, रखने, ढांपने, लेने देने, पीने पिलाने में शुभ अशुभ का विचार किया जाता है। घर से बाहर जाते समय दूध नहीं पिया जाता है। ऐसा करने से कार्य सिद्धि नहीं मानी जाती है। इसके परिहार के लिए दो घूंट चाय पिला दी जाती है।

दही का प्राशन चीनी शक्कर डालकर करने से कार्य सिद्धि समझी जाती है।

नजराणा—यदि गौ भैंस दूध न दे, बच्चा दूध पीने में सिर हिलाए या पीने पर दूध उगल दे, दूध अकस्मात् ठोकर से गिर जाए या घबराहट में किसी के आने पर या ध्यान विचलित हो जाने पर हाथ में पकड़ा दूध का कटोरा या गिलास गिर जाए तो दादी अम्मा को एक दम भ्रम हो जाता है—कि दूध पर किसी की कुदृष्टि पड़ गयी है या देवी देवता की सुक्खण पूरी नहीं हुई है। इस कोप को शान्त करने के लिए गुग्गे का चेला या पुरोहित बुलाया जाता है उसका विचार इस प्रकार होता है :—

ओपरा—टूणा टेस्सा-ये माया चार हैं जिन्हें कोई मन्त्र से या मिर्च या धूलि फैंक कर दूर किया जाता है—ऐसा समझा जाता है। यहां तक कि इस माया चार का नाम भी लेना विपत्ति मोल लेना समझा जाता है इसे केवल इतना ही कहा जाता है—कि किसी ने कुछ कर दिया है। चेला या पुरोहित का उपचार है :—

धूणी धागा—जन्त्र मन्त्र —चेला या पुरोहित मिट्टी की कटोरी में गूगल धूप मिर्च आदि डालकर मन्त्र पढ़ते हैं। कभी कभी काला धागा बांधते हैं। चामर चौरी झुलाते हैं। ऐसा करने पर गौ की प्रतिक्रिया इस रूप में होती है।

विचकणा—बिजकणा—गौ थर थर कांपती है। बस समझा जाता है कि छू मन्त्र लग गया और टूना टेस्सा समाप्त हुआ। गौ को खूब खिलाया पिलाया जाता है जिससे दूध देने में आना कानी न करे। दूध बढ़ाने के लिए गौ भैंस का प्रिय आहार है :—

गतोआ—आटा, खल, नमक आदि मिलाकर दिया जाता है।

ग्लों—गडूची जिसकी बेल चबाने से खूब झाग निकलता है और पशुओं को भोजन में आनन्द आता है।

पतराह—बांस, शहतूत, खिड़क, ब्यूहल आदि के हरे हरे पत्ते जिन्हें गौ या भैंस लपक कर खाती है। ये दूध बढ़ाने में सहायक होते हैं।

लुगड़ा:—लोगड़ा—जौ, चावल के कण गहूं आदि वनौषधि में उबाल कर गौ को खिलाया जाता है जिससे उसको शीत ताप का भय नहीं रहता है और वह दूध अच्छा देती है।

काहड़ा—हालमा—बड़ेवें आदि भी दूध अधिक देने में तथा अरोग्यता में सहायता करते हैं।

दूध का निषेध:

देर से रखा दूध जिससे गन्ध आने लग पड़े कुत्ता या बिल्ली जिसे चाट जाये या जिसमें छिपकली आदि कोई जहरीला जानवर गिर जाये उसे पीने से इन्कार किया जाता है। उसे भूमि में दबा दिया जाता है। सूर्य, चन्द्र ग्रहण से पूर्व रखा दूध ग्रहण मोक्ष के उपरान्त कई एक नहीं पीते हैं।

काले महीने दा दुध—जम दुध—भाद्रपद मास में जो गौ प्रसूता होती है उसका दूध अच्छा नहीं समझा जाता है ऐसी गौ घर में रखनी भी अच्छी नहीं समझी जाती है उसे या तो दान में दे दिया जाता है या बेच दिया जाता है।

उपचार—दूध का सेवन नीरोग्यता के लिए श्रेयस्कर माना गया है। चोट लगने पर, मूर्छा आने पर या अन्य किसी प्रकार से दुर्बलता आने पर तत्काल दूध का सेवन कराया जाता है।

दही का सेवन शक्कर के साथ सर्दी जुकाम होने पर कराया जाता है। गुम्मा लूण (लवण) काली मिर्च जीरा, पौदीना, आदि डालकर दही का सेवन मरोड़, सूल (शूल) आदि उदर विकार होने पर कराया जाता है।

माखन सौ बार पानी से धोकर चर्म रोग ग्रस्त अंग पर मला जाता है। फोड़ा, फिन्सी आदि होने पर दहीं का मल भुत्थी मली जाती है जिससे विष का प्रतीकार विष से समझा जाता है।

घी का सेवन शिरोवेदना या अन्य अंग में पीड़ा होने पर किया जाता है।

टकोर—घी गर्म करके मालिश की जाती है।

झस्सण—चोपड़न—बेहोशी छा जाने पर या दौरा पड़ने पर घी की मालिश की जाती है। बच्चे को ठण्ड लगने पर छाती, टांग, या पेट में घी की मालिश की जाती है और जिस अंग पर मालिश की हो उसे कुछ देर के लिए कपड़े से बांध दिया जाता है।

इस प्रकार दूध और दूध के पदार्थों से कई प्रकार के उपचार किये जाते हैं। दूध को घर का वैद्य माना जाता है। वैद्य विविध औषधियों, भस्म आदि का प्रयोग दूध के सेवन से बताते हैं। घी जितना पुराना हो उतना उपचार के लिए अच्छा होता है। इसे घड़े में डालकर कई वर्षों तक रखा जाता है जिसे कुम्भी या वैद्य कुम्भसर्पिष् कहते हैं।

लोकोक्तियां:—

बात बात में दूध दहीं का वर्णन लोकोक्तियों में किया जाता है इनमें से कुछ एक ये हैं:—

दुद्धे दा दुद्ध पाणीए दा पाणी नखेड़ना

विवाद होने पर सच्चाई जतलाने के लिए दूध का दूध पानी का पानी सिद्ध कर दिखा देना। भली भान्ति निर्णय करना दुद्ध पाणी केहरना इसी भाव में चम्बयाली में प्रयुक्त है।

दुद्धे नौहणा पुत्रें फलणा

सुख समृद्धि सम्पन्न करने के लिए इस प्रकार आशीर्वाद दिया जाता है।

लैरी गेई दुद्धे चुंघाणां खट्टर गेईं जंघां भनाणा

अव्यापार में व्यापार करने से हानि उठानी पड़ती है जैसे दूध देने वाली गौ दूध देने जाती है पर उसके पीछे पीछे बांझ भी साथ चली जाती है। दूध देने वाली गौ का तो आदर सम्मान होता है परन्तु बांझ को डण्डे मारे जाते हैं।

Scanned with CamScanner

दुद्ध पुत्तर भाग्गां कने हुन्दे ।
सुख सम्पत्ति भाग्य से मिलती है।
दुद्धे दी राक्खी बिल्ली ।
जहां भक्षक ही रक्षक बन जाता है।
दुद्धे दे दन्द–दुध मुंहां।
दूध के दान्त, बाल्यावस्था होने से पूर्ण अनुभव न होना।
माऊ दा दुध पीणा—
माता का दूध पीना—वीरता का प्रदर्शन करना।
दुद्धे बुध सोभती असर
जैसा दूध पियो वैसी बुद्धि ग्रहण करो। जैसा संग होगा वैसा प्रभाव होगा।
दुद्धे घटी तां नौणीए बधी, नौणीए घटी तां दुद्धे बधी।

सब अवस्थाओं में एक जैसा होना—यदि गौ का दूध कम तो माखन अधिक यदि माखन कम तो दूध अधिक। इस ओर हानि तो उस ओर लाभ एक ओर लाभ तो दूसरी ओर हानि उठानी पड़ती है।

दुद्धे दा डुल्हणा बिलिया दा भाग खुलणा
किसी की हानि किसी का लाभ। दूध भूमि में गिरने पर दूध वाला पछताता है वह इसे मलिन समझकर नहीं उठाता है। परन्तु बिल्ली भाग्योदय समझती है वह सारा दूध भूमि से पी जाती है।

चिड़िया दा दुद्ध
असम्भव कार्य के लिए यह प्रयोग है।
दुद्धे दा फुआण
दूध का उबाल आवेश में आना। आग में तपाने से दूध में उबाल एक दम आता है। और आगे पीछे हटाने से या पानी के छींटे देने से एक दम शान्त हो जाता है इसी भान्ति किसी व्यक्ति का क्रोध एक दम आने पर थोड़ी देर बाद शान्त हो जाता है। ऐसी स्थिति प्रगट करने के लिए यह प्रयोग है।
ऊंट्टे दा दुद्ध पीणा
जिद्दी स्वभाव वाले व्यक्ति के लिए ऊंट का दूध पीने वाला कहा जाता है।
दुध पीणे जोग्गा करना
दूध पीने योग्य बनाना, इतनी मार पीट करना कि दूध पीने से सुध आये।
देहीं खाई औणा
दही खाकर आना, यदि कोई कार्य एक दम सिद्ध हो जाए तो ऐसा प्रयोग होता है।
छाही दा तां लड़ाई दा क्या बधाणा
छाछ और झगड़े का क्या बढ़ाना। छाछ में जितना पानी डालते जाओ यह बढ़ती जाएगी झगड़ा जितना चाहो बढ़ा लो अन्त नहीं होता।
छोहरू रोन्दे छाही जो बुढ़िया ढक पनीरे
बच्चे छाछ के लिए तड़पें और बूढ़ी का ध्यान पनीर की ओर रहता है। कई लोग चाहते हैं थोड़ा तो थोड़ा ही सही पर कई लोगों का गुजारा थोड़े में नहीं होता है। वे सदा अधिक से अधिक चाहते हैं। इसी का प्रयोग दूसरे शब्दों में इस प्रकार है :—

छोरूआं नी पौन्दी छाह बुड्ढी रोन्दी पनीरा जो।
छाह छोली नौणी नी निकलदा।

Scanned with CamScanner

छाछ मथने से माखन नहीं निकलता है। व्यर्थ में दौड़ने भागने से कोई लाभ नहीं होता है।

कुत्ते जो घ्यो नी हजम हुन्दा।

कुत्ते को घी नहीं पचता है। भली सीख दुष्ट को बेकार होती है।

बड़ा घ्यो होए तां पत्थर नी चोप्पड़ने

यदि घी अधिक हो तो पत्थर नहीं चुपड़ना चाहिए प्रत्येक वस्तु का सदुपयोग करना चाहिए उसे बांट कर खाना चाहिए।

घीऊए दे घड़े मन्धेरना--घी के घड़े उलटाना, संचित सम्पति का नाश करना।

मुंहे घ्यो खण्ड

मुंह में घी खांड होना, जो कहो सच निकलना और शुभ होना

घ्यो चूरी खाणा, गुड़ घ्यो चखणा।

घी चूरी खाना,--स्वादु भोजन करना, सदा सुख में रहना।

घीऊए दे घुट भरना--पानी की तरह घी पीना, मालामाल हो जाना।

तुड़का लगाणा—तुड़का छडणा

छौंक लगाना, दो व्यक्तियों की कलह में भड़काने का काम करना--कोई चुभती बात कह देना और झगड़े में चुप चाप तमाशा देखना।

घ्यो चोप्पड़ना—झसणा चोपड़ना

घी की मालिश करना, झूठी झूठी बातें करना, झूठी प्रशंसा करना।

उधार ली गई लोकोक्ति का प्रयोग हिमाचली में इस प्रकार है:—

दुद्धे दा जलेया छाही जो फूक्कां मारी पीन्दा

दूध का जला छाछ को फूंक मार कर पीता है।

हिमाचली भाषा सर्वेक्षण में सामाजिक स्तर के विभिन्न समुदायों में दूध तथा दूध के पदार्थ वाचक स्वल्पान्तर वाले विभिन्न शब्द तथा लोकोक्तियां मिलेंगीं। इनके संग्रह के लिए प्रत्येक क्षेत्र में व्यक्तिगत सम्पंक की आवश्यकता है। लोक व्यवहार में हम थोड़े से शब्दों से काम चला लेते हैं। सूक्ष्म और विशेष शब्दों को घरेलू या ग्रामीण कह कर छोड़ देते हैं। इस उपेक्षावृति से हम इतनी बड़ी शब्द सम्पति को खो रहे हैं। स्थान स्थान पर निर्माणाधीन दुग्ध केन्द्रों के होने पर दूध का घरेलू उद्योग समाप्त हो रहा है। अनेक शब्दों का व्यवहार मिटता चला जा रहा है। काल चक्र वश सब काया कल्प पलट रहा है। महाकवि मैथिलीशरण गुप्त की मार्मिक रचना 'यशोधरा' में सिद्धार्थ की प्रमुख पंक्तियां स्मरण दिला रही हैं।

घूम रहा है, कैसा चक्र।
यह नवनीत कहां जाता है, रह जाता है तक्र।

राजकीय महाविद्यालय ऊना
हिमाचल प्रदेश

पहाड़ी लोक काव्य—

गुग्गा चुहाण का सांस्कृतिक तथा सामाजिक विश्लेषण

—योगेन्द्र सिंह 'तूर'

लोक जीवन में लोक साहित्य का विशेष महत्त्व है। लोक साहित्य से अभिप्राय: सामान्य जन जीवन के साहित्य से है जिसके रचना परिवेश को किसी युग विशेष के फोक्स से नहीं देखा जा सकता। इस प्रकार के साहित्य के मूल्य शाश्वत होते हैं। जो युगयुगान्तर तक जीवित रहते हैं। इनके निरन्तर प्रवाह में जन साधारण के सांस्कृतिक पक्ष को परम्पारित रूप में समझने में विशेष सहायता मिलती है। मूलत: ऐसा साहित्य मौखिक रूप में ही उपलब्ध होता है जिसमें जीवन के अनुभूत सत्यों की प्रधानता होती है। जो सर्व साधारण की सामूहिक आत्मोपलब्धि होती है। इसीलिए लिखित साहित्य में जैसे जैसे दुरूहता बढ़ती जा रही है तथा अनुभूत सत्यों का अभाव खटकने लगा है तो दूसरी ओर लोक साहित्य के संग्रह की जरूरत बहुत अधिक मात्रा में बढ़ गयी है। चूंकि लोक साहित्य में साधारण जन जीवन के सांस्कृतिक तथा सामाजिक जीवन की सर्वाधिक रूप में अभिव्यक्ति का अवकाश रहता है, इस दृष्टि से भी इस साहित्य का मूल्य बढ़ गया है।

लोक साहित्य में लोक गीत, लोक कथाएं, लोक गाथाएं झेड़े, झमाकड़े आदि का विशेष महत्त्व होता है। हिमाचल के लोक साहित्य में झेड़ों के ऊपर नाम मात्र ही काम हुआ है किन्तु इस दिशा में कुछ संग्रह प्रकाश में आए हैं। 'नूरपूरे दा राजा जगता', गड़ मलौण रा, चम्बे रा कंजरनं वामंण तथा राजा भरतरी आदि झेड़े हिमाचल में विशेष रूप से प्रचलित रहे हैं किन्तु इन झेड़ों में जो व्यक्ति आए हैं वे हिमाचल के इतिहास के ही चर्चित व्यक्ति हैं। किन्तु गुग्गा चौहान का झेड़ा (वीर काव्य) इन सभी झेड़ों में सर्वाधिक रूप में प्रचलित तथा सांस्कृतिक भाव भूमि का अनिवार्य अंग के रूप में हमारे सामने आता है। गुग्गा चौहान के इतिहास की उपज नहीं है। और इसमें भी संदेह है कि कभी वह इधर आया हो। इस वीर पुरुष का जन्म राजस्थान में हुआ था जो अनेक किंवदन्तियों, गाथाओं और अर्ध ऐतिहासिक सत्यों से प्रमाणित होता है। राजस्थान में गुगा चौहान पर डा० सत्येन्द्र ने जो शोध कार्य किया है इसमें अब और खींचा तानी की गुजांईश नहीं है। वह अपने आप में अपूर्ण होते हुए भी पूर्ण है। किन्तु उनके सम्पूर्ण शोध में गुग्गा काव्य के सांस्कृतिक तथा सामाजिक विश्लेषण का सर्वत्र अभाव खटकता है। डा० सत्येन्द्र ने तथ्यों का ही संकलन किया है वे हिमाचल में गुग्गा पूजा के विषय में ज्यादा रुचि नहीं ले पाए हैं। हिमाचल में गुग्गा की पूजा सर्वाधिक रूप में प्रचलित क्यों, यह सोचने की बात है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि जब राजस्थान तथा उसके समीपवर्ती भागों में रहने वाले राजपूत कुलों की मुसलमानी शक्ति के सामने भारी पराजय हुई और उनकी सामाजिक तथा पारिवारिक मर्यादा खतरे में जान पड़ी तो वे पहाड़ों की ओर भागे। इस चीज को अन्य जातियों के लोगों ने भी अनुभव किया होगा किन्तु राजपूतों में जो अत्यन्त वीर थे, अपने स्वाभिमान तथा कुल की आन की रक्षा हेतु, ही पर्वतीय भागों में छिपने के लिए आए होंगे। ये लोग जब मैदानों से पर्वतों की ओर भागे तो अपने साथ अपनी सांस्कृतिक तथा सामाजिक मान्यताओं को भी ले आए। गुगा चौहान एक ऐसा सांस्कृतिक जीवन का प्रतीक है जिसे राजपूतों ने हिमाचल में आकर इसी प्रकार से मान्यता दी जैसे राजस्थान में थी। किन्तु मुसलमानी शक्ति के आंतक से राजपूत

उत्तरी पश्चिमी भारत के विभिन्न भागों में जा कर बसे थे। इसलिए उनकी जो एक समान सांस्कृतिक मान्यताएं थीं वे भिन्न भिन्न परिवेश तथा माटी की गंध में परिपक्व होकर अलग अलग रूप धारण कर गयीं। गुग्गा चौहान की पूजा तथा ऐतिहासिक स्वरूप के भी इसी कारण अलग अलग रूप मिलते हैं जिनका डा0 सत्येन्द्र ने अपनी पुस्तक में विस्तार से उल्लेख किया है। मैं इस दिशा में न जाकर गुग्गा काव्य के सांस्कृतिक तथा सामाजिक पक्ष के स्वरूप पर ही विचार करूंगा :—

सांस्कृतिक पक्ष :—

हिमाचल में 'गुग्गा चुहाण' के सम्बन्ध में देव राज शर्मा का संग्रह महत्त्वपूर्ण कार्य है। वैसे तो हिमाचल में गुग्गा के संबंध में गाथाएं तथा झेड़े जिस रूप में प्रचलित हैं उनसे इतर देवराज शर्मा का संग्रह कुछ और ही संज्ञा पाने के लिए संकेत करता है। मैंने इसे 'पहाड़ी लोक काव्य' का नाम देकर कोई खास परिवर्तन नहीं किया है। किन्तु 'गुग्गा जाहरपीर' नाम पर मुझे आपत्ति है। गुग्गा चौहान अपने जीवनकाल के अन्त में धरती में समा गया था। और इस संबंध में यह किंवदन्ति प्रचलित है कि गुग्गा ने मुसलमान धर्म ग्रहण कर लिया था, बिल्कुल कपोल कल्पना है। डा0 सत्येन्द्र ने भी 'जाहरपीर' का नाम दिया है। इसी की देखा देखी में देवराज शर्मा ने उसे अपना लिया है। अगर यह बात सत्य है कि गुग्गा को धरती ने मुसलमान धर्म अपनाने के लिए मजबूर किया होगा। तो भगवान राम की पत्नी सीता ने जब धरती में समाधि ली थी तब तो उसने यह कहा ही नहीं था कि पहले मुसलमान धर्म ग्रहण करो। आप यह कह सकते हैं कि इस समय मुसलमान धर्म नहीं था किन्तु क्या धरती में समाने की परम्परा हमारे यहां सदा के लिए समाप्त हो गयी? हिन्दुओं में अभी भी छोटे बच्चों को दफनाया जाता है इससे क्या हिन्दुओं में मुसलमानीयत की तलाश की जाए? गुग्गा चौहान जो अपने समय का अत्यन्त वीर योद्धा था और जिसने मुसलमानों को पराजित करके हिन्दू धर्म की रक्षा की, वह अन्त में मुसलमान हो गया हो, संदेह है। किन्तु इससे यह सिद्ध होता है कि मुसलमानों ने यहां आकर हिन्दुओं को तलवार के बल पर जब मुसलमान बनाया था। इस दिशा में यह भी सम्भावना है कि मुसलमानों ने हिन्दुओं में गुग्गा पूजा की प्रसिद्धि को देखकर अपना लिया हो और इसे अपने धर्म का संस्कार देने के लिए प्रक्षिप्त अंश जोड़ दिया हो। ऐसा प्रायः जब्री बने मुसलमानों ने ही किया होगा। इस प्रकार संभावनाएं बहुत हैं। किन्तु गुग्गा चौहान ने मुसलमान धर्म में दीक्षा नहीं ली। चूंकि अगर ऐसा होता तो कम से कम उच्च कुल की आन तथा स्वाभिमान पर मिटने वाले राजपूतों में इस व्यक्ति का न तो इतना सम्मान होता और न ही पूजा।

गुग्गा चौहान का ऐतिहासिक वृत्त संदिग्ध है। कुछ निश्चित इस संबंध में कहना कठिन है। फिर भी गुग्गा का संबंध चौहान वंश से था। गुग्गा का गोरखनाथ से घनिष्ठ संबंध बताया जाता है, यह देखकर इन्हें गोरख नाथ का समकालीन मानने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। गोरखनाथ एक पहुंचा हुआ सिद्ध योगी था जिनकी भक्ति करने पर माता वाछल ने गुग्गा को जन्म दिया था। इस तथ्य को पूर्ण सत्य तो नहीं कहा जा सकता है लेकिन ऐसा होना संभव हो तो संदेह नहीं। गुग्गा चौहान मारूदेश का उत्तराधिकारी था। इनके जीवन वृत्त को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि गुग्गा को अपने मौसेरे भाइयों अर्जुन तथा सुर्जन से युद्ध करना पड़ा था जो इससे आधा राज्य मांगते थे। माता वाछल को इनके मरने से दुःख हुआ होगा। जिससे विह्वल होकर उसने अपने पुत्र को देश से बाहर चले जाने की आज्ञा दे दी होगी। गुग्गा चौहान अपनी माता के इस वचन को अपना स्वाभिमान मान कर चला गया हो तो यह भी संभव है।

'गुग्गा चुहाण' काव्य के सांस्कृतिक पक्ष पर यहां विस्तार से विश्लेषण आवश्यक है जिससे हिमाचल की सांस्कृतिक भाव भूमि को समझने में कुछ सहायता मिल सके। हिमाचल प्रदेश में चमत्कार तथा सिद्धियों में लोग

सर्वाधिक रूप में विश्वास रखते हैं। और हम इनका शोध करें तो ज्ञात होगा कि अब भी इस प्रदेश में स्थान स्थान पर सिद्धों तथा नाथों के अवशेष देखने को मिलेंगें। गोरखनाथ की सम्पूर्ण उत्तरी भारत में प्रसिद्धि थी तथा उन्हें चोटी का नाथ भी इसीलिए माना जाता है। चमत्कार प्रदर्शन तथा तांत्रिक साधना में उनकी कोई होड़ नहीं ले सकता था। गुग्गा काव्य के आरम्भ में गोरखनाथ के चमत्कारों का वर्णन आया है जिसमें काली माता, कुम्हारी तथा गंगा के अहं को खंडित किया गया है। सिद्ध लोग धन धान्य की इच्छा से दूर रहते थे। माता वाछल ने भिक्षा स्वरूप सैकड़ों मन व्यंजन गोरखनाथ की सेवा में प्रस्तुत करने के लिए दिए तो उनके एक ही शिष्य काहनी चेले ने ही उसके सारे अंह को तोड़ दिया। काहनी चेले की 'डोडी पिआलुआ' ही भरने में नहीं आया।

जे तेरा भोजन गिरी गिरी पहोंगा, अपे चुगी चुगी खाओ आं।
सौए मणे दे रोट पलटे, पिआलु पुरा न होया
सौए मणे दे भोज लटे, पिआलु अधा वी नी होया।
सौए मणे दी झिजण पाई, पिआलु पूरा वी नी होया।।

प्रसन्न होकर गोरखनाथ ने माता वाछल को पुत्र रूप में वरदान दिया था। यह फल गोरखनाथ ने अपनी सिद्धि से पाया था। ऐसा लगता है गुरू गोरखनाथ की नागों से मन ही मन शत्रुता रही होगी जिससे उन्होंने नाग जाति के दुश्मन गुग्गा को इस धरती पर लाने के लिये यह चमत्कार किया हो। गुग्गा चौहान की शादी में व्यवधान पड़ने पर गोरखनाथ ने ही इसकी सहायता की थी। काहनी चेले को पाताल में भेजकर बासुकि नाग को बुलाना तथा तक्षक सर्प को कौरू देश में भेज कर चमत्कारों के बल पर सुरिहल की गुग्गा से शादी की बात पक्की करना गोरखनाथ की ही कृपा थी। रानी भोंपाली का गुग्गा को जादू द्वारा मोती बना देने पर गोरखनाथ जी ही उसे पुन: मंत्र पढ़ कर व्यक्ति रूप में लाए थे।

गुग्गा काव्य में काहनी चेले के भी कुछ चमत्कार वर्णित हैं जो गोरखनाथ की ही कृपा से होते हैं। कौरू देश में पहुंच कर गुग्गा और काहनी चेले को जब तंग किया जाता है तो काहनी अपनी करनी से लड़कों की सेना को अपनी मृगशाला में लपेट कर अदृश्य कर देता है। फिर वह बाग में प्रवेश द्वार को आकाश में उड़ा देता है।

गुरू गुग्गा को भी दिव्य शक्ति प्राप्त थी। वे सर्पों के घोर दुश्मन थे। अभी वे गर्भ में ही थे कि उन्होंने धौला बैल के विष को उतार कर जीवित कर दिया था। बचपन में अभी वे झूले में ही थे तो उन्होंने सर्पों के आक्रमण के कारण इस रूप में विनाश किया था:

नागां दा रस यूं चुस्से जिहां बालक दे मुंह मम्मा।
नागां दा रस यूं चुधें जिहां कत्तक महीने दा गन्ना।
नागा दा रस जिऊं चुंघें, हड्डियां दे ढेर लगाओए।
चुंघी चुंघी राणे नागां दी अठकुली खत्म कित्ती।।

इसीलिए हिमाचल में गुरु गुग्गा की सर्पों से रक्षा करने वाला देवता मान कर पूजा होती है। हिमाचल के कई भागों में यह विश्वास है कि जिस व्यक्ति को सर्प ने काटा हो, अगर वह गुरू गुग्गा के मंदिर में जाकर अराधना करे तो गुग्गा उस सांप को अपने पास बुलाता है और इस व्यक्ति के विष को उतारने के लिए मजबूर करता है। इसलिए विश्वास है कि डंग मारने वाले सर्प को नहीं मारना चाहिए।

हिमाचल में देवी देवताओं की पूजा तथा चढ़ावा कैसे करते हैं, गुरू गुग्गा काव्य में इसका वर्णन आया है।

सुआए सेरे दा रोट पकाया, गुड़ घि खंड लाईया
सुआए सेरे दा रोट पकाया, बुकले विच छुपाया।
हत्था लंबी हूमे री कड़छी, गुरां दे डेरे आइयां।।

Scanned with CamScanner

भारतीय सांस्कृतिक परिवेश में लड़के का जन्म शुभ तथा मांगलिक माना जाता है। इससे एक ओर कुल वृद्धि होती है तो दूसरी ओर वह पितरों की सेवा का कर्त्तव्य भी निभाता है। इस संबंध में यह भी मान्यता है कि पुत्र अपने माता पिता का दाह संस्कार तथा पाठ पूजा करे तभी प्रेतात्मा की स्थिति से मुक्ति मिल सकती है। गुग्गा काव्य में वाछल और उसके स्वामी का चिंतित होने का यही कारण है। माता वाछल इसीलिए ब्रह्मा विष्णु तथा गोरखनाथ की कई वर्षों तक भक्ति करती है :–

भरी भरी नैंण माता वाछल रोंबी, श्रौरा कर्म कमाया।
बारा बरसां ब्रह्म सियुरया से श्रोआं श्राकल गईयां।
बारा बरसां विष्णु सियुरया, से श्रोआं श्राकल गईया ।
बारा बरसां तु जोगी सियुरया, आज छल लगाणे तु आया ॥

आज भी हिमाचल में अनेक परिवारों का सर्वेक्षण किया जा सकता है कि जिनके घर पुत्र रत्न का जन्म नहीं होता वे संत महात्माओं तथा देवी देवताओं की अराधना में लगे रहते हैं।

गुग्गा के विवाह प्रसंग से ज्ञात होता है कि हिमाचल के विभिन्न भागों में लड़के या लड़की की शादी एक बार निश्चित कर देने पर वहां से हटा लेना बुरा माना जाता है विशेषतः राजपूतों में। लड़की का जगह जगह रिश्ता करना तो राजपूती आन के विरूद्ध है। गुग्गा के विवाह प्रसंग में कौरूदेश का राजा गुग्गा को सुरिहल का टीका भेज कर शादी पक्की करता है किन्तु कुछ दिनों के बाद वह इन्कार कर देता है जिससे ग्गा अपना अपमान समझता है। इसी लिए तो राजपूती आन में कहता है:

छतरिआं राजपूता रा धर्म आ, ब्याही री चली जाए कुआरी न जाओए ॥

लड़की पक्ष की ओर से बारात का आदर करना तथा सुन्दर सुन्दर वस्तुएें उपहार में भेंट करना सम्मान का कारण समझा जाता है। कौरू देश का राजा जब यह देखता है कि गुग्गा केवल दो फकीरों के साथ ही आया है तो उसे बहुत ठेस पहुंचती है रानी भोंपाली तो क्रुद्ध होकर स्वंय गुग्गा के पास जाकर यह आदेश कर आती है।

अठ लख घोड़ा, नौ लख पैंर पिआदा, दस लख लयाओणी बरात।
इतनी बरात जोड़ी ल्याएओ तां मेरे महले आएओ ॥

वस्तुतः लड़की के पैदा होते ही माता पिता को चिन्ता हो जाती है, उसके विवाह की । इसीलिए वे लड़की के पैदा होते ही धन तथा दहेज की वस्तुएं जमा करने लग जाते हैं।

बारहां बरसां दे पके पकुआन, अज किस दिया बरात जो खुआओआं ।
बारहां बरसां दीआं पकीआं मठयाइयां अब किसजो खुआओआं।
बारह बरसां ते तम्बु सतरंज बणआए, अज किस जो लगुआओंआ
बारहां बरसां घोड़ेआं जो दाणा दलुआया इक घोड़ा लई के आए ॥

हिन्दुओं में विवाह आदि वेद रीति से सम्पन्न होते हैं। गुग्गा के विवाह का ऐसा ही दृष्य देखिए।

सौए लधे दी खाट बछाई, उपरा ते बेद गड्डाई।
सुईने री वेद, रूपे री थहमीयां, गड्डियां राजे संझी नें दरबार।
अम्बर गरजे, मेहा बरसे व्याहणे चढ़या चुहाण
गुग्गा रजादा बेदी बैठया, देवते बैठे चफेर।

कन्यादान का दृष्य हिन्दू संस्कृति के अनुसार ही यहां सम्पन्न हुआ लेकिन यहां राज परिवार का अपना प्रभाव है।

पहलीआं लाओआं तेरे नानकी आओए, करदे बेदी वाले दान।
दुज्जिया लाओआं राजा संझी आओए, करवा बेटी दे दान।
तिजिया लाओआं राणी भोंपाली आओए, करदी कुड़िया रे दान।
चौथिया लाओआं तेरे भाई आओए, करदे घोड़ेआं वाले दान।

लड़की के विदा का दृष्य बड़ा ही कारूणिक होता है। उसकी सहेलियां , माता पिता विछुड़ जाते हैं जिससे वह इतना प्रलाप करने लगती है कि ऐसा लगता है जैसे सावन मास उतर पड़ा हो।

बाल परोए सुच्चयां मोतिए, स्यूने दा चक लगुआया।
सठ सहेलियां कठियां हुइयां, कुजां वाले डार।
तुसें तां बैठो भैणों मेरियो, मैं अज परदेसण वणी।
सठ सहेलियां गला मिलदियां, रोई रोई सौण लगाया।।

हिन्दू रीति में लड़की का डोला आगे आगे ले जाया जाता है और पीछे पीछे वर का रहता है। चलते समय लड़की अपने माता पिता का देश छोड़ने पर प्रलाप करने लगती है––

सुरिहल देई डोले बैठी, किहां करे बरलाप।
डोले बैठी सुरिहल बोले, देखी लैणा बापू तेरा देस।
मजलें मजलें डोला तियार हुआ, चलणे जो हुंदां तियार।
अगें अगें सुरिहल दा डोला, पिछे हुंदां निले दा सुआर।।

विवाहोपरान्त यह मान्यता है कि अगर घरेलू कार्यों में व्यवधान पड़े तो नवविवाहिता के लक्षण को कोसा जाता है। गुग्गा पर विपत्तियों के आने पर गुगड़ी सुरिहल की आलोचना करती है।

जली पर जावां मारूआ देसा, नित उठ गोधम पाया।
जब हकी ब्याही सुरिहल राणी, जदहकी गोधम पाया।।

सांस्कृतिक जीवन में लोक विश्वासों का विशेष महत्त्व है 'तारे का टूटना' अशुभ माना जाता है। गुग्गा जब युद्ध क्षेत्र के लिए चलता है तो सुरिहल को तारा टूटता हुआ नजर आता है जो उसके भावी जीवन में विपत्तियों की ओर संकेत करता है।

महलां ते उतरीआं सुरिहल राणीयां, टूटया नौ लाख तारा।
मैं तिजो बोलां मेरे राजा, मिंजो मारी के तु जाणा।।

सामाजिक जीवन :

गुग्गा काव्य में सामंतीय परिवेश का चित्रण प्रधान है जिसके ईर्द गिर्द समाज के दूसरे वर्ग के लोग घूमते हुए दिखायी देते हैं। 'गुग्गा काव्य' के अध्ययनोपरांत ऐसा ज्ञात होता है कि व्यक्तिगत भेदभाव अधिक न थे।

माता वाछल जिस फल को खाकर गुग्गा चौहान को जन्म देती है उसके छिलके उसकी एक दासी खा लेती है जिससे गुगड़ी नाम की लड़की पैदा होती है। जो गुग्गा की भांति बहादुर थी। गुग्गा श्रौर गुगड़ी के बीच घनिष्ठ भाई बहन का स्नेह था। फल के कुछ श्रवशेष भंगिन, चमारी तथा घोड़ी ने भी खाए थे जिनसे नार सिंह, भजन, रतनु तथा नीला घोड़ा पैदा हुए जो गुग्गे के श्राजन्म साथी रहे थे। स्पष्ट हैं कि जाति गत भेदभाव इनमें नहीं थे। किंतु इस रूप में इतिहास को झुठलाना होगा। इसके श्रतिरिक्त कि झियुंरियां, माली, लुहार, नाई, पुरोहित ये भी विभिन्न जातियों के लोग सामंतीय परिवेश के चारों श्रोर चक्र की तरह घूमते हैं।

गुग्गा काव्य में सामंतीय शान शौकत के प्रायः दृष्य देखने को मिल जाएंगें। माता वाछल के स्नान की तैयारी देखिए।

हुक्म करदी माता झियुरां, बोटियां पाणी गर्म करायां।
ठण्डा पाणी गर्म कराया, चनण चौकी ढलायां।
चनने चौकी ऐंन ठहराइंयां, बाछला जो न्होण संजोयां।।

माता वाछल का योगी के दर्शनार्थ जल भरने जाने के लिए घोड़ा श्रौर बिन्नुश्रा साधारण नहीं हैं—

माता बाछल तलमल हुईयां, में जोगिए देखणे जाणा।
सुईने घड़ोलु रूपे बिन्नुश्रा, माता नीर भरैंणे जाश्रोए।।

गुग्गा के विवाह प्रसंग में कौरव देश के राजा के भी सामन्तीय शानशौकत के दृष्य देखने को मिल जाते हैं।

चनण रूखा दा डोला बणुश्राया, मोतियां दी जड़त जड़ाया।
स्यूने रूपे दा कलस लगाया, डोला बांका बणाया।।

समाज में जादू टोने का भी प्रसार रहता है कौरव देश में जादू टोना का श्रत्यधिक रूप में प्रचलन रहा होगा, ऐसा इस काव्य से ज्ञात होता है। राणी भोंपाली का श्रपने दामाद को मोती रूप में बदल देना जादू का ही खेल है।

राणी भोंपाली ने क्या चरित कमाया, कौरू देस रा जादू चलाया।
ऐसा चरित चलाया गुग्गें लाड़े दा मोती बणाया।।

उपर्युक्त पर्यालोचन के उपरान्त हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि 'गुग्गा काव्य' लोक काव्य है जिसका रचयिता व्यक्ति विशेष न होकर सम्पूर्ण जन जीवन का सामूहिक मस्तिष्क है जिसमें सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन की कहीं स्पष्ट तो कहीं क्षीण झलक दिखायी देती है। जनजीवन की चमत्कारों तथा सिद्धियों में रुचि होना स्वभाविक है। गोरखनाथ तो चमत्कारों के श्रवतार ही थे जिसका प्रभाव श्रब भी हिमाचल प्रदेश के कोने कोने में है। गुग्गा चौहान की सम्पूर्ण गाथा गुरू गोरखनाथ से ही शुरु होती है श्रौर श्रन्त तक गोरखनाथ की सहायता करते हुए दिखायी देते हैं। गुग्गा के संबन्ध में यह कल्पना संभव है कि वे राजस्थान के किसी मारू देश के शासक थे। हो सकता है कि उन्हें गुरू गोरखनाथ से किसी तरह की शक्ति मिली हो जिसके बल पर वे नागों को वश कर लेते हों श्रौर वे सर्पों द्वारा काटे गये व्यक्तियों के इलाज में जगत प्रसिद्ध हो। यह संभव है कि इस प्रकार ख्याति श्रर्जित कर लेने पर उनकी मृत्यु के बाद लोगों ने उनकी पूजा करनी शुरू कर दी हो। मुझे तो लगता है कि गुग्गा के पास सर्प दंश से रक्षा करने के लिए जन्मजात शक्ति थी। गुग्गा राजपूत वंश से संबंधित था इसलिए ज्यादातर हिमाचल में राजपूत ही गुग्गा की पूजा करते हैं। इसीलिए इस काव्य में क्षत्रिय समाज तथा संस्कृति की झलक श्रधिक देखने को मिलती है।

मेहर काटेज, लोअर कैथू,
शिमला-3

प्राचीन जनपद 'कुलिन्द' और वर्तमान हिमाचल प्रदेश में उसका कुछ क्षेत्र

—प्रो0 चतुर सिंह

वैदिक कालीन भारतीय इतिहास में 'कुलिन्द' नामक जनपद का उल्लेख है । इस जनपद की भौगोलिक स्थिति का उल्लेख कुछ इस प्रकार मिलता है कि यह 'ब्रह्मावर्त' के उत्तर में नगाधिराज के किसी पर्वतीय आंचल में स्थित था । इसी जनपद की एक मुख्य नगरी भी थी जिसकी भौगोलिक स्थिति भारत के उत्तर पश्चिम में पड़ती है । इस के निकट से कालीन्दी' के भी प्रवहमान होने का संकेत मिलता है इस भौगोलिक परिचय के अनुसार वर्तमान 'पाऊंटा साहिब' के उत्तर-पश्चिमी छोर पर 'राजवन' के निकट एक प्राचीन ध्वस्त नगरी 'सिरमौर' की वर्तमानता बिल्कुल सही सिद्ध ठहरती है। इस नगरी के खण्डहर अभी भी विद्यमान हैं। कुछ कुछ अनुमान और कुछ सही अन्दाज़ों के आधार पर यह स्पष्ट हो जाता है कि वैदिक कालीन 'कुलिन्द' नाम से विख्यात जिस प्रसिद्ध जनपद की मुख्य नगरी का कई स्थलों पर हवाला दिया गया है वह राजवन के निकट वाली उपर्युक्त नगरी, सिरमौर ही थी ।

इसी लेख से सम्बन्ध दूसरा महत्त्वपूर्ण प्रश्न है, कि इस 'कुलिन्द' नामक जनपद का, "कुलिन्द" नाम कैसे और क्यों पड़ा ? इसका स्पष्टीकरण निम्न पंक्तियों में प्रस्तुत है—

'राजवन से दक्षिण पूर्व की ओर यमुना नदी बहती है । यमुना का पौराणिक एवं अति प्राचीन नाम कालिन्दी' है । यमुना का उद्‌गम उत्तर प्रदेश में 'जमनोत्री' में है । जिस पर्वत से यमुना की धार निकलती है उसे प्राचीन धर्मग्रन्थों एवं पुराणों के भीतर 'कलिन्द' पर्वत के नाम से अभिहित किया गया है । अतः 'कलिन्द' पर्वत से निकलने के कारण यमुना का दूसरा नाम 'कालीन्दी' भी इसीलिये पड़ा । इसके अतिरिक्त संस्कृत में कलिन्द शब्द का एक और अर्थ 'बहेड़ा' भी होता है । आयुर्वेद में रेचन के लिये 'त्रिफला' नामक जिस औषधि का वर्णन मिलता है, उसके भीतर 'हरड़' और 'आंवले' के फलों के अतिरिक्त 'बहेड़े' का फल भी सम्मिलित रहता है । मुझे एक बुजुर्ग से ज्ञात हुआ कि पाऊंटा साहिब से उत्तर पूर्व की ओर यमुना की धार जिन जंगलों से होकर गुजरती है वहां कुछ साल पहले तक 'बहेड़े' के बीहड़ जंगल विद्यमान थे । आज यद्यपि उन सारे जंगलों का प्रायः सफाया हो चुका है तथापि अभी भी उस ओर के इलाके में 'बहेड़' के वृक्ष काफी बहुतायत से मिलते हैं । यह मैंने वहां जाकर स्वयं भी देखा । अतः यमुना का बेहेड़े के बीहड़ बन प्रान्तरों से गुजरने के कारण भी, उसका 'कालिन्दी' नाम अपनी सार्थकता प्राप्त कर लेता है।

नाम की समस्या वाले प्रश्न का समाधान यानि 'कुलिन्द' का नाम कुलिन्द कैसे और क्यूं पड़ा-अभी भी अधूरा ही है । अतः उसके लिए इतिहास के कुछ अधूरे पृष्टों को' पकड़ना लाजमी है।

हिमाचली लोक साहित्य के मनन तथा अनेक धार्मिक ग्रन्थों और कुछ प्राचीन ऐतिहासिक दस्तावेज़ों के अध्ययन से पता चलता है कि वैदिक काल से लेकर मध्ययुग में मुग़लों के समय तक आधुनिक सिरमौर आंचल (तत्कालीन सिरमौर राज्य) का सीमा विस्तार पूर्व में हरिद्वार के समीप 'कनखल' से लेकर पश्चिम में कांगड़ा तक के लगभग सम्पूर्ण पर्वतीय प्रदेश में व्याप्त था । आज के टेहरी गढ़वाल और 'जौनसार' के इलाके भी सब इसी राज्य की सीमाओं में आबद्ध थे । कुलिन्द पर्वत भी उस समय इसी जनपद के भीतर सम्मिलित था । अतः इस महत्वपूर्ण पर्वत से निकलने के बाद बेहेड़े के जंगलो को पार करते हुए यमुना जब सिरमौर के पास से लाघीं तो उसके कालिन्दी नाम के आधार पर उस आंचल विशेष का नाम कुलिन्द जनपद पड़ा। मैदानी भागों में

पहुंचने से पूर्व जहां जहां से जिस पर्वतीय घाटी को लांघते हुए यह सरिता बहती थी, उस प्रदेश का 'कुलिन्द' यानि 'कालिन्दी' नदी का घाटी प्रदेश नाम पड़ जाना बिल्कुल स्वाभाविक है ।

समस्या का एक और अहम पहलू कि इस प्राचीन 'कुलिन्द' नामक जनपद की सिरमौर नाम से ख्याति कब और कैसे हुई ? अभी भी विवेचनों के अभाव में अपूर्ण तथा अनुत्तरित है । इसका उत्तर तलाशने के लिए फिर दोबारा भारती इतिहास के उस अध्याय के झरोखों में झांकना जरूरी है जब सन् 323 ई0 पू0 में सिकन्दर महान् की मृत्यु हुई । सिकन्दर महान् की मृत्यु के पश्चात उत्तरी पश्चिमी पंजाब में युनानियों की शक्ति दुर्बल और क्षीण पड़ चुकी थी । उस समय भारत के एक विशाल भू-भाग पर मगध साम्राज्य छाया हुआ था । और सर्वत्र नन्दवंश की ही तूती बोल रही थी । सिकन्दर की मृत्यु उपरान्त चन्द्रगुप्त मौर्य की यह लालसा कि नन्द वंश का अन्त करके एक विशाल विस्तृत और शक्तिशाली साम्राज्य की स्थापना की जाए—बहुत जोर पकड़ती जा रही थी । अतः उसने पहले पंजाब को जीता और फिर पूरी सैनिक तैयारी के साथ मगध पर चढ़ाई की। कुछ इतिहासका ों ने यहां अपना मत वैभिन्य प्रकट किया । उनके अनुसार चन्द्रगुप्त ने पहले पंजाब को अधिकार में नही लिया था महावंश की टीका और कुछ युनानी-लेखों में इसके विपरीत पंजाब के ही अधिकार की बात का उल्लेख मिलता है । वैसे यही बात जंचने वाली भी महसूस होती है । क्योंकि चन्द्रगुप्त मौर्य का अपने और मगध साम्राज्य के बीच पड़ने वाले भू-भाग को कुलांच मार कर एक ही छलांग में पार कर लेना कुछ अस्वाभाविक और हास्यास्पद सा मालूम पड़ता है । निश्चय ही उसने पहले पंजाब को जीत कर अथवा वहां के तत्कालीन राज्याध्यक्ष के साथ सन्धि करके अपने पृष्ट भाग को खूब सुरक्षित कर लेना चाहा होगा । इसके अतिरिक्त चन्द्रगुप्त को शायद नन्दवंश के मगध जैसे शक्तिशाली साम्राज्य के साथ भिड़ना भी बहुत कठिन महसूस हुआ और इसीलिए चन्द्रगुप्त तथा कौटिल्य ने इस शक्तिशाली साम्राज्य के विरुद्ध युद्ध करने से पहले प्रसिद्ध प्रवर्तक नामक राजा को भी सन्धि करके, अपनी ओर मोड़ लिया था उसी की सहायता से चन्द्रगुप्त को मगध पर विजय प्राप्त हुई और इस प्रकार सुदूर पूर्व तक उसने अपने राज्य की सीमाओं का विस्तार किया । महाराजा प्रवर्तक के राज्य की तत्कालीन सीमाएं हिमालय की तराई के साथ साथ पंजाब में दूर तक व्याप्त थी । लगभग सारा पर्वतीय भू-भाग महाराजा प्रवर्तक के अधीन था । पर्वतीय प्रदेश का प्रभुत्वशाली शासक होने के नाते उसका उस समय का प्रसिद्ध नाम 'प्रवर्तक' पड़ा । कुछ इतिहासकारों, ने पोरस को ही प्रवर्तक माना है, जो कि ठीक नहीं ।

मगध विजय के बाद लगभग सम्पूर्ण भारत में मौर्य राज्य की स्थापना हो चुकी थी । इस रज्य की सीमाओं का विस्तार पूर्व में बंगाल से लेकर उत्तर पश्चिम में हिन्दूकुश तथा पश्चिम में अरबसागर तक व्याप्त था । दक्षिण में 'मैसूर' से लेकर उत्तर में आज के कालसी नामक स्थान तक उसका साम्राज्य फैला हुआ था । उस समय की 'कुलिन्द' राज्य की स्थिति मौर्य साम्राज्य के उत्तर में उसके ठीक शीर्षस्थ बिन्दु तक पहुंचती थी । मगध विजय से पूर्व चन्द्रगुप्त को पंजाब और मगध के बीच पड़ने वाले जिस पर्वतीय राज्य की सहायता प्राप्त हुई थी वह 'कुलिन्द' के अतिरिक्त और कोई अन्य नहीं था । अतः चन्द्रगुप्त ने उस समय के अपने प्रति किए गए उपकारों के प्रति कृतकृत्य होकर यहां के राज्याध्यक्ष को एक सम्मानित उपाधि से विभूषित किया और राज्य को एक नए नाम से अलंकृत किया । जैसा कि पहले वर्णन किया चुका है कि मौर्य साम्राज्य के उत्तरी भाग में 'कुलिन्द' की शीर्षस्थ स्थिति के कारण इसें शिर-मौर्य अर्थात् मौर्य साम्राज्य का शीर्षस्थ भाग नाम से विभूषित किया गया । कालान्तर में भाषा-विज्ञान (Philology) के सैद्धान्तिक आधार पर वर्ण-विपर्यय होकर इसका नाम 'शिर-मौर्य के स्थान पर 'सिरमौर' पड़ गया । वही सिरमौर नाम आज तक चला आ रहा है ।

राजकीय महाविद्यालय नाहन
जिला सिरमौर

Scanned with CamScanner

ऐतिहासिक अनुशीलन

बिलासपुर के राजा भीम चन्द और उनके पहाड़ी राजाओं से सम्बन्ध

एक विवेचन

—लोकेन्द्र सिंह चन्देल

कहलूर[1] अर्थात् आधुनिक बिलासपुर के राजा भीमचन्द राजा दीपचन्द के बड़े राजकुमार थे । इनका जन्म संवत 1708[2] सन् 1654 ई0 को हुआ था । इनकी माता जलाल देवी मण्डी के राजा की पुत्री थी। भीमचन्द 1660 सं0 1722 को कहलूर के सिंहासन पर बैठे तथा 27 वर्ष तक राज्य किया। अपने राज्यकाल में भीमचन्द ने निकटवर्ती राज्यों की मद्द करके एवम् अपनी सैनिक योग्यता के आधार पर अपनी प्रतिष्ठा को बनाये रखा । इसी मध्य मुगलों से युद्ध करके अपनी स्थिति को स्पष्ट किया।

राजा भीमचन्द कहलूरिया के अन्य पहाड़ी राज्यों से आपसी सम्बंधों का वर्णन करने से पहले कहलूर राज्य की भूगोलिक स्थिति तथा राजावंश के विषय में संक्षिप्त रूप से वर्णन करना आवश्यक है । कहलूर या वर्तमान बिलासपुर सतलुज नदी की निम्न घाटियों में स्थित है । यह इस राज्य को दो भागों–"वारला व पारला"[3] में विभक्त करती है । इसके उत्तर में मण्डी , कांगड़ा, पश्चिम में कांगड़ा होशियारपुर, दक्षिण में हन्डूर[4] पूर्व मे बाघल[5] सुकेत[6] राज्य थे । कहलूर में छः धारें क्रमशः धार बन्दला, धार बहादुरपुर, धार रत्नपुर, धार [illegible] धार-झन्झर है । इसी तरह इसमें छः खड्डे – सीर, शुक्र, सरयाली, अली, गम्भरोला, गम्भर, बहती है व एक दरया सतलुज बहता है ।

---

(1) कहलूर–वर्तमान राज्य हिमाचल के, ज़िला बिलासपुर का पुराना नाम है । यह 31°12', 30", व 31°35' 45" उत्तरी अक्षांश, 76°23' 45" व 76°55", 40", पूर्वी देशान्तर में स्थित है । कहलूर का शासक होने के कारण इसके कृषकों व निवासियों को कहलूरिया भी कहा जाता है ।

(2) मियां अक्षर सिंह, बिलासपुर की कहानी" (1941) पृ 20

(3) यह कहलूरी भाषा में है, जिसका अर्थ है नदी के इस ओर व उस पार का क्षेत्र ।

(4) हण्डूर आधुनिक नालागढ़ के क्षेत्र को कहते थे । वहां पर भी कहलूर के सम्बन्धी राजवंश का शासन था –

(5) बाघल राज्य में अर्की, धुन्धन, कुनिहार आदि के क्षेत्र शामिल थे, जो छोटे-छोटे सरदारों के अधीन थे ।

(6) इस राज्य मे आधुनिक-सुन्दर नगर, करसोग व ड़ैहर के क्षेत्रादि थे । इस पर सेन वंश का शासन था ।

राजा कहाल चन्द ने धार कोट में एक किले का निर्माण करवाया था जिसके नाम पर ही इसका नाम कोट कहलूर पड़ा[1]। पहले इस राज्य की राजधानी सुन्हानी नामक स्थान पर थी। वहीं पर राजा के महल थे। परन्तु 1653 ई० में राजा दीप चन्द ने अपनी राजधानी को स्थानान्तरित करके "व्यासपुर[2]" नामक स्थान पर स्थापित थी। इस बस्ती का नाम 'बिलासपुर' भी इन्होंने ही रखा[3]।

कहलूर राज्य पर चन्द्र वंशीय चन्देल राजपूतों का राज्य था। चन्देरी के चन्देल शासकों में से 71वें राजा हरिहर चन्द अपना राजकार्य अपने बड़े राजकुमार को सौंपकर रंगनाथ का मन्दिर[4] देखने आये। यहीं पर उनके पुत्र वीर चन्द ने कलूहर राज्य की स्थापना की इस प्रकार कनूहर राज्य शासक चन्देरी के चन्देल राजपूतों के वंशज थे।

राजा भीम चन्द के पिता दीप चन्द 1650 ई० में कहलूर के शासक बने उनके दो रानियां थी-एक कुम कुम देवी, जो कुल्लू से सम्बन्धित थी। उसके एक पुत्री थी। दूसरी मण्डी के राजा की पुत्री जलाल देवी थी, उसके दो पुत्र-भीम चन्द एवं धन चन्द थे। कहते हैं कि दीप चन्द की मत्यु जहर खाने[5] के कारण हुई थी।

---

(1) इसके पीछे एकसुप्रसिद्ध गाथा है कि—नैना नामक एक गूजर ने राजा वीर चन्द के दरबार में बताया कि "मेरी गाय जिसने अभी तक बच्चा नहीं दिया है, पर फिर नित्य पत्थर की एक शिला पर दूध की धार छोड़ती हैं तो राजा ने उस शिला को वहां से हटवाया। कहते हैं उस शिला के नीचे से एक दूर्गा की मुर्ति मिली। वहां पर राजा वीर चन्द ने एक मन्दिर बनवाया। इस मन्दिर का नाम नैना मन्दिर रखा।

इसी प्रकार कहलू नामक गुजर ने भी दरबार में आकर निवेदन किया कि "एक बार उस चट्टान पर मेरी बकरी को बाघ ने तीन बार झपट कर ले जाना चाहा परन्तु बकरी ने तीनों बार बाघ को सींगों से पीछे धकेल दिया। जिसके कारण महाराज ने नित्य देवी के दर्शन हेतु वहां पर एक किले का निर्माण करवाया उसके नाम पर ही (कहलू) इसका नाम कोट कहलूर रखा।

(मियां अक्षर सिंह, वही पृ० 5)

(2) "व्यासपुर" सतलुज नदी के बायें तटपर स्थित है। इसका नाम महाऋषि व्यास देव की व्यास गुफा के नाम पर पड़ा है। वह गुफा में तपस्या करते थे। यह गुफा आज भी व्यास गुफा के नाम से सुप्रसिद्ध है। इस गुफा के आस-पास के क्षेत्र का नाम व्यासपुर था, जो बाद में बिलासपुर बन गया।

(मियां अमर सिंह, वही पृ० 19)

(3) वही पृ० 19,

(4) मालवा के चन्देल राजाओं के वंश में से राजा एलदेव अपना राज पाठ का कार्य अपने राजकुमार को छोड़कर, रानी विमला देवी सहित उत्तराखण्ड की ओर तपस्या करने आय। कुछ समय के पश्चात् एलदेव का देहान्त हो गया। रानी विमला देवी भी उनके साथ सती हो गयी। तत्पश्चात् उनके पुत्र ने एक मन्दिर बनवाया, जिसमें महाराज एलदेव व रानी विमला देवी की मूर्तियां रखी गयी। इस मन्दिर का नाम "रंगनाथ" रखा गया। आज भी यह मन्दिर अपनी खण्डहरवस्था में गोविन्द सागर के पानी में जलमग्न है।

(5) कहते हैं कि—1666ई० में उत्थानोंमुख सिक्खों ने कहलूर पर आक्रमण किया, परन्तु राजा ने उन्हें अधीनता स्वीकार करने के लिए बाधित किया तत्पश्चात राजा दीप चन्द नादौन गये। कांगड़ा के राजा ने सम्मान में राजा को रात्रि भोज पर आमंत्रित किया तथा विश्वासघात करके खाने में जहर मिला दिया, जिसे खाने से दीप चन्द की मृत्यु हो गई।

Scanned with CamScanner

अतः 1666ई0 में दीपचन्द के बड़े राजकुमार भीम चन्द कहलूर रियासत के राजा बने । उस समय उनकी आयु चौदह वर्ष की थी । राजा दीप चन्द के भाई, मानक चन्द को वज़ीर नियुक्त किया । मानक चन्द परिस्थिति का लाभ उठाकर राज्य की सारी आय को घर पर ही वसूल करने लगे[1] । राज्य के पुराने अधिकारियों को बन्दी बना लिया । जब महारानी जलाल देवी को यह पता चला, तो उसने मानक चन्द को राजकार्यों से हटा कर अधिकारियों को मुक्त कराया ।[2]

जब महारानी जलाल देवी ने मानक चन्द को वज़ीर के पद से हटा दिया, तो वह कांगड़ा के राजा के पास चले गये तथा उसे कहलूर राज्य पर आक्रमण करने के लिये उत्तेजित किया। कांगड़ा के राजा ने सरहिन्द के सूबेदार से अनुमति लेने के लिये मानक चन्द को ही उसके पास भेजा । उसने स्थिति को तोड़-मरोड़ कर, सूबेदार के सम्मुख पेश किया। जिसके फलस्वरूप वह कहलूर पर आक्रमण करने के लिये तैयार हो गया तथा कांगड़ा की सेना व मुग़लों की सेना ने मिल कर कहलूर पर आक्रमण कर दिया।

राजा भीम चन्द 12 ठाकुराई रियासतों[3] से सहायता प्राप्त करके, अपनी सेनाओं सहित हटवाड़ पहुंचे । कांगड़ा व मुग़लों की संयुक्त सेनाओं को युद्ध में पराजय का मुंह देखना पड़ा । कांगड़ा के राजा युद्ध में घायल होकर अपने घोड़े से गिर पड़े । सूबेदार भी पराजित होकर वापस चला गया । इस पराजय के परिणाम स्वरूप एवम् राजा भीम चन्द की विजय के कारण राजा का पहाड़ी राज्यों में महत्त्व बढ़ गया ।

राजा भीम चन्द एवं गुलेर शासक:—

राजा भीम चन्द व गुलेर के राजा विक्रम सिंह के आपसी सम्बन्ध सामान्य ही रहे । 1675ई0 में विक्रम सिंह का पुत्र राज सिंह गुलेर का राजा बना । उस समय मुगल सरदार ख्वाजा रज़ा बेग पहाड़ी राजाओं के विरुद्ध दमन करने बढ़ा । तो क्रमशः चम्बा के चत्तर सिंह, गुलेर के राज सिंह, बसोहली के धीरज पाल, जम्मू के कृपाल देव आदि पहाड़ी राजाओं ने भीम चन्द के नेतृत्त्व में मुग़लों का सामना किया तथा पराजित किया। इसी प्रकार जब अलिफ खां ने भीम चन्द को कर अदा करने या युद्ध करने का संदेश भेजा, तो गुलेर के राज सिंह ने भीम चन्द का साथ दिया । इस प्रकार राजा भीम चन्द व गुलेर के राजा राज सिंह के आपसी सम्बन्ध सामान्य ही थे ।

1695 ई0 में राज सिंह के पश्चात् राजकुमार दलीप सिंह गुलेर राज्य का राजा बना। उस समय उसकी आयु सात वर्ष की थी । जिसके कारण चम्बा के उदय सिंह को उसका संरक्षक नियुक्त किया[4]। जम्मू के राजा व बसोहली के राजा ने परिस्थितियों का लाभ उठाकर गुलेर राज्य पर आक्रमण कर दिया ।

उदय सिंह ने कहलूर, सिबा, मण्डी के शासकों से सहायता मांगी तो भीम चन्द ने गुलेर के राजा की मद्द की तथा उसे सिंहासन पर बनाये रखा ? इस तरह भीमचन्द के गुलेर राज्य से सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण थे ।

(1) मियां अक्षर सिंह "वही, पृ0 20,
(2) हचसिन व बोगल, वही पृ0 582,
(3) हचसिन व बोगल, वही पृ0 502,
(4) हचसिन व बोगल' वही, भाग-1, पृ0 205

भीम चन्द एवम गुरु गोविन्द सिंह:–राजा भीम चन्द के गुरु गोबिन्द सिंह जो अपनी शक्ति का आनन्दपुर में संगठन कर रहे थे जिनसे आपसी सम्बन्ध सामान्य नहीं रहे बल्कि दोनों में संघर्ष होता रहा। डा0 मनजीत सिंह आहलुवालिया ने "राजा भीम चन्द व गुरुगोबिन्द सिंह के आपसी सम्बन्धों का विस्तार से वर्णन किया है[1]। इसलिए भीमचन्द व गुरुगोविन्द सिंह के सम्बन्धों पर मैं संक्षेप में ही वर्णन करूंगा।

गुरुगोबिन्द सिंह ने आनन्द पुर को अपनी गतिविधियों का केन्द्र बनाया। उन्होंने आनन्दपुर में दरबार लगाना आरम्भ कर दिया। खालसा का संगठन करके सैनिक शक्ति में वृद्धि की। भीमचन्द कहलूरिया ने इसे साम्राज्य की अखंडता के विरुद्ध चुनौती समझी। राजा ने गुरु से "पेशकश" मांगी परन्तु गुरु ने "पेशकश" देने से मना कर दिया। राजा ने इसके विरुद्ध पहाड़ी राजाओं से गठ बन्धन किया[2]। इसके अतिरिक्त गुरु के अनुयायी सीमावर्ती क्षेत्रों में लूट मार किया करते थे। जिसके परिणाम स्वरुप पहाड़ी राजाओं ने भी भीम चन्द का साथ दिया[3]। अतः राजा भीम चन्द की सेनाओं ने आन्नद पुर को घेर लिया। गुरु को भारी क्षति उठानी पड़ी तथा वह आन्नदपुर छोड़कर सिरमौर के राजा के निमन्त्रणानुसार वहां चले गये। तथा पौंटा को अपनी गतिविधियों का केन्द्र बनाया।

6 अप्रैल 1687 ई0 को भंगानी[4] नामक स्थान पर निर्णायक युद्ध हुआ। पहाड़ी राजाओं को भारी जानी हानि उठानी पड़ी तथा गुरु को विजय मिली। तत्पश्चात भीमचन्द ने गुरु से समझौता करके मुगलो से लोहा लेने का निश्चय किया[5]।

नादौन युद्ध में गुरु ने पहाड़ी राजाओं के पक्ष में मुगलों से युद्ध करके उन्हें पराजय दी[6]। कांगड़ा से लौटते समय गुरु की सेना व 'अलसन' ग्राम (यह ग्राम मण्डी में स्थित डैहर व बिलासपुर की सीमा सतलुज के इस ओर है।) के निवासियों में झगड़ा हो गया। सिक्खों ने शक्ति से ग्रामीणों का दमन किया व लूटा[7]।

भीमचन्द ने मुगलों के विरुद्ध गुरु से सहायता मांगी। फिर गुरु ने निरमोह को छोड़कर जसवन राज्य में बसोहली में आकर अपनी सैनिक शक्ति का संगठन किया। तत्पश्चात् कहलूर की सेनाओं को पराजय दी।

कुछ समय पश्चात् गुरु ने भीम चन्द के विरुद्ध उसके क्षेत्रों पर हमला किया, स्वयं भी आनन्दपुर आ गये। उसके सैनिकों का कमलोट के लोगों ने विरोध किया, परन्तु उन्होंने कमलोट किले को जीत लिया।

इस प्रकार भीम चन्द व गुरु गोबिन्द सिह में लगातार संघर्ष चलता रहा। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि दोनों नायकों में सत्ता स्थापन ही संघर्ष का प्रमुख कारण रहा।

---

(1) विस्तार के लिये देखो।:—डा0 मनजीत सिंह अहलुवालिया, 'सोमसी' अक्तूबर, 1976, । अंक न0. 4

(2) इस गठबन्धन में कृपाल चन्द कटोच, जसोवा के केसरी चन्द, नालागढ़ के हरिचन्द, डढवाल के पृथी चन्द, श्रीनगर (देहरादून) के समीप के फतेह शाह के राजाओं ने गुरु के विरुद्ध राजा भीम चन्द से समझोता किया। विस्तार के लिए देखो गोकज चन्द नारंग, का "गलोरियस हिस्ट्री आफ सिक्खिजम" (देहली, 1971) पृष्ठ 120।

(3) बख्शीस सिंह निजर, "पंजाब अण्डर दा ग्रेट मुगलज" (बम्बई, 1966) पृष्ठ 94।

(4) खजान सिंह "हिस्ट्री एण्ड फिलौसफी आफ दा सिक्ख रिलीजन जि0 I पृष्ठ 168।

(5) ज्ञान सिंह "तवारीख-गुरु खालसा" जि0 I पृष्ठ 40।

(6) गुरु गोबिन्द सिंह वचित्र नाटक" जि0 VIII प0 11–13, ज्ञान सिंह, तवारिख गुरु खालसा जिल्द I (अमरसर 1923–25) पृष्ठ 142 एम ए0 मैंकालिफ दी सिक्ख रिलोजन वाक्सफोर्ड 1909 जि0 I

(7) खुशवंत सिंह "हामेज टू गुरु गोबिन्द सिंह, (बम्बई 1966) पृष्ठ 30)।

Scanned with CamScanner

भीम चन्द तथा हण्डूर

हण्डूर के राज्य से भीम चन्द सामान्य रहे या नहीं ? इसके विषय में हम दृढ़ता पूर्वक नहीं कह सकते क्योंकि हमारे पास कोई ऐसा समकालीन या निकट समकालीन स्रोत नहीं । जिससे दोनों राज्यों के आपसी सम्बन्धों पर प्रकाश पड़ता हो । फिर भी यदाकदा हण्डूर व कहलूर राज्यों के सम्बन्धों का उल्लेख मिलता है । जिससे ऐसा प्रतीत होता है कि दोनों राज्यों के आपसी सम्बन्ध सामान्य ही रहे ।

प्रथमत: जब भूतपूर्व राजा दीप चन्द के भाई मानक चन्द को महारानी ने पदच्युत किया तो उसने कांगड़ा के राजा व सरहिन्द के मुगल सूबेदार को कहलूर (राजा भीम चन्द) पर आक्रमण करने के लिये उकसाया । जब दोनों की संयुक्त सेनाओं ने कहलूर पर आक्रमण किया तो बारह ठाकराई सरदारों के साथ हण्डूर के राजा ने भीमचन्द को सहायता दी ।

दूसरे 1686 ई० में जब लाहौर के सूबेदार ने आलिफ खां को अपना लश्कर बनाकर पहाड़ी राजाओं से बकाया राशि वसूल करने भेजा तथा आलिफ खां ने कहलूर के राजा भीमचन्द को बकाया कर देने या युद्ध करने का आदेश भेजा, तो अन्य पहाड़ी राजाओं के साथ हण्डूर के राजाओं ने भी भीमचन्द का साथ दिया । इसी प्रकार गुरु के विरुद्ध भी सहायता दी । अत: इन विवरणों को ध्यान में रखकर हम कह सकते है कि कहलूर के राजा भीमचन्द व हण्डूर के राजा के आपसी सम्बन्ध सामान्य ही थे ।

भीम चन्द तथा मण्डी

कहलूर राज्य के उत्तर में मंडी राज्य था । वहां पर सेन वंश का राजा राज्य करता था । जैसा कि वर्णन कर चुका हूं कि राजा भीम चन्द की माता मण्डी-राजा की पुत्री थी । इस प्रकार राजा भीमचन्द व मण्डी के राजा से मातृत्व रक्त सम्बन्ध था ।

दूसरे मण्डी व सुकेत राज्य के आपसी सम्बन्ध सामान्य नहीं थे क्योंकि बल्ह क्षेत्र के विषय में दोनो राज्यों में निरन्तर सघर्ष रहता था।[1] परिस्थिति अनुसार अर्थात् जब मण्डी का राजा शक्तिशाली होता, वह तथाकथित क्षेत्र को अपने अधिकार में कर लेता, जब सुकेत का राजा शक्तिशाली होता, वह अपना अधिकार कर लेता । इस प्रकार दोनों राज्यों में बल्ह निरन्तर संघर्ष का कारण बना रहता था ।

राजा श्याम सेन ने इस क्षेत्र को अपने राज्य में मिला लिया था । 1679 ई० में गौर सेन मण्डी का राजा बना उसने भी अपन पिता के विजय कार्य को जारी रखा । 1685 ई० में गौर सेन ने रामपुर बुशहर व कोटखाई के शासकों से गठजोड़ करके कुल्लू राजा बुद्धि सिंह के राज्य पर आक्रमण किया ।[2] कुल्लू के राजा ने भीम चन्द से सैनिक सहायता मांगी । राजा भीमचन्द ने कुल्लू के राजा की मदद की व संयुक्त राजाओं की सेनाओं को पराजित किया था ।

जब भीम चन्द कुल्लू से वापस आ रहे थे तो मण्डी के राजा गौर सेन ने सुकेत के राजा के विरुद्ध सहायता मांगी । भीम चन्द व गौर सेन की संयुक्त सेनाओं ने सुकेत पर आक्रमण किया तथा धनयारा, बेरा व पटरी के गढ़ो को जीत कर मण्डी राजा को सौंप दिये [3]।

---

(1) सर लेपन ग्रीफन, "दी राजाज आफ दी पंजाब पृ० 579।

(2) "मण्डी स्टेट गजेटियर पृ० 37, हचसिन व बोगल
वही पृ० 388 आई० बी० बैनर्जी एबोलेशन आंफ खालसा II (कलकत्ता) पृ० 80।

(3) हचसिन व बोगल 'वही' जि० II, पृ० 287, मियां अक्षर सिंह, वही, पृ० 21

सोमसी

Scanned with CamScanner

इस प्रकार इन घटनाओं से प्रतीत होता है कि भीमचन्द तथा मण्ड़ी राज्य के आपसी सम्बन्ध सामान्य हे जिसके फलस्वरुप ही आवश्यकता पड़ने पर एक राज्य ने दूसरे राज्य की मदद की ।

भीम चन्द तथा कुल्लू

कुल्लू राजा बुद्धि सिंह, भीम चन्द का समकालीन राजा था । 1685 ई0 में जब मण्डी, बुशहर, कोठाई के राजाओं ने संगठित होकर कुल्लू पर आक्रमण किया व कुल्लू के कुछ क्षेत्रों पर अधिकार कर लिया । राजा बुद्धि सिंह ने अपने आपको शिथिल पाकर राजा भीम चन्द कहलूरिया से मदद मांगी । राजा भीम चन्द अपनी सेनाएं लेकर "निरमण्ड" जा पहुंचें तथा संयुक्त राज्यों की सेनाओं को पराजित करके केपू, खेरक्सू, व खेपू के ग्राम कुल्लू के राजा को प्रदान किये । इस प्रकार संयुक्त सेनाओं की पराजय के कारण पहाड़ी राज्यों में राजा भीम चन्द की महत्त्व पूर्ण स्थिति हो गई।

पहाड़ी राजाओं ने भीम चन्द के अधीन संगठित होकर मुगल दरबार को लगान भेजना बन्द कर दिया। जब मुगल गर्वनर ने 1675 ई0 में पहाड़ी राजाओं पर आक्रमण किया तो पहाड़ी राजाओं की संयुक्त सेनाओं के सम्मुख मुगल सेना को पराजित होना पड़ा[1] ।

अब अन्य पहाड़ी राजाओं ने भी जम्मू के "फौजदार" को लगान भेजना बन्द कर दिया एवम् "फौजदार" ने पहाड़ी राजाओं के दमन हेतु लाहौर की "सरकार" से सैनिक सहायता मांगी । लाहौर के सूबेदार ने मियां खां के नेतृत्व में, आलिम खां को उसका सहायक बनाकर, पहाड़ी राजाओं के विरुद्ध सेना भेजी[2] ।

भीम चन्द तथा कांगड़ा:–मुगल सेना कांगड़ा के राजा के विरोध का दमन करने आगे बढ़ी : मियां खां सेना का नेतृत्व आलिफ खां को सौंप कर स्वंय जम्मू चला गया । आलिफ खां ने कांगड़ा के राजा से लगान की मांग की उसने स्पष्ट कह दिया कि वह शाही आदेशानुसार बिलासपुर के राजा को कर देते हैं[3]।" इससे ऐसा प्रतीत होता है कि शायद मुगल सम्राट बिलासपुर के राजा को लगान देते होंगे। परन्तु स्रोत के अभाव के कारण यह निश्चय से नहीं कहा जा सकता कि मुगल सम्राट ने बिलासपुर के राजा को लगान एकत्रित करने का अधिकार दिया था। फिर भी इससे भीम चन्द की महत्ता का अहसास होता है।

कांगड़ा के राजा के निर्देशानुसार आलिफ खां भीम चन्द की शक्ति का दमन करने नादौन आ गया एवं भीम चन्द को आदेश भेजा कि, ''वह लगान अदा करे नहीं तो युद्ध के लिये तैयार हो जाय । अर्थात् आलिफ खां ने पहाड़ी राजाओं के विरोध का दमन करने के लिये राजा भीमचन्द से युद्ध करने का निश्चय कर लिया था ।[4]

---

(1) हचसिन व बोगल वही जि0 II पृ0 205–209
(2) जे0 एस0 ग्रेवाल "गुरूगोबिन्द सिंह ए बायो ग्राफिकल स्टडी" बचित्र नाटक IX, पृ0 85।
(3) मियां अक्षर सिंह वही, पृ 21:
(4) जे0 एस0 ग्रेवाल, वही पृ0 87।

राजा भीम चन्द ने पहाड़ी राजाओं क्रमशः राजा राज सिंह, (1) गुलेर के राजा राम सिंह (2) दूर दूर के राजा (3) जो स्वंय न आ सके, उन्होंने अपने सैनिक दल भेजे, गुरू गोबिन्द सिंह भी मुगलों के विरुद्ध, पहाड़ी राजाओं की सहायतार्थ नादौन की ओर बढ़े[4]।

परन्तु कांगड़ा के राजा कृपाल चन्द ने विश्वास घात करके मुगलों का साथ दिया। संयुक्त पहाड़ी सेना के सम्मुख मुगल सेना को पराजय देखनी पड़ी। मुगलों से यह तय किया गया कि रावी के उस पार का लगान शाही खजाने में जमा करें व इस पार के क्षेत्रों का लगान बिलासपुर आया करें।[5] इस प्रकार पहाड़ी राजाओं ने भीम चन्द के नेतृत्व में संगठित होकर मुगल सेना को पराजित किया।

अतः राजा भीम चन्द ने 1666 ई0 से लेकर 1693 ई0 तक सत्ताइस वर्ष के लगभग शासन किया। भीम चन्द ने पहाड़ी राजाओं से समयानुसार सम्बन्ध स्थापित करके तथा समय व परिस्थिति का उचित प्रयोग करके, पहाड़ी राजाओं में अपनी स्थिति को महत्वपूर्ण बनाया। साधारणतः राजा के गुरू गोबिन्द सिंह व सुकेत के शासक को छोड़ कर अन्य सभी पड़ोसी राज्यों से सामान्य राजनैतिक सम्बन्ध थे। मण्डी हण्डूर राज्यों के राजा से रक्त सम्बन्ध होने के कारण राज्यों के राजनैतिक सम्बन्धों को और भी सुदृढ़ता मिली।

शोध कर्त्ता,
इतिहास विभाग,
हि. प्र. शिमला।

---

(1) आई0 बी0 बैनर्जी, इवोलूप्सन् आंफ दी खालसा", (II, 1972), पृ0 75, (पृ 190 (गुरु विलास 156) हचसिन व बोगल वही, जि0 1 पृ0 205, यह जसवान के राजा थे।

(2) आई0 बी0 बैनर्जी, वही पृ0 81,

(3) जम्मू के पहाड़ी राजा पृथ्वी चन्द डढ़वाल ने सैनिक दल भेजा था।

(4) डा0 मनजीत सिंह आहलुवालिया वही (डा0 आहलुवालिया का लेख पढ़े)।

(5) मियां अक्षर सिंह, वही पृ0 21।

Scanned with CamScanner

माठी अ टअंकू

रामानन्द शास्त्री

महासुई लोक गाथा

हिमाचल प्रदेश के शिमला पर्वतशैला में महासू जनपद है। महासू देवता का नाम है। ऐसा लोक विश्वास है कि महासू देवता काश्मीर के अमर नाथ भगवान शिव का वीर था। महासुई जनपद में अनेक देवगाथाएं और लोक गाथाएं प्रचलित है। प्रस्तुत लोक गाथा माठी और टंअकू (पत्नी और पति) के जीवन की कथा है। यह सति कथा के रूप में इस क्षेत्र में प्रसिद्ध है।

लोक गाथा का पद्यात्मक रूप यहां की भाषा के रूप का परिचायक है और साथ ही लोक विश्वासों और लोकाचार का भी। पहाड़ी पद्य रूप के साथ हिन्दी रूपान्तर हिन्दी पाठकों और हिन्दी समीक्षकों की सुविधा के लिए दिया गया है।

रामूआ बोलू चाकरा मेरी बिशटी वेन्दा ए लाई।
देश दा हाण्डे ला मुलक दा मेरी बिशटी वेन्दा ए लाई।।
बेटी अली बाम्ठण मेरी बिशटी देन्दा तू लाई।
बेटी अली कदेखण मेरी आद न लाई।।
फूली करण फूलड़ू फूल असरी राई।
जान्दे गोआ बअन्दे रामू शड़ी के जाई।।
आवी लाई अ रामूए चाकरे माठी फड़ दी शुण।
सोरे बाई री बाबिआ मुके विसर देअला कुण।।
घाले दे गरजा सिंगला लवाल देअला शाई।
सोरे मामे अ तारा असरिआ पान्जी टअंकू बाई।।
आवी लाई रामू ए चाकरे पोरी बाशली कैंई।
जुगे खाई माठिए साखअ गरअ बसने री तैंई।।
हाण्डी बोली ली मातली पाण्डी समनी दारअ।
कुलटी जैइ आणी पआलीअ माठी खशरी दारअ।।
डाल की वशेन्दरअके झोशी की सुरजअ के सुई।
जेगे चैंई ठाइए आं इस्थीए मुंई।।
बाट बन्दा कलोण्ड रा बन्दा रामे रा माटा।
कोट री बन्दी अ कालिका डोमअ बन्दा अ सनाटा।।
छेवड़ी लाअ खशरी पोरो गलि रो बाण्डअ।
पाञ्जी त काटा अ कड़ेलिए आणी टअंकू ए शांडअ,।।
रोए ना सैंइआ टअंकुआ कोरी ना काला जिअ।
जाणे के आणमी छेवड़ी सोरी बुबी री दिअ।
जान्दे गोए अ माठिए बअन्दे पाण्डी कुफटु के डेबी।
बुबीए विती अ जिपीए माठी पुछणी लाई।
माठिए बोलू वचड़िए तू कैथअ आई।
बूबीए जाणी जिपीए तांव वीअ मांग दी उ आई।
बुबी री चैंई थी वेसव दारअ टअंकू री तैंई।
वेसे गोइअ माठिए तेरे वोए पछाई।
मोथूरे मोथटे जाणी पाइरी साई।
बारअ माशे री मुंगड़ी तिने सोथे री विती पाई।
बारअ माशे री मुंगड़ी बुबीए ठारअ रूपीए री वेऊं।
सेजी त डेबी खबर तिन मोथटे रे काने।
एजी विते बात गे तिने आपु बिचे ताने।।

टग्रंकू अपने नौकर रामू को कहता है कि वे देश देशान्तर में जाकर मेरी शादी का प्रबन्ध कर ले । अगर लड़की देखने में सुन्दर होगी तो अवश्यमेव मेरी शादी की बात करना अगर लड़की बदसूरत होगी तो मेरा नाम न लेना ।

फूलों के खिलने के मौसम में राई नामक एक फूल फूलता है और ऐसे समय में रामू शड़ी नामक स्थान की ओर चला जाता है। रामू नौकर ने माठी के साथ टग्रंकू की शादी की बातें लगाई तो माठी मकान की बाच वाली मंजिल (फुड़) में सुन रही थी। और अपने पिता से पूछती है कि भाई मुझे गालियां कौन दे रहा है ।।

माठी बोलती है कि तारु और सरिश्रा मेरे मामे हैं और पाज्जी एवं टग्रंकू भाई हैं । जब रामू नौकर ने टग्रंकू की तारीफ करनी शुरू की तो माठी कुछ बेहोश सी हो गई। रामू बोलता है कि माठी घर बसाने के लिए रिश्ते खाए जाते हैं। एक तरफ मातली नामक स्थान है और उसके सामने धार का गांव है। और माठी की शादी बिल्कुल विधिवत् इस प्रकार हुई जैसे नहर को लाया जाता है। शादी होने पर माठी ने पहले अग्नि देवता को प्रणाम किया और प्रातः सूर्य नारायण देवता से वहीं मरने की कामना की। कालिन्द के ब्राह्मण को पुरोहित होने के नाते प्रणाम किया साथ में देव भूमि रामा की वन्दना तथा कोट की काली तथा डोम देवता गुठाण को प्रणाम किया धार वासियों की पत्नियाँ माठी को गाली गलोच देती हैं। कहती है कि टग्रंकू के भाई पाज्जी को कढ़ैल वालों ने काटा है और उसने बांझ औरत लाई है। माठी कहती है कि हे पति देव! आपने रोना धोना नहीं और ना ही दिल को उदास रखना। मैं आपकी दूसरी शादी बुआ की लड़की से करांऊगीं। माठी सौत के प्रबन्ध के लिए अपनी बुआ के यहां कुफटु में पहुंची। बुआ जिपी ने माठी को पूछना शुरू किया कि हे माठी तू कहां से आई है? माठी बोलने लगी कि हे बुआ जी मैं आपसे आपकी पुत्री बैसरू को मांगने आई हूं। यह लड़की धार गांव के टग्रंकू के लिए चाहिए। जिपी बुआ बोलने लगी कि हे माठी तू दो दिन देर से आई है। इस लड़की बैसरू की मंगनीं (चमरोत) के मोथू के लड़के के साथ हो गई है। उसने बारह माश की सोने की मोंगड़ी सौभाग्य द्रव्य के रूप में दी है। माठी बोलती है कि बुआ जी उसके बदले में अठारह रूपये देती हूं। ये बाते उन मोठू के लड़कों के कानों में पहुंची इसी बात पर वे एक दूसरे को ताने देने लगे।

मोशु रे छिव मोचटे पाए कलरू दे डोल।
अपु नंई डोम लाबए अरिए जाणे नंई मोशुए मोक।
रोए ना सैंइआ टअंकू आ कोरे ना काअला जीअ।
जाये के आणमी छेवड़ी तांके मामेरी वीअ।
माठीए गोई टअंकू री तू उवी जल के जाई।
मामे वीती धोगिए परी पुछणी लाई।।
माठीए बोलू वाणजी तू केथअ आई।
मामेआ बोलू तांके धोगिआ तांद वीअ मांगवी आई।
तेरी चंई वीअ दारअ टअंकू री तेंई।
प्रअड़ी सीके ली माठिए मेरे लाइअली थापे।
काटिअ ली दोते वाणिजिए पीठिअली मुन्दी लाग ली पापे।
करू ना काणआ मामिअ कोकी-कोकी री कल।
एकीए चाणि मी पकाअयी दुजीए लामी जल।
देखा नेंई काणिआ मामिआ तुंए दारअ रा चाला।
एणि बांअ द आणीद कुलटी कांडे डाल अदा नाला।
छीश डोअंदी नौकरअ चाकरअ काम करदी कोली।
वोगड़े नाज वीचे खाई तिन्दी बाअू री बथोली।
डुंगे जाणी रअ दो पोरो पाड़ी माछी के जाल।
घोड़े नेंई पलथी अुदी नेंई ठाकरअ के डाल।
देस देखो अ मुरअत शोदिअ देखा सवार।
कुलटी जंई आणीअ पअालिअ एअे खअरी दारअ।
माठिए लाई टअंकू री शड़ी डेअणे री बाई।
बाई त थाका अ आदमअ तैस निशदे जाणेअ डेई।।
बान रो जाणी हलटू अंदी मअरू री टेवी।
दोने जाणी दोअरी पांडे शड़ी के डेवी।
कांसे री एथो कटोरिए बीले शाणिअ लो घोअ।
साऊत आजा अ टअंकू मेरे रंजीअ ला जीअ।।
खोड़ री जाणिला छेंइवा पोरा वाशदा अ काअ।
खोरे जाणी ली दपअरे मेरे गरे आअली गाअ।
परी डेवे दाइए गरअ के आजली सुइव गाअ।
दअंकी पअंकी माठिए तू गकअ के आई।
हूंजे देस टअंकूआ तू गरअ के गोआ आई।

मोथू के लड़के लड़ाई के लिए तैयार होने लगे वो ढालों और तलवारों को तैयार करते हुए बोलने लगे कि तारू और सरिए ने चान्दी नहीं कमाया और हमारे बाप ने केवल पशु नहीं चुगाए। माठी टम्रंकू को बोलती है। कि हे पति देव! आप चिन्ता बिल्कुल न करें औलाद के लिए मैं आपकी शादी अपने मामें की लड़की से कराऊंगीं। इसी बात पर माठी अपने मामें के घर जल को चली गई। मामा धोगी ने उसे पूछना आरम्भ किया कि माठी भानजी तू कहां से आई है। माठी ने अपने मामे को कहा कि मामा जी! मैं आपसे आपकी पुत्री मांगने यहां आई हूं। अर्थात् मैं आपकी पुत्री को अपनी सौत के रूप में ले जाना चाहती हूं। आपकी पुत्री धार ग्राम के मेरे पति टम्रंकू के लिए चाहिए। मामा ने बोला कि हे माठी तू यहां से हट जा नहीं तो कहीं मैं तुझे थप्पड़ न मार बैठूं। क्यों कल (भविष्य) सौत के रूप में तुम आपस में लड़ मरो तो मुझे पाप लगेगा। माठी बोलती है कि मामा जी हम एक दूसरे से नहीं लड़ेगीं। अगर एक रोटी पकाएगी तो दूसरी आंच लगाएगी। आगे बोलने लगी कि मामा जी आपने धार का अचम्भा नहीं देखा जहां पर एणी बांम नामक बावड़ी कुल्ह लाई गई है और काण्डे नामक स्थान पर नलका लगा हुआ है। पानी लाने के लिए नौकर चाकर हैं और काम करने के लिए हरिजन लोग हैं। खान पान में रूखे अनाज के रूप में उनके घर में बिथू की रोटी खाई जाती है। गहरे पानी के स्थान से मछलियां लाई जाती हैं। सिर्फ घोड़ा पालकी और राजाओं जैसी सलाम नहीं। फिर दिन महूर्त को देखकर सोमवार को शादी निश्चित कर दी। जैसे कुल्ह को साफ करके लाते हैं वैसे ही खश धार में लड़की को लाया। कुछ दिनों बाद माठी ने शड़ी जाने की जिद की बोलने लगी कि मेरा भाई आदम काफी सख्त बिमार है। उनको पूछने जाना पड़ता है। उनके घर के सामने एक बान का हल था जिसमें भौरू की टेवी लगी हुई थी। अब पति-पत्नी दोनों शड़ी को गये। साले के घर पर कांसे की कटोरी के मुख पर घी जमा हुआ होता है। आदम बोलने लगा कि आज टम्रंकू जीजा आया हुआ है मेरा दिल कुछ कम हो रहा है। आदम के घर के सामने अखरोट का पेड़ था जिसमें एक कौआ बोल रहा था। माठी बोल रही है कि दोपहर के समय मेरे घर पर दूध देने वाली गाए आयेगी। आदम बोला कि हे बहन तू घर चली जा तेरे घर पर मामें आयेगी। जल्दी-जल्दी माठी अब धार को पहुंच गई।

दूसरे दिन टम्रंकू घर आ गया।

बाटले री जूंडी वालवो हाथे करी रेऊशश्र रा छिटा।
नाल वा श्राजा तू रइच तेथा सिंगला मिटा।
विश्रा त मिटा तू सिंगला तेगा गोश्रा रई गरे।
नाथ जाणी मेरे तेगे पांश्र तू थीऊ इथिए मरे।।
मेरे नैंई जाणि दू बाइश्र दशा कैरी श्र श्राश्र।
खूटी वी लागी श्र वेदणी लागी मुण्ड श्र वी मंडाव।
श्रांश्रला जाणी तू बुम्बला गोश्रा मावरी श्राई।
बुबिए बुलूमा काणी वेंवी मान्दरी छवाई।
बेगे लागी काणिए वेदणी एवे मरीश्र मेरे।
दारश्र क करदी पता एवे मरीश्र मेरे।
खोड़री जाणी डालिए करश्र कुखू कैंई।
जेबी लाग मेरेश्रा वेदंणी तेवी मरीदे नैंई।
खशरी लागीश्र दारश्र परी लाम्बड़ी धाश्र।
सरिए रा थाका श्र टश्रंकू हून्दे थागदे श्राश्र।
थागिश्रा श्राणा तुन्दलीश्र एथा श्रागवी दारश्र।
दाईश्र बोलमा बाईश्र मुं भूईन्दे तुयें छाड़श्र।
नानू री दिशी उबी डिमड़ी बापू सरिए रे गरश्र।
वेगी लागी श्र माठिए वेदणी एबे टश्रंकू इथिए मरश्र।
तिनकश्र री रातड़ी उखे बेखीए बैंई।
माठी जाणी ली टश्रंकू री कलीण्ड गाई डेवी।
बाश्रटा बोलूमी वमणा टाले पतरी तू पाशा।
शऊर रा थाका लिलका तू पाड़े ला पाशा
दूजी त जाणी ला छेवंड़ी रा बड़ा कश्रड़ा गरंश्र।
शिररा वेशा शणशरश्र बेशा परश्र रा राश्र।
मुठी रा मंगलश्र, जो कदी वंश्रा न जाश्र।
तेथरी चाली तू माठिए डेवी नानू रे गठाणश्र।
डलकी बाजी ली डाकली साथी बाजी लो बाश्रण।
किन्दे नानू रे मश्रते किन्दे नानू रे बडारी।
नानू त जाणी श्राजीऊ पूछदी देंदे पश्रल गवाड़ी।
नानू रे श्राजे श्र मश्रते श्राजी गोए बडारी।
नानू री जाणी पश्रल एबे दिती श्रगवाड़ी।

Scanned with CamScanner

लोग देसी बैलों के जोड़ों को हल लगाने के लिए तैयार करते हैं और रेउंश की छड़ी हाथ में लेते हैं। रइच के नाले में एक शेर दिखाई दिया। टम्रंकू बोलने लगा कि हे शेर तू ठीक पैदा हो गया परन्तु मेरा वरछा घर पर गया है। नहीं तो तू यहां पर ही मर जाता (मेरे हाथ से तू अवश्य मरता)। मैं यह नहीं जानता कि दुर्भाग्य का शिकार आदमी कैसे बनता है। मेरी टांगों में तथा सिर में बड़ा दर्द हो रहा है। इसी हालत में टम्रंकू ढीला ढाला सा माहोरी में पहुंच गया और वहां पर अपनी बुआ को उसने बोला कि हे बुआ जी! मेरे लिए मान्दरी (शय्या का वस्त्र विशेष) बिछा दो। मुझे बहुत दर्द हो रहा है और मैं मरा जा रहा हूं। तू घर को पता कर कि मैं बिमार हूं और मरा जा रहा हूं। सामने अखरोट के पौधे में कुकु शब्द कर रहा था और उसकी बुआ बोलने लगी कि जिस समय दर्द लगता है उसी समय मरा नहीं जाता। धार को आवाजें लगाई गई (अर्थात् मौखिक दूरभाष का प्रयोग किया गया)। बोला गया कि सरिए का पुत्र टंम्रकू बीमार है उसे उठाने के लिए नीचे आओ। उसे उठाकर और सहारा देकर धार के नजदीक लाया गया। वह अपने ग्राम वासियों को बोलने लगा कि मुझे कन्धे पर से नीचे रखो। क्योंकि मैं यहां से डोमेश्वर का मन्दिर और पिता सरिए का घर देखना चाहता हूं। अपनी पत्नी को बोलने लगा कि मुझे बड़ा दर्द हो रहा है और मैं यहां ही मरा जा रहा हूं। उस दिन की रात उन्होंने उठते बैठते ही गुजारी और सुबह होते ही टम्रंकू की माठी कालीन्द चली गई और वह पर पुरोहित को बोलने लगी कि तू पाशा और जन्त्री निकाल। ससुर का प्यारा (टम्रंकू) दर्द के मारे मरे जा रहा है। ब्राह्मण ने बोला कि दूसरी औरत के तेज ग्रह हैं। उसके तो सिर पर शनि, पांव में राहू और लग्न का मंगल भी नेष्ट कारक है इसका निष्फल होना अति कठिन है। वहां से माठी सीधी श्री डोमश्वर के गुठाण के लिए रवाना हुई। जहां पर ढोल-नगारे और बाणा नामक वाद्य बज रहे थे। वहां पर वह पूछने लगी कि श्री डोमेश्वर के महते और भण्डारी कहां गये हैं। मैं डोमेश्वर को पूछने आई हूं उसका दरवाजा खोल दो। अब इतनी देर में डोमेश्वर देवता के महते और भण्डारी आ गये और श्री डोमेश्वर के मन्दिर का मुख्य द्वार खोल दिया।

नानू त हिगरा गठाण रा परी डली शीर री श ।
सरिए रे जाणी टग्रंकू क मेरा नेंई कियें बी वोश।
नानू ग्रा करेला गठाण रे ग्रा वोए दो ग्ररू री गीण ।
नाने व वेग्रमी जातर देमी खेची री खीण।
हिगराव नानू गठाण रा लागा ग्राशुए रोन्वा।
सीटे वात ग्र रा चावल् बेटा सरिए रा नेंई ग्रोन्वा।
बेटा जाणी सरिए रा कूते रइच ग्रे खाईं।
ग्रटी गोई ए माशिए तू वारग्र के ग्राई।
बेद्दी लागि ग्र मठिए बेवणी एवे मरीग्र ग्रटे मेरे ।
जबे ग्रोली सांइग्रा तेग्ररी तबे मासती जलूमी साथे तेरे।
शड़ी द विशी समनों पाडों मतेणे रो ठारू।
ठोगी ना मुंवी वणीए रे जेऐं वारू ।
वणीं ऐं खाए तीयें वूबीए ग्रापणो काईं।
छई कीश मतेणी दी एरी लजया लाई।
जलाई री ग्रांवी वाणजी घकरेइक री जाई।
रखवी वी तेरी रचोली री साके खेलबी ग्राई।
तुऐं त जाणी टग्रंकुग्रा परे तर्जी रे पराण ।
कोलिग्रा मेरीं ग्रा जारूग्रा करें शड़ी के जाण।
शखरेरा मरा ग्र चान्दला माठी मासती चार्ली।
कोली त मोग्रा जारू शड़ी के पाण्डा डेवी।
माठी रा जाणी कोलटा केथिग्र गोग्रा ग्राई।
मेरे नेंई वोलीद्रू दणीग्रा मेरे गई जीवटी काली।
टग्रंकू मुग्राग्र सरिए रा माठी मासती ग्र चार्ली।
ग्राजी त गोए मतेणिग्र फाड़ो रइच वें थाण।
सारी शीलीं हामें फुक में वची जेलो नानू रो गठाण।
कुण कड़ा कारग्र खमिग्रा जो मारे जीकन्दे जालक।
माजी त मोए मतेणी इत्थे खग्र री जाणी वारग्र।
डालिए जाणि तरारीए पोरे भरिई सरिए रे गरग्र।
वाईग्रा बोलू मी ग्रादमा कैंइ ग्राजे ग्रगुण्डे जेऐ काट वे इते।
कोंई नेंई रइ तुंग्र दीग्र घेग्रणी रे वाण्डे ग्राणने री चिते।
माठी री जाणी थी गरग्र जिन्दी थी फेरग्रदी डाफी।

Scanned with CamScanner

गुठाण के देवते का गूर मिटने लगा तो सिर के बाल एक दम खुल गये। बोलने लगा कि सरिए के पुत्र टम्रंकू के लिए मेरा कोई खोट नहीं माठी रोते रोते बोलने लगी कि हे डोमेश्वर! पति-पत्नी के ऊपर दया कर। अगर मेरा पति ठीक होगा तो मैं ससुर से जातर दिलाऊंगीं स्वयं जगराता दूंगी। मिटे देवता के गूर की आंखों से आसुग्रों की बौछार लग गई। पके भात का जैसे चावल नहीं बन सकता वैसे टग्रंकू भी अब बच नहीं सकता। उसको रईच के भूत ने खा लिया। अब माठी वापिस धार को पहुंच गई। टग्रंकू माठी को बोलने लगा कि माठी मुझे बहुत दर्द हो रहा है मैं मर रहा हूं। माठी बोलती है कि अगर पति देव! आप मर जाते हैं मैं सती हो जाऊंगी। शड़ी से ठारू की धार दिखाई देती है। और टग्रंकू कहता है कि माठी तूने मुझे बनीऐ की तरह नहीं ठगना। जैसे उसने बारू को ठगा। माठी बोली पति देव! उसने अपने सभी भाइयों को खाया है। और 26 मतैणी को लज्जित किया है। और मैं जल वालों की भानजी और घकरइक खानदान की पुत्री हूं और तुम्हारे रचोली खानदान के यहां एक महान काम करने आई हूं। ऐसा कहते कहते टग्रंकू के प्राण पखेरू उड़ गये। माठी ने अपने नौकर को कहा कि हे जारू! तू शड़ी के लिए चला जा और वहां पर कहना कि मेरे ससुर का प्यारा मर गया है और मैं सती होने चली हूं। इसी बात पर जारू बेचारा शड़ी के लिए चला गया और वहां पर माठी के चाचा जी ने पूछा कि माठी के नौकर तू कहां से आया है। वह बोला कि मालिक मैं बोल नहीं सकता मेरी जीभ रुक गई है और धार में सरिए का पुत्र टग्रंकू मरा है माठी सती होने चली है। वैसे ही मत्याणा वासी इकट्ठे होकर रइच नामक नाले में बैठ गये हैं, साथ क्रोध में बोलने लगे कि अगर हम सारा शिली परगना जला दें तो भी गुठाण बच जाता है। ऐसा कौन राजपूत है जो हमारी जीवित लड़की को जलाने के लिए तैयार है। आखिर में मत्याना निवासी धार में पहुंच गये हैं। उनके हाथों के ढाले तलवारों से सरिए के घर भर गये। उनके आने पर माठी बोलने लगी कि भाई आदम! यहां शस्त्र लेकर किस की बलि देने आये हो। तुम्हें लड़की का हिस्सा लाने की याद क्यों नहीं रही? माठी के मकान के चारों तरफ बरामदें में डाफियां (संलग्न बैंच) थीं।

बोले ना दाई ए माठिए तेरा जीग्रंदा ग्रसु ग्राफी ।
टग्रंकू गोग्रा झांगवी एबे तुऐंका करणो किग्र।
बैंशी द रोई तंग दी जागी दे कुगुरु री दिग्र।
ग्राणी द तेरे छेंवड़ी पोरी जाई ददीग्र बिन्दी।
ग्रोरो करे बोलिग्र ग्रां तेरे पाणी उ किन्दी।
काका त हाण्डला बगसा सारो ग्रांगणो जुल।
साबासे मे ऐए माँ ए चने तारे री तुंए दो कुल।
तंग दा हाण्डला बगसा सारो ग्रांगणो ग्राल ।
इत्थे नेंई ग्रकदे बाई उबे दिमग्र मूल के चाल।
जुणगे री जाणी थी राणी सैं ग्राजी द एत्थी दारग्र।
जोली ना दाइए माठिए तां देमी करझदी दारग्र।
मामेरा मुंग्रा ग्र बाण्ठिग्रा किन्दी पाऊ तेरी दारग्र।
एबे नेंई ग्रटदी राणीए देग्र भाग्र रूपीग्रा कोएँ जारग्र।
गठाण रे जाणी तुरुटुए दिता चुड़िग्र बैंग्रणे रा टाम्बा।
मसरु री वाम्बी ग्र ठालकी साथी चोगा बामा ग्र लाम्बा।
पाछे ग्राणी लोग्रा था मोड़दा ग्रागे माठी थी नाचग्र।
पता नेंई लाइन्दा जे मरीग्र माञ्छ किरखे ग्र रा चग्र।
रामे री लेगा सेरी दा पोरा माञ्छ रा तादा।
मिऊ त बोलो ला जागरु रा एबे ग्रां किन्दा ऊ जान्दा।
नाचदी लागी ग्र माठी बाई एबे पोरो बोल ला मिऊं।
ग्राबली नाचले माठीए चोड़े ना खारी रे गौंऊ।
डेवंदे गोए ग्र बग्रंदे डेवे संउए उबे काण्डे।
देव नानी रे शड़ी खे दिशी थ वांगले पाण्डे।
ग्रोरी त ग्राण ले बाईग्र तुंऐ गंऊचरी मंगाली।
बाई त जाणी ग्रादम री मुंडकी तिंदी देखी भाली।
माठीए जाणी तिएं मासती बोली री किए बतावी।
बाई ग्रा बोलू भी ग्रादमा तू बी केरखा ना डेवी।
बालदी थी जुण्डी एथे जिन्दे थे दोबे ग्रकुजी।
माञ्छ रा जाणी बे तान्दा मड़वी गे गोग्रा पुजी।
केलो री जाणी कोठड़ी बाइग्र परी बरी ली गीवे।
बीच दी बेशी ग्र माठी कोली दा मुड़दा कीए।

Scanned with CamScanner

उसका भाई आदम बोलने लगा कि बहिन माठी तूने सती नहीं होना तेरा भाई मैं स्वयं जीता हूं । टम्रंकू मर गया है अब तुमने क्या करना है तुमने बरामदे में बैठ कर कुगुरू की लड़की की देख भाल करनी। माठी बोलने लगी कि भाई तेरे पत्नी भी है और लड़की पैदा हुई है। तू मुझे बता तूने मेरा क्या करना है । माठी के चाचा बगसा बरामदे में चल रहे थे और सारा आंगन हिल रहा था बोले शाबाश माठी तूने दोनों कुल तार दिए हैं फिर भी बगसा चाचा बरामदे में चल रहे थे । मत्याना वासी अधिक संख्या में आये हुए थे और बोले कि यहां स्थान कम है ऊपर मन्दिर के नीचे चलो। जुनगा की रानी साहिबा धार में आई हुई थी। वह माठी को बोलने लगी कि माठी तूने जलना नहीं मैं तुझे सारी धार की जगह देती हूं। उसने बोला कि पति के मरने पर आपकी धार भूमि का क्या करूंगी। अब मैं नहीं मानती चाहे कोई हजारों रूपये क्यों न दे। गुठाण के तुरियों ने शोक वाद्य बजाना आरम्भ किया माठी ने रेशमी कपड़े पहने और एक लम्बा सा चोगा भी पहना। पीछे मुर्दा को लाया जा रहा था आगे-आगे माठी नाचते-नाचते जा रही थी। माठी सोचने लगी कि मरने के बाद कहां गुम हो जाते हैं। धार में रामा नामक भूमि खण्ड के आदमियों की भीड़ लगी। जागरू का पुत्र मिऊं बोलने लगा कि अब मैं कहां जाऊं क्या करूं। माठी नाचने लगी और मिऊं बोलने लगा कि हे माठी तू धीरे-धीरे कम नाच मेरे गेंहूं को नहीं तोड़ना। जाते-जाते वह आखिर काफला सीधे-सीधे स्थान काण्डे में पहुंच गया। देवी माहेश्वरी के मन्दिर और बंगले वहां से दिखाई दे रहे थे। माठी बोलने लगी कि कृपया तुम गो मूत्र की थाली ले आओ उसने माठी के भाई आदम का सिर काटा हुआ देखा और माठी कुछ बताने के लिए तैयार हुई । भाई आदम ! तूनें एक सप्ताह में कहीं बाहर नहीं जाना। बैलों की जोड़ियों में सफेद और लाल बैल दिखाई दे रहे थे। आखिर में आदमियों की भीड़ शमशान घाट पर पहुंच गई। देवदारू की बनी हुई सन्दूक कोवी से भरी गई थी। उस सन्दूक के मध्य में माठी बैठ गई और गोद में मुर्दा लिया।

बीशु के जेए खणेटीए माञ्छ पोरे जाणी देशी परदेशी ।
तू बी जाणी माठिए बीच एली बी गोई ए काणीए बेशी ।
मरने जीवणे लोगुश्र श्रापणे श्रापणे श्र बाईश्र पोरे बागश्र ।
उपली लाने के तेथी जाली री जाणी बाई श्र पोरी श्रागश्र ।
ढोल बाजी नगारदु पोरो वाजी लो थिउ एबे वाणो ।
वाजिग ले श्र वाजिणे उबो काणिए सरिग बी श्र रणो ।
श्रागी री लागिश्र लपटश्र जेरी मीठे जेई चाटदी पोरी जीवश्र (जिह्वाएं) ।
एल त लागिश्र बाईश्र जलदी जेंई वेखिश्र माञ्छ थे जीवश्र (कमाना) ।
श्राजे व जाणी मांछ लोगुश्र मुण्डे हाथ लाइश्र थे बेशी ।
एली री काणिए श्रागिए पाण्डी वगसेरी शड़ी थी दिशी ।
श्रागी दो जाणी वे पोरो पाड़ी लो तं काणिश्रो घीश्र ।
जुगे जुगे चेंई नारण रए कट्ठे दोए दोश्ररू रे जीश्र ।
पलकी जाणी थी छेवड़ी गीणे जीन्दी मासती थी जल ।
एबकी जाणी जे छेवड़ी गीणे नेते भस्मे दी वी डर ।
वाट री श्रारटी जीणे पोरी भरवी इ काणिए पीते ।
रोणे श्राज लो घेश्ररू जबे श्राज दो दोश्ररु चीते ।
बगसा जाणी थे सरीश्रा देश्र थे श्रोरे पोरे एबे फेरे ।
एली त देखीश्र वश्र थे तिनरे जिश्र चिरे ।
जांश्र तेंई श्रा माठिए गंगा जमना उबे सरिग दे तंई तारे ।
तांश्र तेंई श्र माठिए तां लोग करि लोश्रले सारे ।
जांश्र तेंई माठिए दरश्र री जमीनड़ी लोई ली बाई ।
तांश्र तेंई माठिए दुनिए दी तू लई ली काणिए गाई ।
मासती जाणी जलीश्र लाए मतेणी दे कुंभो रे टिखे ।
सदा छेड़े सदिए नारणा तिन दोंए दो श्ररू सरिग दे सुखे ।
जलिश्र मुकी श्र लाकड़ी जलीश्र मुकी श्र चिता ।
सवा करली माठिए चिते तू जेरी राम री सिला ।

वहां मेले के लिए इकट्ठे हुए देसी और परदेसी सभी आये हुए थे। माठी बीच चिता में बैठ गई और सोचने लगी कि मरने जीने के लिए अपने-अपने भाग्य होते हैं। चिता को आग लगाने के लिए अलग रूप से आग जलाई गई। ढोल-नगारों और बाणों पर शोक बाद्य बजने लगे जिनकी ध्वनि से आकाश गूंज उठा था। आग की लपटें मीठे पदार्थ को चाटने के लिए लालायित जिह्वाओं की तरह उठने लगी। जब चिता जलने लगी तो उसको देख कर आदमी काम्प उठे। उपस्थित लोग सिर से हाथ लगाए बैठे हुए थे। और चिता की रोशनी से बगसे चाचे की शड़ी दिखाई दे रही थी। चिता की आग में पुनः पुनः घी डालना शुरू किया। लोग कामनाएं करने लगे कि हे भगवान् यह जोड़ा सदा इकट्ठा रहे। पहले कि औरत सती बन कर जला करती थीं परन्तु आजकल की औरतें गर्म राख से भी डरने लगी हैं। रास्ते में खुमानी का पेड़ फलों से भरा हुआ उन्होंने देखा था। लोग बोलते हैं कि जब वे याद आते हैं तो रोना आ जाता है बगसा और सिरया इधर उधर घूम रहे थे। चिता को देख कर उनके कलेजे जल रहे थे। जब तक माठी पृथ्वी पर गंगा यमुना और आकाश में तारागण होगें तब तक तुझे सभी लोग आदर से याद करते रहेंगें। जब तक धार की भूमि जोती जाती रहेगी तब तक माठी तेरे गीतों को लोग गाया करेंगें। सती के रूप में जल कर उसने अपने मायके के लोगों का आदर बढ़ाया। हे भगवान इन दोनों को सुख प्रदान करना। लकड़ियां जल कर समाप्त हो गई। चिता जल कर खत्म होगई। हे मासी! तुझे राम की सीता की तरह लोग याद करते जाएंगें।

राजकीय उच्च विद्यालय
हिमरी (कोटखाई)

मैं अपने देश में बच्चों के लिए यह जरूरी नहीं समझता कि वे अपनी बुद्धि के विकास के लिए एक विदेशी भाषा का बोझ अपने सिर पर ढोएं और अपनी उगती हुई शक्तियों का ह्रास होने दें।

—महात्मा गांधी

लाहुल की बोलियां

—बलराम

जिला लाहुल-स्पिति का कुल क्षेत्रफल 12,210 वर्ग किलोमीटर है जिस में से लाहुल का कुल क्षेत्रफल 1764 वर्ग मील है। बोलियों के हिसाब से लाहुल को हम तीन प्रमुख भागों में बांट सकते हैं। (1) रंगलोई (2) भागा घाटी, और (3) चङ्गस।

1. रंगलोइ अर्थात् चन्द्रा घाटी:– बारालाचा जोत के दक्षिण-पूर्व से लेकर चन्द्रा और भागा नदियों के संगम तक के इलाके को स्थानीय लोग रंगलोई कह कर पुकारते हैं। खोक्सर इस घाटी का प्रथम गांव है। बारालाचा से लेकर खोक्सर तक का इलाका, जो कि लगभग 72 किलोमीटर है, पूर्ण रूप से वीरान है। रंगलोई घाटी चार कोठियों से मिल कर बनी है और वे हैं। (1) खोक्सर, (2) सिस्सू, (3) गून्धला, और (4) गौशाल। गौशाल रंगलोई घाटी का ही नहीं अपितु सारे लाहुल में सब से बड़ा गांव है। खोक्सर पंचायत की स्थापना अक्तूबर 1945 में की गई थी। खोक्सर तक की घाटी बहुत तंग है और कई-कई स्थानों पर तो चन्द्रा नदी के दोनों ओर की पर्वत मालाएं आपस में हाथ मिलाती हुई सी जान पड़ती हैं। खोक्सर से गून्धला तक, दो-तीन जगहों को छोड़ कर, केवल नदी के दाहिने ओर ही लोग बसे हुए हैं, क्योंकि इस ओर घाटी कुछ खुली है। गुन्धला से आगे नदी के बांई ओर की घाटी भी खुल जाती है।

इस घाटी की बोली का नाम "तिननी" है। डा0 जे0 ऐ0 ग्रीयरसन ने (Dr. J. A. Grierson) लाहुल की बोलियों को तीन भागों में बांटा है और उन्होंने उनका नाम "बुनन", "मनचाती" और "तिनन" रखा। भागा घाटी में बोली जाने वाली बोली का नाम "बुनन", पट्टन घाटी में बोली जान बोली को "मनचाती" तथा चन्द्रा घाटी की बोली को उसने "तिनन" नाम दिया। परन्तु यह नाम संस्करण उपयुक्त नहीं जान पड़ता। इनके स्थान पर अगर वे क्रमशः "गारी" "पट्टनी", तथा "तिननी" अर्थात् स्थानवाचक नाम रखते तो अधिक उचित होता। उदाहरणतया यह "बुनन" क्या है और क्यों उसने "गारी" बोली के स्थान पर "बुनन" शब्द को प्रयोग में लाया? कहीं उसने यह शब्द बारालाचा जोत के उत्तरी दिशा सें उदगम होने वाली "युनेन" Yunan नदी के नाम से तो नहीं लिया है? और इसी प्रकार से चन्द्रावादी वाले लोगों की बोली (अर्थात् तिननी) को "तिनन" बोली कह कर पुकारना भी युक्ति संगत नहीं लगता। क्योंकि तिनन तो चन्द्रा घाटी के एक गांव (गून्धला) का स्थानीय नाम है, परन्तु "तिननी" बोली तो खोक्सर से लेकर दालांग गांव (दूरी लगभग 17 मील) तक के लगभग सभी लोग जानते और बोलते हैं।

"तिननी" अड़ोस-पड़ोस की बोलियों के शब्दों को सहर्ष अपनाने का एक अदभुत चित्र प्रस्तुत करती है, क्योंकि यह "पट्टनी" "गारी" और "तोद", जिनका हम अभी वर्णन करेंगें, इत्यादि बोलियों का एक ऐसा सुंमधुर सम्मिश्रित रूप है जिसका अन्यत्र उदाहरण मिलना अगर असम्भव नहीं तो कठिन जरूर है। अब चूंकि इस बोली का अपना कोई निश्चित रूप नहीं है अतः पट्टन और गारी घाटी के लोगों को भी इसे समझने में कोई विशेष कठिनाई नहीं होती है। "पट्टनी" और "तिननी" बोलियों में कई शब्द ऐसे भी हैं जिनका मतलब दोनों बोलियों में

अलग-अलग है हालांकि शब्द वही हैं। उदाहरण के लिए पट्टनी बोली में एक शब्द है "मैचा" जिसका अर्थ होता है 'पत्नि'। परन्तु इसी "मैचा" शब्द का तिननी बोली में अर्थ होता है "औरत"। इसी प्रकार से पट्टनी बोली में "गग्स" शब्द का मतलब 'पति होता है, जबकि तिननी में इस शब्द का मतलब 'मर्द' होता है।

2. भागा घाटी:– बारालाचा जोत के दक्षिण-पश्चिम से लेकर कारगा मैदान तक के इलाके को भागा घाटी कहा जाता है। दारचा, जो कि योचे नाला और जंस्कार नदी के संगम पर स्थित है, इस घाटी का प्रथम गांव है। इस गांव तक कोई आबादी नहीं है। दारचा के बाद जाकर ही यह घाटी कुछ खुली हो जाती है चन्द्रा घाटी की तरह भागा घाटी के भी दाहिनें ओर ज्यादा लोग बसे हुए हैं। कोलोंग, जो कि ज़िला का मुख्यालय भी है, इस घाटी का सब से बड़ा गांव है। भागा घाटी को हम फिर दो भागों में बांट सकते हैं, और वह हैं, (1) तोद् घाटी और (2) गारी घाटी। दारचा से लेकर कोलोंग तक के भाग को तोद् घाटी तथा कोलोंग से लेकर कारगा मैदान तक के इलाके को गार घाटी कह कर जाना जाता है। भागा घाटी को चार कोठियों में विभक्त किया गया है, और वे हैं, (1). कारदंग, (2) बारबोग्, (3) केलंग और (4) गुमरंग।

"तोदपा" और "गारी" भागा घाटी की दो प्रमुख बोलियां हैं: भागा घाटी के पश्चिमी भाग में बोली जाने वाली 'गारी' बोली बीलिंग गांव से कोलोंग गांव तक समझी व बोली जाती है। गारी बोली बोलने वालों की संख्या छः हजार से अधिक नहीं है। "गारी' बोली में तिब्बती भाषा के शब्द प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। कई लोगों का मत है कि गारी बोली में सत्तर प्रतिशत से भी अधिक शब्द तिब्बती भाषा से लिए गये हैं। इस का कारण एक तो यह हो सकता है कि इस घाटी के अधिकतर पड़ौसी जैसे पूर्व की ओर स्पित्ति और उत्तर की ओर लद्दाख तिब्बती भाषी हैं। इसके अतिरिक्त क्योंकि गारी घाटी में शत-प्रतिशत बौद्ध धर्मानुयायी रहते हैं अतः शताब्दियों तक इन लोगों का तिब्बत के साथ सांस्कृतिक ही नहीं बल्कि व्यापारिक सम्बन्ध भी रहा है। यही नहीं शुरू-शुरू में जितने भी बौद्ध धर्म प्रचारक थे वे सभी हिन्दुस्तानी थे और हिन्दुस्तान से होकर तिब्बत इत्यादि देशों में धर्म प्रचार हेतु गये थे। अतः "गारी" बोली में तिब्बती भाषा के धार्मिक, सांस्कृतिक एवं व्यापारिक शब्दों का मिल जाना स्वाभाविक ही लगता है।

इन सब बातों के होते हुए भी "गारी" बोली की एक विशेष बात यह है कि इसके लोकगीतों के शब्दों और "पट्टनी" बोली के लोकगीतों के शब्दों में कोई अन्तर नहीं है। "पट्टनी" लोकगीतों में हिन्दी के शब्द बहुतायत में पाये जाते हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि ऐतिहासिक दृष्टि से पट्टन घाटी का चम्बा रियासत के साथ बहुत देर तक का सम्बन्ध रहा है। यह एक अजीब बात है कि गार वादी के लोगों ने जिनकी बोली में 70 प्रतिशत से भी अधिक शब्द तिब्बती हैं, पट्टनी लोकगीतों को शत प्रतिशत मौलिक रूप में अपना लिया है। अब तो स्थिति यह है कि पट्टन घाटी का कोई भी लोकप्रिय गीत चन्द दिनों के अन्दर ही गारी वादी में भी लोकप्रिय हो जाता है। इस प्रकार से कभी-कभी यह भी देखने में आता है कि कुछ कर्णप्रिय लोकगीतों का उद्भव भी गारी वादी में ही होता है। हालांकि इन लोकगीतों में हिन्दी के शब्द प्रचुर मात्रा में होते हैं। जो कि "पट्टनी" लोकगीतों की एक महात्वपूर्ण विशेषता है। अतः यह सहज ढंग से कहा जा सकता है कि जहां तक लोक गीतों का सम्बन्ध है "गारी" बोली "पट्टनी" बोली से काफी प्रभावित है। यही नहीं इन दो बोलियों में काफी शब्द समानता भी है। कुछ शब्दों का उदाहरण नीचे दिया जा रहा है।

हिन्दी	पट्टनी	गारी
1. खिड़की	कल	कलची
2. गधा	कारह या कारा	करा

3. घोड़ा	रहां या रङ	अंगस्
4. चांद	लजा या लचङ	ल
5. चप्पू	वल्ज या वल्जा	बल
6. नीला	तिङई	तीं
7. पक्षी	प्या	प्याची
8. पानी	ती	सोति
9. पिता	बा	अबा
10. पांच	ङा	ङाई
11. बाल	क्रा	क्र
12. बर्फ	मुग्	मु
13. बहिन	रिङ	रिङ
14. मुंह	आ	अंम्
15. मांस	शा	श
16. शीशा	अरशी	अरशी
17. सात	निजी	निजी
18. सिर	पुंजह	पुसा
19. लड्डु	शुइ	शु

"तोदपा" बोली "गारी" बोली से बिल्कुल भिन्न है। इस बोली की विशेष महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यह लाहुल की अन्य बोलियों की तुलना में ज़स्कर और लद्दाखी बोलियों से अधिक प्रभावित है, और यत्र-तत्र एक-दो तिब्बती शब्द भी पाये जाते हैं। "तोदपा" बोली में भी कुछ शब्द ऐसे हैं जोकि "पट्टनी" बोली में भी पाये जाते हैं और जिनका मतलब एक ही जैसा है।
उदाहरणतया:

हिन्दी	पट्टनी	तोदपा
1. आदमी	मीह	मि
2. तारा	करह/कारह	कारमा
3. आग	मे	मे
4. नाम	मिन	मींग

"तोदपा" बोली से कुछ मिलती-जुलती बोली खोक्सर इत्यादि गांवो में भी बोली जाती है। वैसे इन दोनों बोलियों में वाक्य रचना के सभी नियम एक जैसे ही हैं तथापि खोक्सर इत्यादि गांवो की बोली पड़ोसी स्पिति की बोली से काफी प्रभावित है। इस छोटे से भूखण्ड में एक सर्वथा अलग ही बोली के होते हुए भी तिनली बोली सम्पूर्ण चन्द्रा वादी में समझी ही नहीं अपितु बोली भी जाती है। इसके विपरीत तोद घाटी में "गारी उतनी आसानी से नहीं समझी जाती है।

Scanned with CamScanner

3. **चड.स अर्थात् पट्टन घाटी**: चन्द्रा और भागा नदियों का संगम तन्दी नामक स्थान पर होता है। संगम के बाद यह नदी चिनाब बन जाती है। स्थानीय लोग इसे चन्द्रभागा कह कर पुकारते हैं। अतः तन्दी से लेकर थिरोट तक चन्द्रभागा के इस घाटी को पट्टन घाटी कहा जाता है और इस घाटी की मुख्य बोली को "पट्टनी" कहा जाता है। थिरोट से लेकर उदयपुर तक का इलाका 1975 से पहले 'चम्बा-लाहुल' के नाम से जाना जाता था क्योंकि तब तक यह इलाका जिला चम्बा का एक हिस्सा था। उस वर्ष चम्बा जिला के चार पटवार सर्कलों को जिला लाहुल-स्पिति में मिला दिया गया। 'और वे चार पटवार सर्कल हैं, (1) त्रिलोकनाथ, (2) उदयपुर' (3) मयाड़ नाला तथा (4) तिन्दी।

चम्बा-लाहुल के मिलने से पहले पट्टन घाटी को छः कोठियों में विभक्त किया हुआ था जिनके नाम हैं, (1) तन्दी, (2) बारगा, (3) रानिका, (4) शांशा (5) जोबरंग और (6) जाहलमां। जाहलमां कोठी को बाद में 1961 के पंचायत चुनाव के समय फिर दो भागों में विभक्त कर दिया गया जिनके नाम हैं, (1) जाहलमां, और (2) मूरिंग।

बोलियों के हिसाब से भूतपूर्व चम्बा-लाहुल को हम "पट्टनी" बोली के अन्तर्गत रख सकते हैं, क्योंकि इस बोली की शब्दावली मुख्य पट्टन की बोली अर्थात् "पट्टनी जैसी ही है। अगर कोई अन्तर है तो वह है केवल सुरों और तालों की विभिन्नता।

"पट्टनी" एक अत्यन्त ही रोचक बोली है। इसकी मुख्य विशेषता यह है कि लाहुल की जनसंख्या के आधे से अधिक लोग यही बोली बोलते हैं। बहुसंख्यक बोली होने के कारण चन्द्रा और भागा घाटी के लोग भी इसे थोड़ी बहुत सीख जाते हैं। शायद यही कारण है कि लाहुल के विभिन्न बोली बोलने वाले लोगों की आपसी बातचीत और विचारों की अभिव्यक्ति का एक मात्र माध्यम "पट्टनी" बोली ही है।

"पट्टनी" अपने आप में दो बोलियों से मिल कर बनी है और वे हैं, (1) बौद्ध धर्म-मतानुयायियों की बोली तथा (ii) स्वांगला अर्थात् हिन्दी मतानुयायिओं की बोली। इन दोनों बोलियों के शब्दों में जो भी असमानता है वह न होने के बराबर ही है। इसी कारण से दोनों धर्मावलम्बी एक दूसरे की बोलियों को अच्छी तरह से समझ जाते हैं। यहां यह बता देना भी उचित होगा कि वैसे तो थिरोट से लेकर उदयपुर गांव (भूतपूर्व चम्बा-लाहुल) तक के सभी लोग हिन्दू-मतानुयायी हैं परन्तु फिर भी इन की बोली और मुख्य पट्टनी घाटी के हिन्दू मतानुयायिओं की बोली में भी थोड़ी सी असमानता है। इस बात को एक साधारण सा उदाहरण देकर समझाया जा सकता है। मान लीजिये हिन्दी में एक शब्द है "ऊपर। "पट्टनी" बोली में एक नहीं बल्कि तीन शब्द मिलेंगे जिनका अर्थ होता है 'ऊपर' और वे हैं, (1) टोईजं, (2) टोईच, तथा (3) टोठी। अब जहां तक प्रथम दो शब्दों का सम्बन्ध है खास "पट्टनी बोली से लिये गये इन दोनों शब्दों में बहुत ही कम अन्तर है और क्रमशः हिन्दू और बौद्ध धर्म मतानुयायी इसे प्रयोग में लाते हैं। "टोठी" शब्द थिरोठ से लेकर

---

1. 1966 में भारत सरकार के योजना आयोग के एक अध्ययन दल ने हिमाचल प्रदेश के जनजातीय इलाकों के विकास सम्बन्धी गतिविधियों के अध्ययन के दौरान इस प्रकार के पुनर्गठन की जरूरत को अनुभव किया था। देखिये

Report of the study Team (1966) on Tribal Development Programmes, Himachal Pradesh, Committee on the Plan Projects, Planning Commission Govt. of India, mimeographed, pages 8 to 10.

Scanned with CamScanner

त्रिलोक नाथ और उदयपुर इत्यादि गावों में बोली जाने वाली 'रेयुपातु' बोली से लिया गया है ।इस तरह स हम देखते हैं कि हिन्दू मतानुयायिओं का बोलियों में भी थोड़ा सा अन्तर आ जाता है ।

अत: यह देखने में आता है कि एक छोटे से गांव में ही एक ही शब्द को कई प्रकार से उच्चारित किया जाता है । अगर किसी एक गांव में लुहार और चाण (अर्थात् हरिजन, चनाल या चण्डाल शब्द का अपभ्रंश रूप) इत्यादि भी रहते हों तो उच्चारण में ही अन्तर नहीं आता, बल्कि एक ही शब्द के कई रूप भी हो जाते हैं ।

"पट्टनी" बोली में कई शब्द ऐसे हैं जोकि कणासी (अर्थात् कुल्लू के मलाणा गांव की बोली) किन्नौरी, हिन्दी और तिब्बती भाषा में भी पाये जाते हैं । इसका उदाहरण नीचे दिया जाता है । तुलनात्मक अध्ययन के लिए हम ने कुछ चुने हुए शब्दों को चार भागों में बांटा है, (क) पट्टनी-कणासी, (ख) पट्टनी-किन्नौरी, (ग) पट्टनी-हिन्दी, तथा (घ) पट्टनी-कणासी-किन्नौरी ।

(क) पट्टनी-कणासी

	हिन्दी	पट्टनी	कणासी
1.	घी	महर	मर
2.	पजामा	सुदां या सुताणा	सुताणा
3.	ऊन	चम	चम
4.	मां	या	या
5.	बाप	बा	बा
6.	लकड़ी	सिङ	सिङ
7.	पानी	ती	ती
8.	तू	कायाक	का
9.	मैं	गे	गू
10.	मजबूत	पक्का	जोरकार
11.	बाल	क्रा	क्राह
12.	जीभ	लेह	ले
13.	गरदन	मूथु	मूथुं
14.	तेरा	कनु	कंका
15.	अन्धेरा	हुंयार	निहारा
16.	दिन	धियाड़ा	धियाड़ी
17.	आग	मे	मे
18.	जमीन	धरती	धरती
19.	हां	ओई	होई
20.	नहीं	मेह या मेस	में
21.	कुत्ता	खुई	कोई

(ख) पट्टनी-किन्नौरी

	हिन्दी	पट्टनी	किन्नौरी
1.	घोड़ा	रङ	रङ
2.	मनुष्य	मी	मी
3.	तीन	शुमु	शुमु
4.	चार	पी	पी
5.	पांच	ङा	ङा
6.	आठ	रे	राये
7.	दस	सा	साय
8.	ग्यारह	सेइदि	सिहिद
9.	तेरह	शाशुम	शाशुम
10.	चौदह	सपि	सापी
11.	पन्द्रह	सङा	साङा
12.	अठारह	सरे	सारे
13.	बीस	निज़ा	निज़ा
14.	तीस	निज़ोसा	निज़ोसा
15.	चालीस	निहीन्ज़ा	निहीन्ज़ा
16.	पचास	निहिन्ज़ो-सा	निहिन्ज़ो-सा
17.	साठ	शुम्-निज़ा	शुम्-निज़ा
18.	जीभ	लेह	ले/लेह
19.	आग	मे	मे
20.	लकड़ी	सिङ	शिङ
21.	स्वप्न	सुपना या मङ	मङ
22.	पानी	ती	ती
23.	मैं	गे	ग
24.	तुम (एक)	का या क	का
25.	तुम (दो)	केगु, या केकु	किशि
26.	तुम (सब)	केरह या केरे	किनो
27.	आप	केनह, या केना	किह
28.	वह	दु	दो
29.	वे (दो)	दोगु या दोकु	दोक्सुङ
30.	वे (सब)	दोरह या दोरे	दोगो
31.	पत्थर	रग्	रग
32.	बाल	क्रा	क्रा
33.	पिता	बा	बोबा बबा
34.	चाचा	बबा	बबाब
35.	कुत्ता	खुई	कुई

हिन्दी	पट्टनी	किन्नौरी
36. लिखना	चे़ज़ी या चेची	चे़ची
37. आकाश	सरग	सोरगङ
38. मारना	तेंज़ी या तेङज़ी	तेङज़ी
39. माथा	फया	फया
40. हाथ	गुड़	गु

(ग) पट्टनी-हिन्दी

हिन्दी	पट्टनी
1. दादा	दगु या मेमे
2. दादी	दगि, या अपह
3. औषधी	औषध
4. मामा	ममह
5. मामी	मामी
6. फुफी	पुपु या अने
7. नाना	ननह
8. नानी	नानी
9. दीदी	देदे या अचे
10. अनोखा	नोखे
11. वन	वणह
12. साल	सालह
13. कहानी	कथा
14. धूल	धूड़
15. कोना	कोणी
16. लंगड़ा	लट्टे
17. मच्छली	मछ
18. मीठा	मेठे
19. रोटी	रोड़ि, या रोटि
20. सियाना	सेहणे
21. सेब	शे़
22. बैरी	बैरी
23. देश	मुल्ख
24. जमीन	धरती
25. स्वर्ग	सरग

(घ) पट्टनी-कणासी-किन्नौरी

हिन्दी	पट्टनी	कन्नौरी	कणासी
1. जीभ	लेह	ले या लेह	लै
2. आग	मे	मे	मे
3. लकड़ी	सिङ	शिङ	सिङ
4. पानी	ती	ती	ती
5. मैं	गे	ग	गू
6. तू	क या का	का	का
7. बाल	क्रा	क्रा	क्राह्
8. पिता	बा	बोबा या बबा	बा
9. कुत्ता	खुई	कुई	कोई

ऊपर दिये गये उदाहरणों को ध्यान में रख कर हम यह कह सकते हैं कि पट्टनी बोली का पश्चिमी-पहाड़ी बोलियों से अलग अपना ही एक भिन्न रूप है। पट्टनी बोली में वैसे कई शब्द ऐसे हैं जोकि पश्चिमी पहाड़ी के कई बोलियों में भी विद्यमान हैं फिर भी यह पूर्ण रूप से एक अलग ही बोली है । यह सर्वविदित है कि हिन्दी और मलयालम दोनों भाषाओं में संस्कृत के बहुत से शब्द मौजूद हैं फिर भी वे बिल्कुल ही अलग-अलग भाषायें हैं । ठीक उसी प्रकार से एक पट्टनी बोली बोलने वाला कणासी और किन्नौरी इत्यादि बोलियां समझ नहीं सकता जब तक कि उसने ये बोलियां सीखी नहीं हों ।

पट्टनी बोली में कुछ शब्द ऐसे भी पाये जाते हैं जोकि हिमाचल की कुछ अन्य बोलियों, जैसे कि; भटियाली, चुराही, पंगवाली, कुल्लवी तथा चमियाली इत्यादि में भी मौजूद हैं । जैसे कि:—

1. चरवाहा—पुहाल (पट्टनी, भटियाली, कुल्लवी, चमियाली, चुराही तथा पंगवाली)
2. घूस—घूड़ (पट्टनी, चमियाली तथा कुल्लवी)
3. गूंगा—जल्हा (पट्टनी, चमियाली तथा कुल्लवी)
4. लंगड़ा—लट्टा (पट्टनी, चमियाली तथा कुल्लवी)
5. भैंस—मेहेई (पट्टनी, चमियाली तथा चुराही)
6. अतिथि—प्राहुणा (पट्टनी तथा चमियाली)

—पाहुणा (कुल्लवी)

7. बहरा—टाऊणा (पट्टनी, चमियाली तथा कुल्लवी)
8. दिन— धियाड़ा (पट्टनी तथा कुल्लवी)
—धियाड़ी (भटियाली)
9. गर्म —चड़े (पट्टनी)
—तत्ता (भटियाली तथा चुराही)
—तोत्ता (कुल्लवी)
10. बड़ी बहिन—देदे (पट्टनी)
—देंद्दी (चुराही तथा पंगवाली)

11. सुस्त —दलीद्दर (पट्टनी)
—दलिद्दरी (चुराही)
12. आंख —टीरह (पट्टनी तथा पंगवाली)

हिन्दी भाषा की तरह "पट्टनी" बोली की वाक्य रचना में पहले कर्ता, फिर कर्म और अन्त में क्रियायें लगती हैं। अतः हिन्दी भाषा बोलने वाले व्यक्ति को "पट्टनी" बोली में वाक्य-रचना करते समय कोई विशेष कठिनाई अनुभव नहीं होती है बशर्ते कि उसके पास "पट्टनी" बोली की काफी शब्दावली उपलब्ध हो। लिपि के अभाव और पूरी तरह से विकसित नहीं होने के कारण यह भाषा न होकर सिर्फ बोली ही रह गई है। अतः इसका शब्द-भण्डार भी उतना समृद्ध नहीं है। इस तरह से शब्दावली की समस्या भी अपने आप ही हल हो जाती है।

"पट्टनी" बोली में सब से बड़ी कठिनाई क्रिया में होती है। परन्तु जहां तक संज्ञा, सर्वनाम और विशेषण इत्यादि का सम्बन्ध है यह बोली काफी विकसित है। यह बात नीचे दिये गये उदाहरणों से स्पष्ट हो जायेगी:—

(क) संज्ञा (Nouns)

1. जातिवाचक संज्ञा: मी (आदमी)।
2. भाववाचक संज्ञा: जरकह (दौड़)।

(ख) सर्वनाम (Pronouns)

1. पुरुषवाचक सर्वनाम: गे (मैं); का (तू) और दु (वह)।
   (i) प्रथम पुरुष: गे (मैं); मेरे, या येंरंह (हम); ग्यु (मेरा), और येंदु (हमारा)।
   (ii) मध्यम पुरुष: का (तू); केरे या केरह (तुम सब); कां (तेरा), और केदु (तुम्हारा)।
   (iii) उत्तम पुरुष: दु (वह); दोरे या दोरह (वे सब); दो (उसका) और दिऊ (इसका)

2. निश्चय वाचक सर्वनाम: दि (यह), दिरे (ये), दिये (यही), दु (वह), दोरे (वे) और दुए (वही)।
3. अनिश्चय वाचक सर्वनाम: अरिआ (कोई), छाह-छि (कुछ) और अजा या अचा (किसी)।
4. सम्बन्ध वाचक सर्वनाम: आंऊदी (जो), दोई (सो) और तांला (तिस)। यहां यह बता देना उचित रहेगा कि "आंउदी", "दोई" और "तांला" शब्दों का प्रयोग क्रमशः "किसने", "उसने" और "फिर भी" के रूप में भी होता है।

5. प्रश्न वाचक सर्वनाम: अरि (कौन) और छिह् (क्या) इत्यादि।
6. निज वाचक सर्वनाम: केनह् (आप), घें या घयाङ (मैं स्वयं) इत्यादि।

(ग) विशेषण (Adjectives)

1. गुण वाचक विशेषण:
   (i) रोग्हि, या रोकि (काला); छांसी, या चङसी (सफेद)।
   (ii) टेह-कुह (बिमारी), मजासी, या मजक्सी (उदासी)।
   (iii) गिर-गिरह या किर-किरह (गोल), बेल्लेह (चौड़ा)।
   (iv) योंगेल्कि-ऊ, या योंगोल्कि-ऊ, या योंकोल्कि-ऊ (सांयकालीन)।

Scanned with CamScanner

(v) ज़िरेगी-ऊ या ज़िरेकी-ऊ (पूर्वी)।

2. निश्चित संख्यावाचक विशेषण : पी (चार), पिमिला (चारों), और पी गुणा (चार गुणा) इत्यादि।
3. अनिश्चित संख्या वाचक विशेषण : मस्स (बहुत) और मत्ते (सब) इत्यादि।
4. परिमाण वाचक विशेषण: थोड़े पानु (थोड़ा दूध), मस चा (बहुत चाय) और शुमु किलो टुर (तीन किलो चावल) इत्यादि।
5. निर्देशक विशेषण : दु गङ कड़ या कटु (वह लड़का), दु पलेट (वह पलेट)।

इस बोली में क्रमवाचक विशेषण अर्थात् दूसरा, तीसरा इत्यादि शब्दों का अभाव है। अतः इस बोली के शब्दों का हिन्दी में अनुवाद कभी कभी भली प्रकार से नहीं किया जा सकता है। फिर भी "पट्टनी" में "इदि" या "इती" शब्द मौजूद हैं जिसका मतलब होता है "पहला"।

विशेषण के अन्तर्गत तुलना करने के लिये "वे" लगाया जाता है जैसे कि : (i) गे-वे मोड़े (मेरे से बड़ा), (ii) क-वे बाये, या का-वे बाड़े (तेरे से छोटा, या तेरे से छोटी) इत्यादि। तेमी (कितने आदमी); छना (किस तरह); धुआं (उस तरह); धिआं (इस तरह); अंयों या अयोण (कितना), धों या धोण (इतना) इत्यादि शब्द विशेषण के कुछ और उदाहरण हैं।

(घ) क्रिया विशेषण (Adverbs)

काल वाचक, स्थान वाचक, रीतिवाचक और परिमाण वाचक क्रिया विशेषणों के कुछ उदाहरण नीचे दिये गये हैं:—

(i) **काल वाचक क्रिया विशेषण :** तो (आज); मुदां, या मुताङ (कल आने वाला); युरा (परसों आने वाला); मुइरा (चौथे आने वाला); एरे (कल बीता हुआ); तुरा (परसों बीता हुआ); तुइतुरा (चौथे बीता हुआ); एन्दे (अभी); धोरा, दाङ, या दोरा (फिर); अवेल या अपेल (कब); ता (इसलिये) और तुई, (पहले) इत्यादि।

(ii) **स्थान वाचक क्रिया विशेषण :** देरह् (यहां); दोरह् (वहां); अऊंर (कहां); देच्च या देरच् (यहां से); दोच्च या दोरच् (वहां से); तोरी, या तोरीं, या तोरिङ (ऊपर); चम्बे (नज़दीक); ओइतारे (दूर); तुरी (आगे); थलांरि, या थलङरि (पीछे); तोङ (अंदर), तथा दाहथि या दक्थि (बाहर) इत्यादि।

(iii) **रीति वाचक क्रिया विशेषण:** दा-बा या दाढ-बाढ (जल्दी-जल्दी); छरि या छेरि (क्यों); मेह् या मेस (नहीं) तथा दो-थले (इसलिये या उसके पीछे) इत्यादि।

(iv) **परिणाम वाचक क्रिया विशे ण:** महस् (बहुत); थोह्ड़े, या थोऽऽऽड़े (कम); धों या धोण (इतना); अंयों या अंयोंण (कितना) तथा टिबु-टिबु, या टिपु-टिपु (बूंद-बूंद) इत्यादि।

(ङ) सम्बन्ध वाचक (Prepositions):—इस बोली में कुछ शब्द ऐसे भी हैं जो कि कभी सम्बन्ध वाचक के रूप में प्रयोग होते हैं और कभी क्रिया विशेषण के रूप में। जैसेकि :

1. पोयां या पोया या पोयङ } नीचे (किसी चीज़ के)

2. टोइज़ या टोल्टे या टोठी	ऊपर (किसी चीज के)
3. दोवि	उसके लिए
4. गिऊ हारे	मेरे पास
5. गेंरा सादे, या गेरङ साते	मेरे साथ
6. कां तुइ	तेरे सामने
7. गिऊ थले	मेरे पीछे
8. दो थलज	उसके लिए
9. दिरे	इस ओर (नदी या नाले के)
10. नुरे	उस ओर (नदी या नाले के)
11. अन्दरेज या अन्दरेक्च	अन्दर (किसी चीज के)
12. बिज़ां, या विचङ.	बीच मे ।

इस बोली में एक और बड़ी कठिनाई लिंग से सम्बन्धित है। उदाहरणतया 'दिनेश एक अध्यापक का पुत्र है' को पट्टनी में "दिनेश इ मुशीं ऊ यो शु—" तथा 'कमला एक अध्यापक की पुत्री है को "कमला इ मुंशी-ऊ मियोशू" कहा जायेगा। इस तरह से हम देखते हैं कि इन दो वाक्यों में केवल पुत्र (यो) तथा पुत्री (मियो) के लिए ही अलग-अलग शब्दों का प्रयोग हुआ है। अन्यथा सारे शब्दों को दोहराया गया है। इसी प्रकार से 'वह आ रहा है' तथा 'वह आ रही है दोनों के लिए एक ही वाक्य प्रयोग में लाया जाता है, और वह है, "दु अपि लेको तो"। चूंकि जातिवाचक संज्ञा में स्त्रीलिंग और पुलिंग शब्द उपलब्ध हैं अतः क्रिया पदों का कर्त्ता के अनुसार न होने के बावजूद भी काम चल जाता है। कुछ स्त्रीलिंग और पुलिंग शब्दों का उदाहरण नीचे दिया जा रहा है:—

पुलिंग	स्त्रीलिंग
1. बा (पिता)	या (माता)
2. बबा (चाचा)	बया (चाची)
3. यो (पुत्र)	मियो (पुत्री)
4. कका (भाई)	कगई, या छमों (भाभी)
5. ननह् (नाना)	नानी (नानी)
6. ममह् (मामा)	मामी (मामी)
7. दगु या मेमे (दादा)	दगी, या अपह्
8. रद (गाय)	बांड् या बाङड् (बैल)
9. गहामी, या गहड़.मी (मर्द)	मेंज़िमी या मेंषिमी (औरत)
10. कच्च, या कारचा (मेंढ़ा)	मा (भेड़)
11. रहां या रङ (घोड़ा)	नबरां, या नबरङ. (घोड़ी)
12. कारह् (गधा)	करेंड़ि, या करेटि (गधी)
13. रूह (ससुर)	युग (सास)
14. ला (बकरी)	रिह्.जह, या रिह्.वाह (बकरा)
15. ब्यहू (बर)	ब्यहूतिरि (वधू)

Scanned with CamScanner

संस्कृत भाषा की तरह पट्टनी में भी तीन वचन होते हैं जैसे कि:--

हिन्दी	पटनी
1. मैं जाता हूं।	(i) गे यवादोग् या
	(ii) गे यवातोग्, यवाताग्।
2. हम (दो) जाते हैं।	(i) येंगु, यवादोशि, या
	(ii) येंकु यवातोशि या यवाताशि।
3. हम (सब) जाते हैं।	(i) येंरह यवादोनि या
	(ii) येंरे यवातोनि या यवातानि।
4. तू जाता है।	(i) क यवादन् या
	(ii) का यवातन्
5. तुम (दो) जाते हो।	(i) केंगु यवादोशि या
	(ii) केंकु यवातोशि या यवाताशि।
6. तुम (सब) जाते हो।	(i) केरह् यवादोनि या
	(ii) केरे यवातोईं या यवाताईं।
7. वह जाता है।	(i) दु यवाह् या
	(ii) दु यवा
8. वे (दो) जाते हैं।	(i) दोगु, यवादोगु या
	(ii) दोकु यवातोकु।
9. वे (सब) जाते हैं।	(i) दोरह् यवादोर या
	(ii) दोरे यवातोर या यवातोरे।
10. कुत्ता जाता है।	(i) खुई युम्राह् या
	(ii) खुई युम्रा।
11. कुत्ते (दो) जाते हैं।	(i) खुईगु यवादोगु या
	(ii) खुईकु यवातोकु।
12. कुत्ते (सब) जाते हैं।	(i) खुईरे यवादोरे या यवादोर या
	(ii) खुइरे यवातोरे या यवातोर।

अतः जहां तक वचन का सम्बन्ध है, यह अन्तर केवल सर्वनाम में ही नहीं अपितु सहायक क्रिया में भी स्पष्ट दिखाई देता है। ऊपर दिये गये उदाहरणों से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि इस बोली में कर्त्ता को, द्विवचन और बहुवचन बनाने के लिए क्रमशः "गु" और "रे" प्रत्यय लगाये जाते हैं। दूसरी बात यह भी ध्यान देने योग्य है कि यह सार्वनामिक प्रधानता है जोकि तिब्बती भाषा में नहीं है। इस तरह से तिब्बती भाषा का पट्टनी बोली के ऊपर बहुत कम प्रभाव है। यह शायद इसलिए है कि ऐतिहासिक दृष्टि से पट्टन घाटी पर लद्दाख और तिब्बत का बहुत ही कम प्रभाव रहा है।

इतिहासकारों के अनुसार ई0 पू0 2000 के लगभग यहां कुछ जातियां मौजूद थीं जिनकी भाषा मध्य भारत और बंगाल के मुण्डा जातियों से मिलती जुलती सी थीं। कहते हैं इस जाति के लोग अभी भी मलाणा और किन्नौर में पाये जाते हैं। [1]यह भी विश्वास किया जाता है कि कुछ तिब्बती प्रवासी रूपशो और लद्दाख के उत्तर-

(1) अधिक जानाकारी के लिए देखें; (i) A. H. Franke, A History of Western Tibet (ii) Dr. J. A. Grierson "Linguistic survey of India" Vol. III. (iii) राहुल सांकृत्यायन -"किन्नर देश", तथा (iv) शाम सुन्दर दास", भाषा रहस्य"

पूर्व से होते हुए भागा नदी (अर्थात् भागा घाटी) के मुहाने में आकर बस गये और इसी प्रकार से कुछ लोग स्पिति और तिब्बत से आकर चन्द्रा नदी (अर्थात् तिनन घाटी, या चन्द्रा घाटी) के मुहाने पर बस गये। शायद इसीलिए खोकसर और उसके आस पास के गावों की बोली स्पिति की बोली से मिलती जुलती है। इसी प्रकार से कुछ आर्य और अर्ध आर्य पश्चिम और दक्षिण से होते हुए लाहुल आकर बस गये। इसलिये हो सकता है कि आज के लाहुले, उतर-पूर्व और दक्षिण-पश्चिम से आये हुए इन लोगों के वंशज हों और शायद इसीलिए पट्टनी बोली और मुण्डा भाषा में कुछ समानता दिखाई देती हो।

कुछ विद्वानों का मत है कि लाहुल की "............... बोलियों में चीनी बर्मी भाषा की भान्ति बड़ी संख्याओं की गिनती में दाशमिक प्रणाली प्रयोग न कर के बीस-बीस के हिसाब से गिने जाते हैं।[1] परन्तु जहां तक पट्टनी बोली का सम्बन्ध है, यह कथन पूर्ण रूप से सत्य नहीं है क्योंकि इस बोली में बड़ी संख्याओं की गिनती में दाशमिक प्रणाली का ही प्रयोग होता है। जैसे कि : (i) रा (सौ), (ii) रा–ऊ टोई सा (एक सौ दस) (iii) रा-ऊ टोइ निज़ा (एक सौ बीस), (iv) रा-ऊ टोइ निजो-सा ((एक सौ तीस) इत्यादि।

तथापि यह मानना पड़ेगा कि जहां तक गिनती का सम्बन्ध है पट्टनी बोली में तिब्बती भाषा का कुछ प्रभाव जरूर देखने में आता है। उदाहरण के लिए :

हिन्दी	पट्टनी	तिब्बती
एक	इच्चह, या इच्चा	चिक्
दो	जुड़ह, या जुटह	निह्
तीन	शुमु	सुम्
चार	पी	शी
पांच	ङा	ङा
छः	त्रुई	ट्रुक्
सात	निहिजी	दुन्
आठ	रे	ग्याह्
नौ	कुह्	गुह्
दस	सा	चुह्
ग्यारह	सेइदि (सा+इच्चह)	चोक्चिक्
बारह	सानि (सा+निह्)	चोग्निह्
तेरह	शाशुम (सा+शुमु)	चोक्सुम्
चौदह	सापि (सा+पी)	चोक्शी
पंद्रह	साङा (सा+ङा)	चोङा
सोलह	सत्रुई (सा+त्रुई)	चोक्ट्रुक्
सतरह	साहनि (सा+निहिजी)	चोक्दुन्
अठारह	सारे (सा+रे)	चोब्ग्याह्
उन्नीस	सास्कु (सा+कुह्)	चोक्गुह्
बीस	निज़ा (निह+सा)	निहशुथाम्पा

1. के० अंगरूप लाहुलो "लाहुल की किराती-कनाशी बोलियां–एक अध्ययन "सोमसी" अक्तूबर 1975 पृष्ठ 40।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि "पट्टनी" बोली और तिब्बती भाषा में हिन्दी के तीन, चार, पांच और नौ के स्थान पर प्रयोग होने वाले शब्द लगभग एक ही जैसे हैं। "पट्टनी" के "सानि" (बारह) और "निजा" (बीस) शब्दों के सन्धि विच्छेद करने पर हम यह पाते हैं कि तिब्बती भाषा का "निह्" (अर्थात् दो) शब्द दोनों में ही उपस्थित है जैसा कि, सानि—सा—निह् और निजा—निह्+सा । इसलिए ऐसा लगता है कि पट्टनी के उन दो शब्दों का प्रादुर्भाव तिब्बती के "निह् में हुआ हो क्योंकि पट्टनी में "निह के स्थान पर "जुड़ह" या "जुटह" आता है। इसी प्रकार से "शुमु" "पी'ङ" और (कुह भी तिब्बती के "सुम्," "शी," "ङा" और "गुह्" से लिए गये होगें। तिब्बती और पट्टनी का सम्बन्ध यहीं तक सीमित है। जैसे कि हम पहले देख चुके हैं कि "पट्टनी व्याकरण की दृष्टि से बिल्कुल ही भिन्न है, और इस भिन्नता का मुख्य कारण द्विवचन की विद्यमानता है जो कि तिब्बती भाषा में नहीं है। द्विवचन का उपलब्ध होना और जाति वाचक संज्ञाओं को छोड़ कर लिंग भेद का अभाव इत्यादि कुछ कारण हैं जो पट्टनी बोली, को किन्नौरी बोली के अधिक निकट ला कर रख देते हैं।

इस बोली में महीनों के नाम विक्रमी सम्वत के चैत्र, वैशाख इत्यादि के अनुसार ही चलते हैं और वे इस प्रकार से हैं।

1. एजिमीलाह या एचिमीलाह्
2. सुरलह्
3. योंदलह् या योंतलह्
4. जादरोलाह् या जातरोलाह्
5. शङजड़ुम्, या शङजटुम
6 ज़ाल्लह्
7. क्युरलह्
8. ब्यहूलह्
9. बालह्
10. ज़ाङलह्
11. ड़ांलह् तथा
12. यांलह् या यांङ्लह् ।

इसी तरह से दिनों के नाम भी हिन्दी से लिए गये हैं जैसे कि (i) सोमार (ii) मङण या मड़्-ङण (iii) बुद्ध (iv) ब्रेहपदि या ब्रेहपति (v) शुक्र (vi) श्नजर तथा (vii) अइद्वार या अइत्वार।

इस बोली में वर्तमान काल और भूतकाल के कई रूप होते हैं जिनके अन्त में सामान्यतया (i)—तेग्, (ii) ताग् (iii) तोह्, (iv) तेह्, (v) गह् (vi) तेन् (vii) तान् इत्यादि लगाये जाते हैं। उदाहरणतया।

1. कुड़्री/कुट्री। कुड़ी=कहना
   (*i*) कुत्तेग्=कहा था (प्रथम पुरुष के साथ)
   कुईग/कुईगा=कहा (प्रथम पुरुष के साथ)
   कुत्ताग=कहा है (प्रथम पुरुष के साथ)
   (*ii*) कुत्तेन्=कहा था (मध्यम पुरुष के साथ)
   कुत्तान्=कहा है (मध्यम पुरुष के साथ)

Scanned with CamScanner

(*iii*) कुत्तोह् =कहा है (उत्तम पुरुष के साथ)
कुत्तेह्=कहा था (उत्तम पुरुष के साथ)

2. ल्हई/ल्हजी=करना

(*i*) ल्हईग/ल्हईगा=किया (प्रथम पुरुष के साथ)
ल्हत्ताग=किया है (प्रथम पुरुष के साथ)
ल्हत्तेग=किया था (प्रथम पुरुष के साथ)

(*ii*) ल्हत्तान्=किया है (मध्यम पुरुष के साथ)
ल्हत्तेन्=किया था (मध्यम पुरुष के साथ)

(*iii*) ल्हत्तोह् =किया है (उत्तम पुरुष के साथ)
ल्हत्तेह् =किया था (उत्तम पुरुष के साथ)

ऊपर दिये गये दोनों उदाहरण एक वचन से ही सम्बन्धित हैं। द्विवचन और बहुवचन में इनके रूप बदल जाते हैं।

भविष्यत काल में क्रियाओं के अन्त में समान्यतया (i) ओग्, (ii) ओशि, (iii) ओनि, (iv) ओन्, (v) ओदो, (vi) ओगु तथा (vii) ओरह् या ओरेह् इत्यादि लगाये जाते हैं जैसे कि:

कोग्–कहूंगा (प्रथम पुरुष, एक वचन के साथ)
कोशि–कहेंगे (प्रथम पुरुष, द्वि-वचन)
कोनि–कहेंगें (प्रथम पुरुष, बहु–वचन)
कोन्–कहेगा (मध्यम पुरुष, एक वचन)
कोशि–कहोगे (मध्यम पुरुष, द्वि-वचन)
कोनि–कहोगे (मध्यम पुरुष, बहु-वचन)
कोदो–कहेगा (उत्तम पुरुष, एक वचन)
कोगु–कहेंगे (उत्तम पुरुष, द्वि-वचन)
कोरह् या कोरेह्–कहेंगे (उत्तम पुरुष, बहुवचन)

इस तरह से हम देखते हैं कि प्रथम पुरुष के द्वि-वचन और बहुवचन क्रमशः मध्यम पुरुष के द्वि वचन और बहु-वचन से मिलते जुलते हैं।

नकारात्मक शब्द बनाने के लिए "थ" या "म" उपसर्ग लगाया जाता है जैसे :

1. अगा (आंऊ), थांदा (मत आओ) –एक वचन।
2. अंदानि(आओ), थांदानि (मत आओ) –बहु-वचन।
3. इगा (जाऊं), थेला (मत जाओ) – एक वचन।
4. इलेंई (जाओ), थेलांई (मत जाईये) बहु-वचन।
5. योग् (जाऊंगा), मेग (नहीं जाऊंगा)
6. अवोग् (आऊंगा), माह्ग (नहीं आऊंगा)
7. दयोग् (गिरूंगा), मह्ग (नहीं गिरूंगा)

सोमसी

सामान्यतया यह देखने में आता है कि प्रवर्त्तनाथ प्रकार (Inperative mood) में "थ" उपसर्ग लगाया जाता है और बाकि सब जगह "म" उपसर्ग लगाया जाता है। उदाहरण के लिए :

प्रवर्त्तनाथ प्रकार	नकारात्मक
1. तेङ-ऊ (मारो, तू के साथ)	थतेङ-ऊ
2. तेरेंनि (मारो, मध्यम पुरुष बहुवचन के साथ)	थतेंरेंनि
3. रंऊं (देखो, मध्यम पुरुष एक वचन)	थरंऊं
4. रांनि (देखो, मध्यम पुरुष बहु-वचन)	थरांनि
5. ब्रऊं (बैठो, मध्यम पुरुष एक वचन)	थब्रंऊं
6. ब्रांनि (बैठिये, मध्यम पुरुष बहु वचन)	थब्रांनि
7. इल्ह (जाओ, मध्यम पुरुष एक वचन)	थेल्ह
8. इलेनि (जाओ, मध्यम पुरुष, बहु वचन)	थेलेनि

इसके अतिरिक्त कई शब्द ऐसे भी हैं जिनका नकारात्मक रूप बनाने के लिए किसी शब्द विशेष के अन्त में "म" या "मु" प्रत्यय लगाया जाता है जैसे कि अवोग् (आऊंगा) शब्द से बना हुआ अग्गेमु/अग्गेमा (नहीं आऊंगा)।

ऊपर दिये गये उदाहरणों से यह बात साफ हो जाती है कि पट्टनी बोली में कुछ व्यंजन यथा "ग" और "न" सामान्यतया आधे बोले जाते हैं। दूसरी बात यह कि "उ" और "इ" छोटी आवाज में बोले जाते हैं।

लाहुल की दो अन्य महत्वपूर्ण बोलियां हैं, (i) लुहारी और (ii) चण बोली। इन दो बोलियों की विशेषता यह है कि इन में लगभग 70 प्रतिशत शब्द संस्कृत भाषा से लिये गये हैं। हिमाचल की शायद ही कोई अन्य ऐसी बोली हो जिसमें संस्कृत मूल के शब्द इस बहुतायत में उपलब्ध हो। उदाहरण के लिए "चण" बोली का "कौत्र गच्छतास्", संस्कृत के "कुत्र गच्छसि" के बहुत समीप है और दोनों का अर्थ एक ही है अर्थात् वैसे तो आज ये बोलियां लाहुल के निम्न वर्गों की बोलियां हैं परन्तु संस्कृत शब्दों के इस प्रकार प्रचुर मात्रा में विद्यमान होने के कारण ऐसा लगता है कि किसी जमाने में ये अवर्णों की नहीं अपितु सवर्णों की बोलियां रह चुकी होगीं। अब प्रश्न यह उठता है कि इन बोलियों के बोलने वाले सुवर्ण से अवर्ण अर्थात् चतुर्थ वर्ग या दलित वर्ग के लोग कैसे हो गये? किसी ऐतिहासिक प्रमाण के अभाव के कारण हम ठीक ढंग से यह कह नहीं सकते कि यह सब कैसे हुआ। परन्तु फिर भी हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि शायद इसके दो कारण रहे हों। हो सकता है कि ये लोग लाहुल के मूल निवासी रहे हों। कालान्तर में जब बाहर से लोग यहां आकर बसने लगे तो इन 'बाहरी' लोगों के साथ जीविकोपार्जन के क्षेत्रों की प्रतियोगिताओं में असफल हो गये हों। और इस तरह से धीरे-धीरे 'बाहरी' लोगों का प्रभुत्व बढ़ता गया हो। बढ़ते प्रभुत्व के कारण एक दिन वह भी आया होगा कि 'बाहरी' लोग

शोषक बन गये और वे मूल निवासी शोषित वर्ग बन कर रह गये। यह केवल ख्याली बात ही नहीं है। इस प्रकार के कई ऐतिहासिक प्रमाण भी मिलते हैं। यह तो सर्वविदित है कि कोलम्बस ने जब अमेरिका की खोज की थी तो उस समय वहां केवल रेड इण्डियन्ज (Red Indians) ही बसते थे। इस खोज के बाद यूरोप इत्यादि महाद्वीप के लोग वहां जाकर बसने लगे और आज वे रैड इण्डियन्ज लगभग लुप्त ही हो चुके हैं। अगर कोई है भी तो वे भी जनजातीय लोगों के रूप में जंगलों और पहाड़ी कन्दराओं में। दूसरा कारण यह हो सकता है कि ये जातियां कभी किसी विपत्ति के कारण मैदानी इलाकों से आकर लाहुल में आश्रय लिये हों, और जीवनयापन के लिए लोहे इत्यादि का काम शुरू किये हों जो बाद में इन लोगों का पेशा ही बन गया हो।

उपनिवेशक,
लेबर ब्यूरो, शिमला।

"If there is anything alive in India then it is the dance, which from time immemorial till today has been a living art for professionals and for amateurs. Performed originally in temples' the classical dances of India are now presented as part of seasonal music and dance performances of the great cities of India".

—Jeannette Bossert India,
Land people and Culture Page 169

मढ़ोड़ देवता

—बद्री सिंह भाटिया

शिमला से लगभग पैंतिस कि0 मी0 की दूरी पर दानोघाट नामक एक स्थान है। यहां पर वर्षों से 28 मई को प्रतिवर्ष एक ग्रामीण मेला लगता है। इस मेले को मढ़ोड़ देवता का मेला कहते हैं। मढ़ोड़ देवता का असली नाम कुर्गन देवता है लेकिन इसका निवास तहसील सुनी में मढ़ोड़ घाट नामक स्थान पर होने से इसे मढ़ोड़ कहा जाता है।

इस मेले के लिये लोग महीनों से तैयारियां कर देते हैं। चूंकि फसल आ गई होती है। नई फसल लगा दी जाती है, कहीं फसल उग रही होती है कहीं गोडाई भी कर ली गई होती है। प्रायः ग्रामीण अपने कामों में व्यस्त होते हैं। ग्रामीणों की इतनी व्यस्तता के बावजूद भी लोग हजारों की संख्या में इसमें शामिल होते हैं।

देवताओं का समाज में एक स्थान है। इन्हें शक्तिशाली कहा जाता है। यह शक्ति मानव शक्ति से भी बढ़ कर होती है। मानव शक्ति से बढ़ कर होने से इसे दैविक शक्ति कहा जाता है। मढ़ोड़ देवता की शक्ति की भी एक अपनी ही कहानी है। कभी हिमाचल के ही सिरमौर जिले में गिरी नदी के तट पर एक राजा का विशाल भवन हुआ करता था। उसके चार बेटे थे। एक बार एक नट अपने करिश्मे दिखाने वहां गया। राजा से उसका वार्तालाप हुआ। उसने अपने करिश्मे में बताया कि वह एक रस्से पर बिना किसी सहारे के नदी पार कर सकता है। राजा ने कहा यह तो असम्भव है कोई भी आदमी इस प्रकार नदी नहीं पार कर सकता। इस पर नट ने अपनी दृढ़ता एक बार और प्रकट की फिर राजा ने उसे नदी को रस्से पर बिना किसी सहारे पार करने पर आधा राज्य देने का वचन दिया। नट सफल हो गया और अपना वचनबद्ध एक हक मांगने लगा।

नट की सफलता से मंत्री महोदय का आत्मबल डगमगाया और उसने अपनी तीव्र बुद्धि से ही नट को एक बार पुनः प्रयोग करने को कहा ज्यों ही वह रस्से पर दरिया के मध्य पहुंचा रस्सा काट दिया गया और नट डूब गया। इस प्रकार राज्य तो बच गया परन्तु नटी ने शाप दिया कि जिस प्रकार उसका नट नदी में डूबा है उसी प्रकार राजा की राजधानी भी डूब जाये। उसी शाप वश उस राज्य में बाद में पानी भरना शुरू हो गया। लोग राज्य छोड़ भागने लगे। राजा के लड़के भी भागे। उन चारों में से सबसे बड़ा लड़का चलते-चलते भज्जी रियासत के एक गांव (हिवूण वघ्यालड़) में आकर ठहर गया। उसके साथ उसका विश्वासी सेवक जुलाह भी था। गांव में एक अपरिचित का रहना मुश्किल था। अतः इस रहने की समस्या से उसने एक ग्रामीण स्त्री को जो विधवा थी, अपनी मुंह बोली बहन बना लिया। फिर बहन-भाई दोनों गांव में रहने लगे। वह अपना समय आराम से काट रहे थे। परन्तु गांव के लोगों को उनका इस प्रकार रहना अखरा। वे उन्हें बहन-भाई के अलावा कुछ और ही समझ रहे थे।

अज्ञान मन से तथा कुछ और ग्रामीणों के बहकाने से उन्होंने एक षड़यन्त्र की रचना की और एक प्रीति भोज का आयोजन किया। कुंवर कुर्गन सिंह प्रकाश को भी आमन्त्रित किया गया। गांव के स्नेहवश

Scanned with CamScanner

वह उस भोज में चला गया। भोज के लिये उसे पंक्ति के प्रथम में बैठाया गया। खाना परोसा गया और ज्यों ही कुंवर ग्रास लेने को झुका तो एक गंडासे से एक षड्यन्त्रकारी ने उसका सिर धड़ से अलग कर दिया।

अब बेचारा सेवक जोकि बाहर ही रखा गया था, घबराया हुआ सा रह गया उसे अपने जीवन का भी डर लगा। लाश को वहां ठिकाने लगाना काफी मुश्किल था। अतः उसने एक किल्टे (बांस का पीठ में लटकाने वाला टोकरा) में लाश को उठाया और सतलुज दरिया में फैंकनें चल पड़ा। जेठ का महीना और ऊपर से गर्मी फिर भी बेचारा लाश को ठिकाने लगाने के लिए पसीने से लतपथ चढ़ाई चढ़ता जा रहा था। दो कोस की चढ़ाई फिर लगभग तीन कोस की उतराई पर दरिया था। ततापानी के पास ही कहीं उसका उसे फैंकने का विचार था।

ऊपर धार (पहाड़ी) पर पहुंचते ही सेवक ने अपने सुस्ताने को 'किल्टा' एक ओर रखा तो एक आवाज़ बिल्कुल कुंवर के शब्दों में 'किल्टे' से सेवक के नाम आई। सेवक ने इसे एक अपनी कल्पना का बहम समझा परन्तु यही आवाज़ जब पुनः आई तो वह सुनने पर विवश हो गया। उसने पुछा कि 'क्या बात है' ? वही आवाज़ फिर आई कि 'उसे प्यास लगी है और वह उसे पानी पिलाए'।

उस पानी से रहित धार पर कहां से पानी होता भला ? इसी आवाज़ से सेवक ने कहा कि दरिया दूर है और पानी का मिलना असम्भव है परन्तु लाश ने ज़ोर दिया कि वह वहीं छड़ी से खोदे तो वहां पानी मिल सकता है। इसे उसने दैविक शक्ति समझा और अनुसरण किया ; वह जमीन खोदने लगा तो उसे पहले सूखी मिट्टी की एक फांक फिर शीलापन और फिर पानी जो बिल्कुल दरिया के पानी के मटमैले रंग का था, निकलता दिखाई दिया। पानी की धूल को बैठने का वह इन्तज़ार करता रहा परन्तु पानी का रंग न बदला। इसी बीच फिर एक आवाज़ आई कि वह उसे पानी पिलाये। (यह पानी आज भी सतलुज के पानी का सा रंग बदलता रहता है)।

सेवक ने शंका से कहा कि तुम्हारा सिर धड़ से अलग है पानी कैसे पियोगे।

इस पर लाश से आवाज़ आई कि वह धड़ से सिर जोड़ दे। ऐसा ही किया गया और सेवक ने अपने चुल्लू से पानी लाश के मुंह में लगा दिया। इसी बीच एक गर्जन हुई और वह लाश एक पत्थर में बदल गई। सेवक इस गर्जन से घबरा गया। एक आवाज़ पत्थर से आई कि वह कुर्गन है यहां का देवता और तुम मेरे सेवक हो।

तुम्हें भी प्यास लगी है तुम भी पानी पी सकते हो, कि कर्तव्य विमूढ़ सेवक ज़रा सा चौंका फिर एक अबोध बालक की तरह पानी पीने लगा। पानी पीते ही उसे एक शक्ति की अनुभूति हुई और उसी तेज़ गर्जन के साथ वह भी वहीं ढेर हो गया और एक पत्थर में बदल गया।

जंगल के विरान रास्ते में पड़े ये दो दैविक पत्थर किसी प्रकार से फिसल कर एक झाड़ी में अटक गये।

पहाड़ में आज भी पशु चराने का रिवाज है। पास के गांव के पशु उस जंगल में चरते जाया करते थे। उनकी दुधारु गाय अब घर में दूध नहीं देती थी। ग्वाले पर शक किया गया। उसका पीछा किया गया परन्तु कुछ न पाया। एक दिन दोपहर को एक गाय को लोगों ने झाड़ी की ओर दौड़ते देखा तो पाया कि वह वहां स्वयमेव ही दूध दे रही है और वह झाड़ी में पड़ रहा है। इस पर लोग वहां गये तो एक आवाज आई कि वह कुर्गन देवता है और तुम मुझे यहां से लेकर चलो तो मैं तुम्हारी रक्षा किया करूंगा।

दैविक शक्तियों में विश्वास रखने वाले लोगों में से एक ने उसे उठाया और मढ़ोड़ घाट में मनसा देवी के मन्दिर में ले आये। मनसा देवी से भाई का रिश्ता जोड़ कर कुर्गन देवता वहां पर निवास करने लगा। और इस प्रकार कुर्गन देवता का नाम मढ़ोड़ देवता पड़ा।

देवता की शक्ति बहुत बड़ी थी। देवता के नाम से मढ़ोड़ घाट में एक बड़ा बाग है जिस में तरह-तरह के फल लगे रहते हैं। पहाड़ी क्षेत्र होने से देवता का पुजारी एक सभ्य नागरिक तो था परन्तु वन में रहने से वह एक भीमकाय व्यक्ति था! उसके सारे शरीर में बाल थे, बड़ी-बड़ी दाढ़ी, उलझे बाल वह देवता की सेवा कर रहा था।

उस समय राजा 'कहलूर' (बिलासपुर) का क्षेत्र काफी विस्तृत था। उसके 'प्यादे' (सिपाही) 'कर' लेने उस क्षेत्र में भी गये थे। भूख से सताये वे बाग में लगे पक्के फलों को खाने बूटों सहित पेड़ों पर चढ़ गये। पुजारी को यह बुरा लगा और उसने उन्हें ऐसा करने से रोका तथा उनके इज्जाजत लेने का कारण पूछा तो उन्होंने उसे मार काटने की धमकी दी। इस पर पुजारी ने क्रोध में आकर उनकी तलवारों को छीन कर दैव शक्ति से अपने उदर में जमा दिया। सिपाही इससे धबरा गये और बिना काम निपटाये राजा के पास फरियाद करने लगे। राजा को पहले तो क्रोध आया फिर उसने कहा कि उस राक्षस प्राणी को बड़े आदर सहित उसके दरबार में लाया जाये वह उसकी शक्ति की परीक्षा करेगा तथा पता करेगा कि ऐसी कौन सी शक्ति इस युग में पैदा हो गई है।

(आज जलमग्न) कुछ समय बाद वही राक्षस रूपी पुजारी 'सांडू' मैदान में राजा के समक्ष अपनी परीक्षा के लिये खड़ा था। राजा के आदेश पर उसे अपनी परीक्षा के लिये कहा गया। पुजारी के कहने पर ढोल, नगाड़े, बाजे बजने लगे और देवता का आह्वान किया जाने लगा। राजा उसकी ठिठोली भी करता रहा परन्तु कुछ ही क्षणों में उसमें एक शक्ति आई और वह लहरा गया। इसी लहर के बीच उसने चार तलवारें निकाली और राजा से अपनी दो छांटने को कहा गया।

राजा उसकी शक्ति से काम्प गया और इस चुनाव की उसने असमर्थता प्रकट की। राजा की इस असमर्थता से उसी राक्षस पुजारी ने दो तलवारें अलग करके अपनी दो तलवारें पुनः निगल ली तथा राजा से कहा कि देवता की परीक्षा नहीं लेनी चाहिये।

राजा उसकी इस परीक्षा से काफी प्रभावित हुआ। उसने पूछा कि वह देवता की क्या सेवा कर सकता है। इस पर बोला की वह राजा के महल से एक नगाड़े की जोड़ी ले जाना चाहता है तथा वहां उसे (देवता को) उसी मैदान में प्रतिवर्ष मेले के लिय बुलाया जाये।

इस प्रकार अपनी शक्ति आस्था की धाक कहलूर में भी चली गई। वहां पर प्रतिवर्ष इस देवता के नाम से एक मेला होने लगा जिसे वहां की भाषा में 'जात्ता' या 'जात्रा' कहा जाता है (अब यह मेला नहीं होता)।

अर्की के किले का किस्सा

यह बात महाराजा ध्यान सिंह के समय की है जब किले में दो बातें अनोखी थीं। एक तो किले में दहाड़ होती रहती थी दूसरे कोई किले के खास स्थान को गन्दा कर दिया करता था। इसके इलावा एक बात

और भी थी कि राजा के कोई उत्तराधिकारी नहीं हुआ था । महाराजा इससे काफी परेशान थे । कुंवर मान सिंह राजा के वजीर थे। वे काफी यत्न कर रहे थे कि किसी तरह राजा इस चिन्ता से मुक्त हो।

एक दिन राजा दिवाने आम में बैठे थे कि उन्हें कुछ ढोल-नगाड़े बजने की आवाज सुनाई दी । उन्होंने अपनी रियासत में इस प्रकार की आवाज और उसके तात्पर्य के बारे में अपने वजीर से पूछा।

वजीर अपनी रियासत के बारे में पूरी खबर रखते थे अतः तुरन्त बोले यही पड़ोसी वावांह गांव में यह देवता मढ़ोड़ जो 'ग्लोटी' कनैत ठाकुरों का है, को मेले में ले जा रहे हैं ।

निराश राजा को इस मेले का पता तो था परन्तु उसे समय का ज्ञान नहीं था अतः वह बोल पड़े क्या करेगा यह देवता वहां जाकर ?

इस पर वजीर बोले महाराज आप जानते हैं देवता मन की बातों को पूरा करता है। देवता में भगवान् का रूप है और इसके पुजारी काफी पहुंचे हैं।

राजा के चेहरे पर जरा सी रौनक आई और वे बोले 'क्या तुम उसे यहां बुला सकते हो'

'महाराज की आज्ञा से मैं अभी बुलवाता हूं'

इस पर उसने हलकारे को भेज कर देवता को बुलवा लिया। देवता आगे जाने की बजाये राज दरबार में आ गया । राजा ने अपना मन्तव्य प्रकट किया कि पहले तो देवता खेले फिर हम प्रमुख पुजारी से प्रश्न करेंगे । यदि प्रश्नों का उत्तर सही न दिया गया तो उसे समेत देवता पंचायत के कैद कर दिया जायेगा।

राजा के आदेश से बाजा बजा और पुजारी जो कि एक लुहार था 'हिंगरने' (लहर में आने) के लिये तैयार हो गया ।

उस समय कुछ लोगों की धारणा में फर्क आ गया था और वे कभी-कभी सत्य को देवता के रूप में झूठला देते थे तथा जनता को ठग लेते थे । आदत वश लुहार हिंगरने (लहर में आने) लगा चीखा सांकल हिलाई अपने को उससे पीटा फिर तुरन्त शांत हो कर राजा से मुखातिब होकर पूछा 'महाराज क्या दुःख है ?'

इस पर वजीर ने कहा 'पुजारी जी, किले में दहाड़ होती है, किले के एक खास स्थान को कोई गन्दा कर जाता है और राजा के लड़का नहीं है तो किस रानी के लड़का होना है ?

इस पर आदत से मजबूर पुजारी बोल बैठा कि उसकी शक्ति माता सब कुछ ठीक कर देगी।

अपनी इच्छा के अनुकूल उत्तर को न पाकर महाराज ने उसे देवता सहित कैद करने के आदेश दे दिये।

इसे देवता ने शायद अपना अपमान समझा और बजते बाजे के साथ ही आचानक एक तेज गूंज उठी और एक नवयुवक जो देवता की सेवा में था उछल कर आगे आया । वह पुजारी से ज्यादा आवेश में हिंगरने (लहर में आने) लगा बाजा तेज हो गया और प्रत्येक को ऐसा लगा मानो वे भी उसी लहर में हो।

Scanned with CamScanner

बाजा रुका-लहर रुकी और नवयुवक राजा से बोला कि उसे देवता के आगे जूते पहन कर नहीं आना चाहिये। देवता उससे भी बड़ा है।

राजा उसकी बात मान कर अपने प्रश्नों का उत्तर चाहने लगा। इस पर युवक बोला कि राजा का किला सुकेत से लाई गई इमारती लकड़ियों से बना है। ये लकड़ियां उसके (देवता) के बाग की हैं। अतः राजा वहां पहले बाग लगायें फिर यह सब समाप्त हो जायेगा।

इसी तरह उसका कोई रिश्तेदार जो उसकी शान से जलता है, ही उसके सुन्दर महल में ऐसी गन्दगी फैला रहा है अतः उसे निकाल दे।

इसके साथ ही राजा की सुकेती रानी से दस महीने बाद एक पुत्र उत्पन्न होगा जो राज्य का उत्तराधिकारी बनेगा। इसके साथ ही देवता अपने स्थान को जाने लगे।

राजा उसके उत्तरों से प्रभावित हो चुका था अतः पूछा गया कि देवता की वह क्या सेवा कर सकता है। इस पर देवता स्थित युवक ने अपने हाथ की लोहे की छड़ को गाड़ दिया कि वह प्रतिवर्ष यहां इसी दिन आया करेगा।

विश्वास के पीछे लोगों की ठगी

समय के साथ-साथ लोगों की आस्था बढ़ती गई और देवता के जगह-जगह मन्दिर बनने लगे। इनमें मढ़ोड़घाट के अलावा प्रमुख ये हैं—मांगू, संघोई और कराड़ाघाट यद्यपि इसके दूसरे छड़ी स्थान कई हैं परन्तु मन्दिर स्थान यही चार हैं।

देवता का नाम सारी रियासत में जाना जाता है और लोग इससे अपनी मनौतियां मांग कर इसका मेला करते हैं।

प्रायः मार्च के महीने के बाद का समय काफी अनुकूल कहा जाता है। गेहूं की फसल आने ही वाली होती है। कम्पा देने वाली सर्दी दूर हो गई होती है। लोग आसानी से इधर-उधर आ जा सकते हैं। सबसे बड़ी बात यह कि दिन बड़े हो गये होते हैं।

वैसे देवता का 'निर्भाला' यानि एक या दो पुजारी प्रदर्शन तो कभी भी हो सकता है। इसमें देवता नहीं जाता केवल पुजारी ही जाता है। और वाद्य यन्त्र वहीं पर कर लिये जाते हैं।

मैं चूंकि इस पुजारी कुल से हूं तो यह दावे से कह सकता हूं कि देवता कभी भी मांस नहीं मांगता न ही उसे किसी वस्तु की आवश्यकता होती है यह तो एक भगवान की तरह धूप का ही भूखा है।

पहले जो अमीर होते थे देवता की पंचायत को बकरा काट दिया करते थे फिर पुश्त बदली यह बकरा देवता को चढ़ाया जाने लगा।

मजे की बात यह है कि देवता की बकरे को स्वीकृत करने की परम्परा भी बना दी गई कि यदि देवता का पानी बकरे पर डाला जाये और उससे बकरा एकदम हिले तो वह देवता की स्वीकृती होती है। यदि इसे आदमी के साथ परखा जाये तो यह गलत हैं क्योंकि पानी चाहे देवता का हो चाहे साधारण इसे ज्यों ही शरीर पर डाला जाता है एक सिहरन दौड़ जाती है और उस सिहरन के लिये सारा शरीर हिल जाता है। यदि इसकी हवा और पेड़ से तुलना दी जाये तो अतिशयोक्ति न होगी । लोग कहीं-कहीं यह भी कहते सुने गये हैं कि देवता के लिये कम से कम एक बकरा तो आवश्यक है । बेचारे निरक्षर अबोध देवता में आस्था रखने वाले लोग मान जाते थे और कभी-कभी कर्ज लेकर भी यह देव इच्छा पूरी करते थे ।

मैंने कई बार यह कहते भी सुना है कि अमुक सेवक की यह इच्छा पूरी न हुई क्योंकि उसकी देवता को 'मानता' थी और बेचारा अनजान सेवक अपने दुःखों से दबा कहता कि उसकी तो कोई मानता नहीं मगर हो सकता है बुजुर्गों की हो तो वह उसे पूरी कर देगा ।

सिलसिला चलता रहा । आज यदि उन पुराने सेवकों-पुजारियों से पूछा जाये कि यह परम्परा क्या है? तो वे इसके प्रत्युत्तर में कुछ नहीं कहते । बस केवल इतना कि देवता के बारे में प्रश्न नहीं करने चाहिये ।

सर्दी का मौसम समाप्त । मार्च का महीना लगभग समाप्त ही हुआ चलता है कि लोगों में एक लहर दौड़ जाती है। खेतों में काम करते वे कभी-कभी आपस में बातें करते रहते हैं कि वे दानोघाट के मेले को जायेंगे। वे अपने लिये नये कपड़े सिलवा कर जायेंगे ।

दानोघाट का मेला

समय कटता जाता है फसल पक जाती है और लोग खास कर नौजवान कुंवारे और विवाहित अपना काम समाप्त करने में लग जाते । मक्की की बिजाई शुरू हो जाती है कभी-कभी बरसात की या स्थानीय वर्षा की झड़ी पड़ जाती है । और मक्की बीज दी जाती है।

कनक कुछ खलिहान में और कुछ घर पर आ जाती है। चौदह ज्येष्ठ को यानि सताईस मई को नौजवान अपने कपड़ों को धो कर सिरहाने में प्रेस करने को रख देते हैं । कुछ आज जो पढ़-लिख गये हैं कभी कभी लोहा भी कर लेते हैं । और पन्द्रह ज्येष्ठ को सुबह अपनी यात्रा पर चल देते हैं।

बारह बजे देवता की सवारी पूरे लाव लस्कार के साथ बाजे और शहनाईयों के बीच मेला स्थल पर पहुंच जाती है ।

देवताओं की मिलनी होती है क्योंकि वे अपने दूर-दूर के स्थानों से आते हैं।

मेले में एक खुशी की लहर दौड़ जाती है। जगह-जगह पर हलवाईयों की दुकानों से जलेबी बनने की सुगन्ध उनके आगे सजी तरह-तरह की मिठाईयां एक ओर मन्यारी वाला है तो दूसरी ओर खरबूजे वाला तरबूज वाला तो कहीं चुड़ियां वाले ।

ऊपर के हिस्से में फोटो और हिडोंले वाले होते हैं। लोग अपनी पसन्द की मिठाई अपनी पसन्द की मन्यारी अपने उल्लास के लिये झूला तो लम्बी याद के लिये फोटो बुजुर्गों के लिये ताजा तरबूज और खरबूजा लेते हैं ।

Scanned with CamScanner

ऐसा लगता है मानों आज सारी खुशी यहीं पर है । गांव के लोग बेचारे गरीब होते हैं । उनके पास धन की कमी है और वे इस धन से ही अपनी बहुत सी इच्छाओं की अधिक सस्ती चीजों को लेकर पूरा करते हैं ।

दुकानदार तो बस यही सोचते है कि उनका सारे वर्ष का लाभ बस यहीं से पूरा होना चाहिए । मन्यारी की घटिया वस्तुयें धूल में सनी मिठाईयां ये लोग बड़े चाव से खरीद जाते हैं ।

जगह-जगह के लोग आपस में मिल कर अपने-अपने विचारों का तबादला करते हैं । अपनी मित्रता को बढ़ावा देते हैं ।

इसी तरह सायं आ जाती है । तीनों पुजारी अपना-अपना 'चवंर मुठा' जोकि सुरागाय की पूंछ के बालों का होता है उठा कर देवता का आह्वान करने लग जाते हैं। दूसरा पंडित पुजारी धूप लेकर घण्टी बजाता रहता है । बाजे का ताल भी बदल जाता है । और फिर देवता को कभी सच्ची तो कभी झूठी लहर आ जाती है । श्रद्धालू अपने-अपने प्रश्नों के उत्तर तथा कनक के दाने ले जाते है। जिससे वह अपने को महा सुरक्षित समझतेहैं । और फिर उसके बाद देवता अपने में अन्तंध्यान होकर पुनः एक वर्ष के लिये बिदा हो जाता है ।

सरजरी विभाग,
हि0 प्र0 मेडिकल कालेज,
शिमला ।

बौद्ध तीर्थ रिवालसर

तोबदन

रिवालसर हिमाचल प्रदेश का एक प्रमुख बौद्ध तीर्थ स्थान है। यह कस्बा मंडी शहर से तेईस किलोमीटर दूर है जहां बस से एक घण्टे में पहुंचा जा सकता है। कस्बे के साथ ही लगभग डेढ़ किलोमीटर घेराव की एक छोटी सी झील है जिसमें एक छोटा सा द्वीप तैरता रहता है। यह अदभुत प्राकृतिक दृश्य अत्यन्त आकर्षक है। यहां १२ एक-एक बौद्ध और हिन्दू मन्दिर भी है।

इस पवित्र और प्रसिद्ध तीर्थ की यात्रा के लिए लोग लाहौल-स्पिति, किन्नौर, लद्दाख तथा नेपाल आदि दूर-दूर के इलाकों से आते हैं। लाहौल और स्पिति से लोग ज्यादातर सितम्बर और अक्तूबर के मास में आते हैं क्योंकि इस समय तक लोग फसल का सारा काम समाप्त कर चुके होते हैं और साथ ही कुल्लू का प्रसिद्ध दशहरा भी देखने को मिल जाता है। अन्य स्थानों से लोग प्रायः सर्दियों में आते हैं।

रिवालसर का प्रसंग भारत के प्राचीन ग्रन्थ स्कन्ध पुराण में मिलता है[1]। लेकिन तिब्बती साहित्य में इसका वर्णन स-होर अथवा ज़-होर नाम से मिलता है, जिसका अर्थ है 'झील'[2] और तिब्बती लोग भी इसे स-होर के नाम से ही जानते हैं[3]। परन्तु लाहौल, स्पिति और किन्नौर आदि के लोग आजकल इसे 'मृछों' नाम से जानते हैं। जिसका मतलब है 'झील'।

यहां का प्रसिद्ध बौद्ध मन्दिर झील के किनारे पर ही स्थित है। मन्दिर देखने में बहुत पुराना नहीं और न ही यहां कोई पुरातात्विक प्रमाण उपलब्ध हुआ है जिससे कि मन्दिर की प्राचीनता का अनुमान लगाया जा सके। फिर भी ऐसा समझा जाता है कि इस मन्दिर की स्थापना प्राचीन काल में हुई और उसके बाद यह बार-बार टूटता-बनता रहा। वर्तमान मन्दिर का उन्नीसवीं सदी के अन्त में पुनर्निर्माण हुआ था[4]।

मन्दिर आठवीं सदी के प्रसिद्ध बौद्ध योगाचार शाखा के तान्त्रिक आचार्य पद्मसंभव को समर्पित है, जो तिब्बत के लामावाद के संस्थापक भी माने जाते हैं। पद्मसंभव की लगभग डेढ़ मीटर ऊंची मूर्ति अन्य चौदह मूर्तियों के केन्द्र में प्रतिष्ठित है इसके अतिरिक्त भित्ति तथा थंका में भी उनको चित्रित किया गया है।

कुछ विद्वानों का मत है कि पद्मसंभव रिवालसर में पैदा हुए थे,[5] लेकिन यह विचार त्रुटि पूर्ण है[6]। फिर भी रिवालसर से पद्मसंभव का गहरा सम्बन्ध है और यही सम्बन्ध रिवालसर की प्रसिद्धि का मुख्य कारण है।

---

1. Man Mohan Singh: A History of the Mandi State, p. 14.
2. S. C. Dass: Tibetan English Dictinary, p. 1089.
3. A. H. Francke: Antiquities of Indian Tibet, Part 1, p. 123.
4. A. H. Francke: op cit, p. 122
5. Man Mohan Singh: op. cit., p. 15.
6. D. L. Srellgrove: Buddhist Himalaya, p. 173.

Scanned with CamScanner

पद्मसंभव का जन्म उद्यान में हुआ था ।[1] उद्यान से वे स—होर (रिवालसर) आए । उनकी अद्वितीय शक्ति और गुणों से प्रभावित होकर रिवालसर के राजा आर्षधर ने अपनी पुत्री राजकुमारी मण्डारवा (पूरा नाम मण्डारवा कुमारी देवी), जो पहले ही पांच सौ भिक्षुणियों सहित सद्धर्म में दीक्षित हो चुकी थी, से उनका विवाह कर दिया[2] । राजा ने अपना राज्य भी पद्मसंभव को सौंप दिया और स्वयं प्रव्रज्या धारण कर ली।

बौद्ध धर्म रिवालसर में पहले पहल कब पहुंचा, इस विषय में मन मोहन सिंह का अनुमान है कि कनिष्क (इ० दूसरी शती) ने यहां के लोगो को प्रथम बौद्ध धर्म में परिवर्तित किया ।[3] परन्तु अशोक (इ० पूर्व तृतीय शती) के द्वारा भेजे गए प्रचारक कश्मीर आदि अन्य देशों के साथ-साथ हिमाचल प्रदेश में भी पहुंच चुके थे[4] । बल्कि कश्मीर में तो अशोक से भी पहले बौद्ध धर्म प्रवेश पा चुका था[5] ।

सातवीं शती तक रिवालसर में बौद्ध धर्म का प्रभाव उल्लेखनीय नहीं था । परन्तु निकट के प्रदेश कुलूत (कुल्लू) में बौद्ध धर्म का प्रसार उच्च स्तर पर था । ह्युन सांग ने अशोक राजा द्वारा प्रस्थापित एक स्तूप के अतिरिक्त लगभग बीस संघाराम और एक हज़ार भिक्षुओं को देखा[6]।

लेकिन आठवीं शती के मध्यकाल में रिवालसर का महत्त्व एक दम बढ़ गया जब चमत्कारी आचार्य पद्मसंभव यहां पधारे। इसके अतिरिक्त पद्मसंभव के समकालीन, मण्ढारवा के भाई,[7] 'सुविख्यात बौद्ध आचार्य शांतरक्षित का जन्म भी यहीं हुआ था।[8] शांतरक्षित तिब्बत के राजा स्त्री-स्रोङ-ल्दे-बचन (ई० 740—786) के राजगुरु रहे और उन्होंने ही राजा पद्मसंभव को तिब्बत बुलाने की सलाह दी थी ।

बौद्ध धर्म नवीं शती में भी रिवालसर में काफी क्रियाशील रहा । रल-प-चन (ई० 816—836) के समय बहुत सी पुस्तकें रिवालसर से तिब्बत ले जायी गयीं और तत्पश्चात ग्लङ-दरम (ई० 836—842) के समय बहुत से ग्रन्थ नष्ट होने से बचाने के लिये तिब्बत से यहां लाए गए ।[9]

दसवीं शती तक बौद्ध धर्म का प्रभाव यहां क्षीण पड़ गया । यदि पहले रिवालसर बौद्ध शिक्षा का केन्द्र रहा हो,[10] तो इसका यह महत्त्व अब तक समाप्त हो चुका था । नवीं शती के बाद तिब्बती साहित्य में जहां तक मुझे ज्ञान है, रिवालसर का वर्णन नहीं मिलता है । दसवीं शती के उत्तरार्ध में तिब्बत के विद्वान और महान् अनुवादक, रिन-छेन-ब्ज़ङ-पो (958-1055), किन्नौर, स्पिति और लाहौल होते हुए संभवतः कुल्लू और जालन्धर से होकर अध्ययन के लिये कश्मीर गए, लेकिन उनकी यात्रा विवरण में रिवालसर का नामोल्लेख नहीं है ।

1. W. Y. Evans-Wentz: the Tibetan Book of the Great Liberation, p. 109.
2. Ibid, p. 147.
3. Man Mohan Singh: op. cit., p. 15.
4. पी. वी. बापटः बौद्ध धर्म के 2500 वर्ष, पृ. 39.
5. Sarla Khosla: History of Buddhism in Kashmir, p. 15.
6. Samuel Beal: Si-Yu-Ki, p. 177.
7. C. A. Waddell: Buddhism and Lamaism of Tibet, p. 245.
8. A. H. Francke: op. cit., p. 123.
9. Ibid., p. 123.
10. Manmohan Singh: op. cit., p. 15, A. H. Erancke, op. cit, p. 123.

Scanned with CamScanner

प्रसिद्ध सिद्ध लामा र्गोद-छ ङ-प (तेहरवीं शती), उ-र्ग्यन-प (तेहरवीं शती) तथा सुतग-छङ-रस-प (1590-1655) के यात्रा-वर्णनों में भी रिवालसर का हवाला नहीं मिलता है, यद्यपि उन्होंने नगरकोट (कांगड़ा), ज्वालामुखी और जालन्धर का उल्लेख किया है । फिर भी साधारण जनों के लिए रिवालसर का महत्त्व तीर्थ के रूप में बना रहा, जो आज भी है ।

तीर्थ स्थान होने के साथ-साथ रिवालसर का महत्त्व आज सांस्कृतिक केन्द्र के रूप में भी है । तिब्बती पंचांग के अनुसार प्रथम मास के दस तारीख को हर वर्ष यहां—'छ,शु' का मेला मनाया जाता है जिसको देखने के लिए दूर दूर से लोग आते हैं। लामा लोग मन्दिर के प्रांगण में मुखौटा पहन कर धार्मिक नृत्य करते हैं। एक शोभा मण्डली अंत में निकाली जाती है जिसमें पद्मसंभव प्रमुख स्थान ग्रहण करते हैं तथा उनके साथ शांतरक्षित भी होते है। पद्मसंभव की एक छोटी मूर्ति को पालकी में बिठा कर अनेकों पोथियों के साथ झील की परिक्रमा के लिये ले जाया जाता है ।

रिवालसर धार्मिक और सांस्कृतिक संगम स्थल भी है । बौद्ध मन्दिर के निकट ही एक अत्यन्त प्राचीन हिन्दू मन्दिर है। कहा जाता है कि ऋषि लोमष यहां रहे ।[1] और उन्होंने तपस्या की[2] रिवासलर का एक महात्मय भी है[3] । वैशाखी का यहां बहुत बड़ा मेला लगता है ।

रिवालसर इस प्रकार आज ऐतिहासिक, धार्मिक और सांस्कृतिक सभी दृष्टियों से बहुत महत्वपूर्ण स्थान है ।

जी-367, नरोजी नगर,
न्यू देहली-110016.

1. J. Hutchinson and J. Ph. Vogel: History of the Punjab Hill States, Vol II P. 373.
2. Man Mohan Singh: op. cit., p. 11.
3. J. Ph. Vogel: J. A S B. Vol. LXXI, Part, 1,1902 P. 39.

कुल्लू की भेखली देवी
देवी जगरनाथी या भुवनेश्वरी देवी

—'चन्द्रशेखर बेबस'

आज कल कुछ दिनों से कुल्लू और आस पास के दूसरे जिलों के धार्मिक वर्ग में भेखली देवी का नाम व्याप्त है जिसे मात्र कुल्लू शहर व आस पास का कुछ क्षेत्र जानता मानता था। काफी चर्चा का विषय बना हुआ है कारण कि इस मन्दिर में अभी-अभी एक सहस्त्र चंडी नामक यज्ञ सम्पन्न हो चुका है, जिस में मंडी, कांगड़ा, हमीरपुर, बिलासपुर, सोलन और शिमला जिलों से पंडित लोग आये थे। इलाके के लिए यह अभूतपूर्व समारोह रहा परन्तु लेख का विषय तो यज्ञ न हो कर भेखली देवी है अतः इसी ओर आगे बढ़ना है। क्योंकि यह नाम जो अटपटा सा है।

'भेखली' एक गांव है जो सुलतानपुर (कुल्लू) नगरपालिका के सुलतानपुर क्षेत्र के सीधा ऊपर दो-एक किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। इस गांव के मन्दिर में स्थापित होने के कारण देवी का नाम 'भेखली देवी' पड़ना युक्ति संगत जान पड़ता है। इसके अलावा और भी कारण देवी के नाम के साथ भेखल शब्द जोड़ने वाले बताये जाते हैं, यथा देवी का भेखल के झाड़ के मूल को उखाड़ने पर प्रकट होना (2) मन्दिर के गर्भगृह की चौखट भेखल की लकड़ी का होना, (3) देवी का ढौंस (देवता का मुख्यवाद्य जिसका देवता के कर्मकाण्ड में बजाया जाना जरूरी होता है) भेखल की लकड़ी का है, (4) देवी का रथ अर्थात् पालकी जिस पर देवी की सवारी निकलती है वह भी इसी लकड़ी की है—गांव या देवी ही क्यों यह समूची धार ही (शहर से मन्दिर तक) भेखली धार कहलाती है, जैसे कहूधार, कशांमल धार, धौला धार आदि। धार पहाड़ को कहते हैं।

'भेखल' एक वनस्पति है जंगली कांटेदार झाड़ी। इसका महत्त्व वनों में वही होता है जो खेतों में खर पतवार का बाड़ आदि के लिये। यह निर्दयता से काटी जाती है, इस में जामुन के रंग ढंग के कुछ छोटे फल लगते हैं जो खाये तो नहीं जाते परन्तु इन का तेल बड़ा स्नेहिल होता है जो खाया भी जाता है। भेखल के साथ ही इस की सहेली कशांमल—कशमल-रसौती जिसे आयुर्वेद में दारू हल्दी कहा जाता है होती है। निघंटु आदि भेखल की पहचान नहीं हो सकी।

वैद्यक दृष्टि से भेखल का महत्त्व भले ही नगण्य हो, परन्तु स्थानीय मन्त्र तंत्र में इस झाड़ी का बड़ा महत्त्व है, इस की डाली से सारे तंत्र मंत्र भूचर खेचर-जलज औपदेशिक सहज कुलज माला डाकिनी शाकिनी अंतरिक्ष चारी घोर महाबला डाकिनियां भूत-पिशाच-यक्ष-गंधर्व-राक्षस ब्रह्म राक्षस बेताल कूष्मांड भैरव आदि आदि समस्त अभिचारों पर मंत्र पढ़-पढ़ कर भेखल की टहनी से झाड़ा उतारा जाता है। जब कोई नया पशु-बहू-बालक या रोगी गांव में लाया जाता है तो उस के ऊपर भेखल की टहनी वार कर (ग्राम प्रवेश से पहले) पथ पर पत्थर से दबा कर रखी जाती है कि कोई अलाय बलाय साथ आ गयी हो तो यहां से आगे साथ न जाये। यहां सिंह (भादों) की संक्रांति को डायनों का साजा माना जाता है उस दिन प्रत्येक गृहस्थ भेखल की डालियां तोड़ कर अपने-अपने घरों, गोशालाओं आदि के छाजन या भित्तियों में खोंस कर आगंतुक बाधाओं से सुरक्षा

प्राप्त करते हैं। गूर लोग (जो स्थायी रूप से देवता के अधिवक्ता या प्रतिनिधि की भूमिका निभाते हैं तब तक उन में देवता का प्रवेश होता है उतने काल तक उसे ही देवता माना जाता है परन्तु उत्तर (देवता उतर) जाने पर उस को कोई विशेष महत्त्व प्राप्त नहीं होता) देवता की ओर से शाई (सरसों) चकमक पत्थर का चूरा और भेखल की मंजरियां मिला कर गिराते हैं जिसे दबोचने के लिए बड़ी छीना-झपटी होती है। इस मिश्रण को लोग सुरक्षार्थ घरों में छिड़कते हैं।

इस प्रकार बिन बुलाए मेहमान जैसी उपेक्षित वनस्पति यह भेखल लोक जीवन के लिए अपेक्षित भी कम नहीं है।

यह तो रहा भेखल के इतिहास का लोक पक्ष जिस के कारण यहां की देवी का नाम भेखली देवी पड़ा परन्तु भेखल से सम्पर्क होने से पूर्व इस का नाम क्या था यह बात जानना जरूरी है,

पंडिताऊ ढंग के लोग इस देवी को भुवनेश्वरी बतलाते हैं। देवी की उपासना वाले वर्ग को शाक्त कहा जाता है अर्थात् शक्ति के उपासक जैसे शिव से शैव और विष्णु के वैष्णव कहलाते हैं। शाक्त मत में आगम अर्थात् तंत्र की प्रधानता है। तंत्र शास्त्र एक समृद्ध शास्त्र है जिसे निगम अर्थात् वेद के समानांतर माना जाता है। इस तंत्र में देवी के दस भेदों की एक श्रृंखला का भी बड़ा महत्त्व है जिन की उपासना विविध फल दायिनी बतायी जाती है वे दस भेद 'दश महा विद्या' नाम से प्रख्यात है यथा 1. श्यामा 2 तारा 3 षोड़शी 4 भुवनेश्वरी 5 भैरवी 6 छिन्न मस्ता, 7 धूमावती 8 बगला मुखी 9 मातंगी 10 कमलात्मिका इन में कहीं कहीं क्रम भेद पाया जाता है और नामों के भी भिन्न भिन्न पर्याय मिलते हैं परन्तु भुवनेश्वरी के संदर्भ में ये दोनों बातें नहीं हैं। यह इसी नाम से चतुर्थ ही आती हैं। भुवनेश्वरी देवी के अनेक स्थानों में मंदिर पाये जाते हैं। और ऐसे परिवारों की भी कमी नहीं जिनकी भुवनेश्वरी कुल देवी है अतः भेखली में भी भुवनेश्वरी देवी का मंदिर होना असम्भव नहीं परन्तु किसी के मान लेने मात्र से तो कोई बात सत्य नहीं ठहरतीउस के लिए कोई आधार प्रमाण होना चाहिए। प्रचुर मात्रा में प्राप्त शाकत वाङमय का समर्थन उसे मिलना चाहिए परन्तु ऐसे प्रमाण किसी ने अभी नहीं दिए कि अमुकामुक शास्त्रीय प्रमाण इस देवी के भुवनेश्वरी होने के हैं। इसी शाक्त साहित्य में जहां महा विद्यालयों के नाम और भेद लिखे हैं वहीं इन के पृथक पृथक लक्षण और स्वरूप भी वर्णित हैं और चित्रित या रचित मूर्तियों के रूप सिर, बाहु, जंघा, आयुधों, वाहनों और मुद्राओं से उन्हें पहचाना जाता है कि कौन देवता या देवी है। पुरातत्व भी नहीं इन्हीं माध्यमों से जांचते हैं। किसी मंदिर में स्थापित देव विग्रह के दर्शन कर के जानकार लोग पता न रहने पर भी पहचान लेते हैं। पता न होने पर भी कि किस देवता को हम देख रहें हैं। साधक लोग उपास्य देव-देवी के अवयवों को अपने अंगों में न्यस्त कर के शास्त्रों में वर्णित उपास्य के लक्षणों द्वारा उस के स्वरूप की कल्पना करके मंत्र जप आदि करते हुए उस स्वरूप का मन और मस्तिष्क में ध्यान करते हैं ऐसा ही ध्यान देवी भुवनेश्वरी का भी शास्त्रों में वर्णित है यथा उद्यद्दिन द्युति मिन्दु किरीटां तुंग कुचां नयन त्रयं युक्तां

स्मेर मुखी वरवांकुश पाशां भीति करां प्रभेज भुवनेशीम् ॥

अर्थात् उदीयमान सूर्य सी दीप्ति, चन्द्रमा युक्तकिरीट, ऊंचे उरोज, तीन नेत्र, मुस्कराता मुख, चारों हाथ अंकुश पाश वर और अभय मुद्रा वाले (जिसके) ऐसी भुवनेश्वरी को भजता हूं। वास्तव में ऐसी ही मूर्तियां मंदिर के असली देवता होते हैं जिसे इधर के क्षेत्र में 'पिंडा प्राण' कहते हैं जहां से शक्ति ग्रहण करके गूर अथवा रथ संकेतों व इंगितों द्वारा देवता के विचार जनता को पहुंचाते हैं। यही स्थायी देवता होता है। यदि यहां देवी की ऐसी

Scanned with CamScanner

मूर्ति होती तो पहचानने में सुविधा होती परन्तु विडम्बना यह है कि भेखली मंदिर में कांगड़ा भवन की ब्रजेश्वरी और कुल्लू के नग्गर गांव की त्रिपुरा सुंदरी के मंदिरों के ही समान मूर्ति के स्थान पर पिंडी (बिना जलहरी का शिव लिंग) जैसा है।

लेख में इस देवी के भुवनेश्वरी होने के समर्थन के लिए इस लिए इतना प्रयत्न करना पड़ रहा हैं कि देवी ने अपने मुख से कभी अपना नाम भुवनेश्वरी न बता कर सदा 'जगरनाथी ही कहा है। अब यह भी कहा जाने लगा कि देवी कभी कभी भुवनेश्वरी भी अपना नाम बताती रही है फिर प्रश्न उठता है कि भेखली भगवती को भुवनेश्वरी नाम किसने कब और किस आधार पर दिया। एक बड़े समारोह में विद्वजनों व स्थानीय पुजारी आदि लोगों से भी इस प्रश्न का समाधान न हो सका। अब जब देवी जी भी अपना नाम भुवनेश्वरी नहीं बतलाती और मंदिर में भी ऐसो कोई समर्थनात्मक संकेत नहीं मिलता तो बात दूसरें सूत्र की ओर बढ़ानी पड़ती है। भगवती जी अपना नाम जगरनाथी (जो जगन्नाथी का तद्भव भी हो सकता है) इस आधार पर बताती हैं कि वे 'जगन्नाथ पुरी जी से आई है अन्यथा शाक्त साहित्य में जगन्नाथी का भी कहीं उल्लेख नहीं है परन्तु जगन्नाथ तो प्रसिद्ध वैष्णव धाम तीर्थ है। यहां से देवि का आना जाना नहीं। तब खोज करने पर पता चला कि आज की उत्कल (उड़ीसा) राज्य की राजधानी भुवनेश्वरी जो प्रसिद्ध लिंगराज मन्दिर के कारण मुख्य शैव तीर्थ गिना जाता है। यह शक्ति पीठ भी है इस पीठ को शक्ति विमला और "भैरव" जगन्नाथ हैं। हां प्रत्येक शक्ति पीठ के साथ जुदा-जुदा शक्ति और भैरव संबद्ध हैं। यह भुवनेश्वर जगनाथ पुरी के ही पड़ोस में स्थित है।

शक्ति पीठों की स्थापना के बारे भी कुछ जान लेना जरूरी पड़ता है। पुराणों में वर्णन है कि ब्रह्मा के पुत्र दक्ष नाम के प्रजापति ने अपने किसी अपमान का बदला लेने के लिए अपने दामाद श्री शिवजी को अपमानित करने निमित एक वृहस्पति नामक यज्ञ रचाया जिसमें शिवजी को नहीं बुलाया। दक्ष की पुत्री और शिव जी की पत्नी सती को जब पता लगा तो वह पति के लाख समझाने पर भी पिता का घर मानकर चली ही गयी और वहां जाकर अपना तिरस्कार व पति महादेव का अपमान उसे सहन न हुआ और यज्ञ कुंड में कूद कर आत्म दाह कर लिया। यज्ञ तो ध्वस्त हुआ ही साथ ही सती की रक्षार्थ भेजे हुए शिव जी के गणों ने सारा कुछ तहस नहस कर डाला और शिव जी सती के अध जले शव को कंधे पर उठा कर सर्वत्र भागते फिरे पागल से होकर। यह दशा देख देवताओं की सलाह से श्री विष्णु शिव जी के पीछे पीछे चलते हुए सती के एक एक अंग और आभूषण को अपने चक्र से काट कर गिराते चले वे अंग व भूषण जहां जहां गिरते रहें वहीं वहीं एक शक्ति पीठ बनता गया। सिंहासन या गद्दी को पीठ कहते हैं। जैसे शंकराचार्य के चार पीठ हैं — इन शक्ति पीठों की सख्यां भिन्न-भिन्न पुराणानुसार भले ही 108—77—53 या 51 हो परन्तु भुवनेश्वर पीठ सभी में शामिल है, जहां सती का नाभि देश कट कर गिरा था। क्योंकि भुवनेश्वर एक अप्रसिद्ध तीर्थ और चार में से एक धाम होने के कारण जगन्नाथ प्रसिद्ध है इसलिए जगरनाथी ही कहा जाता है। भुवनेश्वर में देवी किस नाम से स्थापित है यह अभी तक पता नहीं चल पाया यदि वहां भुवनेश्वरी ही हो तब तो सभी प्रश्नों का समाधान हो जाता परन्तु तंत्र चूड़ामणि का नीचे लिखा श्लोक किसी और ही दिशा का संकेत देता है। उत्तरे नाभि देशस्तु विरजा क्षेत्र मुच्यते। विमला सा महादेवी जगन्नाथरसु भैरवः। यह ऊपर लिखे भाव का ही मूल है। परन्तु यहां देवी विरजा लिखी है जो इस प्रकरण में एकदम अपरिचित है इस प्रकार किसी अन्तिम निष्कर्ष पर पहुंचे बिना भी हम देवी को भुवनेश्वरी पर्याय से और जगरनाथी मूल रुप में मान कर ही आगे बढ़ना चाहते हैं।

अब दूसरी उलझन यह रह जाती है कि भगवती जगन्नाथ से कैसे आई क्योंकि जगरनाथी नाम तो निर्विवाद ही है अतः जगन्नाथ से सूत्र जुड़ना ही चाहिए परन्तु लगता है जोड़ने वाले सूत्र काल के ग्रास बन चुके हैं। फिर भी एक व्यक्ति ने टूटे-फूटे दन्त कथा सूत्र कुछ सकुचाते हुए सुनाए जो इस प्रकार है। सुनाने वाला व्यक्ति

कुल्लू के महाराजा क्षेत्र के एक देवता पराशर ऋषि से संबंधित है, इन पराशर जी के साथ देवी जगरनाथी के गहरे कारोबारी संबंध हैं, यथा जब देवी के मन्दिर या रथ का निर्माण करना होता है तो प्रधान लकड़ी मुहती लकड़ी (प्रधान) पराशर के कलौण (केलो अर्थात् दयार का वन) से बड़े समारोह के साथ लाई जाती है इस में देवी के क्षेत्र के सभी देवताओं के बाजे गूर और प्रत्येक घर का एक आदमी 10–12 किलोमीटर दूर जाकर कई विधि निषेधों से लकड़ी काट कर वैसे ही जलूस के साथ विशेष व्यक्तियों द्वारा भेखली पहुंचाई जाती है। बीच में खोरी रोपा में कुछ औपचारिकता निभाई जाती है। ऐसा क्यों किया जाता है जब कि अपने ही क्षेत्र में लकड़ी की कमी नहीं इस का कुछ थोथा सा कारण उस आदमी ने यूं बताया कि भेखली की कोई विधवा ब्राह्मणी अपने बच्चे समेत तीर्थ यात्रा से लौट रही थी, सुकेत में भेंट उसकी देवी जगरनाथी से हो गई। किसी कारण ब्राह्मणी को किसी ने मार दिया। जब लड़के को मारना चाहा तो देवी बच्चे को लेकर भाग आई और कुल्लू क्षेत्र में देवता पराशर गांव कमांद के देवस्थान कलोण पहुंचीं और मन्दिर में छुपना चाहा तो वहां नरौल (पर्दा) होने के कारण उसे पकड़ कर गांव के नीचे पातक नामक स्थान पर छोड़ा गया। जाती हुई देवी ने उस बालक को कहा कि "कोई तुम से कुछ पूछे तो हकलाते हुए अस्पष्ट उत्तर देना" कहते हैं देवी से पराशर ने वह लड़का अपने लिए पुरोहित मांगा आज तक भेखली के वह ब्राह्मण परिवार देवता का पुरोहित चला आता है और साथ ही हकलाने का रोग भी बदले में पराशर जी ने देवी को अपना चिन्ह देने का वचन दिया।

आगे चल कर देवी जब भेखली गांव में प्रकट हुई तो कन्या के रूप में गांव की अन्य बालिकाओं के साथ एक क्रीड़ा स्थल पर खेलने लगी। कुछ लोग लड़कियों को जोगणियां बताते हैं वहां से ऊपर पहाड़ी पर भेड़ बकरी चराते हुए एक किसान को वह एक लड़की विचित्र सी लगी, जब नीचे आकर छिप कर उसने देखा तो सचमुच उस लड़की के पांव भूमि पर न छू कर ऊपर ही रहते थे। जब गांव की लड़कियां या जोगणियां चली गयीं तो उस किसान ने जिसका वंश आज भी मलौहणी और माछंग गांव में पालसरा नाम से मौजूद है—बालिका से पूछा कि बेटी तू किस की लड़की है, तेरा घर कहां और नाम क्या है? लड़की ने बताया कि मेरा नाम जगरनाथी है और मैं उस गुफा (मंदिर से 200–250 गज दूर एक शिला की दरार जो बाहर से तो 2 फुट चौड़ी और आगे चलकर अत्यन्त संकरी हो जाने से आगे का कुछ दिखाई नहीं पड़ता) में रहती हूं। गौहरी देवता के पहरेदार को बिठाया कि कोई गलत आदमी न आ जाये। पालसरा ने आग्रह किया कि तुम यहीं रहो तब देवी ने आकाशवाणी में वर्तमान मन्दिर वाले स्थान को पसन्द किया दूसरे दिन चरवाहे ने देखा भेखल के झाड़ के पास घना धुंआं छाया हुआ है ज्यों ज्यों वह पास आया धुंआं समाप्त होता गया और मंदिर के लिए वह स्थान चुना गया परन्तु वहां तो एक साधारण से कहीं बड़ा भेखल का झाड़ था और सारी नारायण वहां रहता था। कहते हैं देवी ने सार पांसे खेल कर नारायण से वह स्थल जीत लिया। तब नारायण ने देवी को धर्म बहिन बना कर मंदिर के पीछे की शिला अपने बैठने के लिए मांगी। मेले के समय अब भी वह वहीं बैठते हैं। देवी स्वयं उस के पास जाकर बैठती है लोग भेंट के समय दूध बरसाते हैं। उस स्थान के पास ही थान देवता रहता था। देवी ने उसे भी वहां से चले जाने के लिए मना लिया और वह शिम्ह नामक गांव को चला गया। उसका मंदिर आज भी देवी के मंदिर के गर्भ गृह के सामने वाली ड्योढ़ी के बाहर है और वह काहिका आदि उत्सवों पर अब भी आता है।

मंदिर बनाने के बारे में देवी ने बताया कि जितने स्थान पर मकड़ी जाल बुने उतना मंदिर बने। जब भेखल का वह असाधारण झाड़ उखाड़ा गया तो उस मूल के नीचे शिला लिंग निकला जो अद्यावधि देवी का पिंडा है और वह मूल इतना मोटा और लम्बा निकला कि उस लकड़ी से गर्भ गृह की द्वार साखाएं रथ के लिए लकड़ी और ढौंस बन गए तब देवी ने पराशर देव का वचन पूरा करने के लिए पराशर के कलौण से मुख्य लकड़ी लाकर मंदिर का निर्माण किया।

मंदिर बन जाने पर देवी का निवास वहां हो गया तो एक दिन सूर्य (कोई शिवजी बतलाते हैं) भगवान की दृष्टि जब देवी पर पड़ी तो उन्होंने शील भंग की कुचेष्ठा का प्रयास किया। इस पर देवी का एक वाहन भृंग

Scanned with CamScanner

रक्षक या सेवक जिसे भी नारायण ही कहते हैं आक्रामक से उलझ पड़ा। खूब युद्ध हुआ अन्त में सूर्य ने गाज गिरा कर उसकी जांघ तोड़ दी। देवी उसे मातृ तुल्य प्यार देती थी। उस की सहानुभूति में देवी ने सूर्य का बहिष्कार सा करके प्रण कर लिया कि इस निगोड़े का मुंह नहीं देखूंगी इसीलिये देवी की सवारी कभी भी धूप रहते बाहर नहीं निकलती और जब निकलती है तो देवी के आगे ईसाइयों के क्रूस जैसा एक देवता चलता है वह यही नारायण है जिसे लंगड़ा किया था और वह लटाका (लंगड़ा कर) देकर चलता है। उस की सहानुभूति में ही देवी भी लंगड़ी चलती है। कहते हैं यह नारायण भैरव या कोई सेवक जाति का देवता है। इसे हरिजन उठाते हैं जब कि देवी को धोती वाले ब्राह्मण।

मंदिर में नित्य विधिवत् पूजा होती है, गर्भ गृह में पुजारी भाटू (सहायक) और राजकुल का मुखिया ही जा सकते हैं। देवी का रथ (पालकी) भी है जो वर्ष में तीन बार शोभा यात्रा में निकलती। (1) मौर वैशाख मास में आने वाली शुक्ल नवमी, एकादशी 2 आषाढ़ में ऐसा ही होता है जिसे शाढ़णू कहते हैं, (3) विजया दशमी के दिन मंदिर के घेरे के बाहर काफी बड़ा चक्कर काट कर मंदिर में लौटती है। जगरनाथी भी अन्य कई देवताओं की भांति दसमी (दशहरा) में नहीं आती। यही परिक्रमा उन की ओर से रघुनाथ जी की हाजरी मानी जाती है। कहते हैं एक बार राजा मान सिंह (राज्य 1672–1714) ने बल पूर्वक दसमी में आने का बुलावा भेजा था उत्तर में देवी ने कहला भेजा था कि "जरा मेरा बल भी देख लेना' जब देवी की सवारी भेखली से चली तो साथ ही तूफान भी चल पड़ा। इस से ओला वृष्टि ने शहर में प्रलय मचा दी, राजा कारण भांप गया और तत्काल देवी की यात्रा रुकवा दी, उस दिन जहां से देवी लौटी थी वहां चरण चिन्ह अब भी हैं। यही देवी जगरनाथी पूर्व की ओर सामने के गांव पुइद में भी है वहां के विधि विधान भी बिल्कुल भेखली के समान हैं। परन्तु वहां का सब कुछ भेखली के सामने बहुत छोटा प्रतिलिपि सा है। देवी के इतिहास से बहुत से चमत्कारिक प्रसंग जुड़ जाते हैं। इस से भी और कुल्लू शहर में देवी का कोई मंदिर न होने से या अधिक निकट यही मंदिर होने से मातृ भक्तों की मातृत्व की भूख मिटा कर वात्सल्य प्रदान करने वाली यही एक मात्र भगवती है। इसलिए यह भगवती, कुल्लू शहर की एक प्रकार सी अधिष्ठात्री सी बन चुकी है। यहां लोक विधि और शास्त्र विधि दोनों प्रचलित हैं, इधर के लोक देवताओं की ही भांति यहां भी अभियाचक गूर के माध्यम से प्रश्नोत्तर द्वारा समाधान कर पाता है।

इस प्रकार क्षेत्र प्रसिद्ध इस देवी का यथोपलब्ध तथ्यों के आधार पर यह परिचय लिखा है। इस में भी एक-एक बात को भिन्न-भिन्न मुखों ने भिन्न भिन्न बताया है। कुछ लोग भावुकता कट्टरता चातुर्य और नीतिपरता वश बात को बदल बढ़ा या छिपा कर प्रसंग पूर्ति करते हैं। ऐसी स्थिति में पर्याप्त सावधानी के बावजूद भी मतभेद रह सकते हैं। यदि कोई युक्ति और प्रमाण देकर संशोधन कर दे या जहां जहां कड़ियां या श्रृंखला खाली रह गई है वहां की कड़ियां उपलब्ध करके कोई सज्जन प्रकरण को पूरा कर दे तो बड़ा उपकार माना जाएगा।

नमो देव्यै जगन्मात्रे शिवायै सततं नमः

—'अलोक,
ढालपुर जिला कुल्लु हि0 प्र0।

कटोच वंश के सिरताज एवं सर्वोत्कृष्ट शासक

महाराजा संसार चन्द

प्रेम पखरोलवी

देश के राष्ट्रीय इतिहास की प्रतिमा प्रायः ऐसी दर्जा मोहक और पराभूत करने वाली होती है कि हम उसके स्थानिक किंवा प्रादेशिक इतिहास के महत्त्व को देखा अनदेखा कर बैठते हैं। आवश्यक है कि हम आंचलिक जनजीवन, संस्कृति एवं स्थानिक इतिहास के मूल्यांकन में लापरवाही न बरतें। वस्तुतः यही वे मूल घटक होते हैं जिनके माध्यम से राष्ट्र के समग्र इतिहास के कतिपय धुंधले तथा अन्धेरे कोनों पर नया प्रकाश पड़ता है। मैटलैण्ड महोदय का यह कथन सर्वथा ग्राह्य है कि 'राष्ट्रीय इतिहास के कलेवर को भरने के लिए प्रादेशिक इतिहास की साक्षी बहुत महत्त्व रखती है।'

हिमाचल की विशिष्ठता

हिमाचल प्रदेश निज भौगोलिक स्थिति, कला, कृषि, उद्योगों, सभ्यता एवं सांस्कृतिक तथा इतिहास सम्मत परम्पराओं के कारण उत्तर भारत में एक विशिष्ट मुकाम रखता है। यहां के ऐतिहासिक गौरव के अनुरूप ही लोग इसे 'देव भूमि' या 'तपोभूमि' कहते हैं। देवात्मा हिमालय के आंचल में स्थित ऊंची-ऊंची पर्वत श्रेणियां और मध्य में समतल भूमि बहुत उपजाऊ एवं मनमोहक है। उतने ही मोहक तथा सुन्दर हैं यहां के निवासी। सारा प्रदेश नाना देव पीठों तथा तपस्थलियों के कारण निराली शोभा एवं आस्तिक भावना का प्रतीक रहा है।

प्रदेश के प्राचीन गौरव एवं स्वर्णिम इतिहास को समझने के लिए हमें यहां के 'जालन्धर पीठ' नामक एक खास भूभाग को सर्वप्रथम देखना-जांचना पड़ता है। पुराणों में उक्त 'पीठ' के विषय में अत्यन्त रोचक वर्णन प्राप्त होते हैं।

'देव भूमि' तो यह निस्सन्देह रही ही है, परन्तु 'वीर प्रसूता' होने के कारण कुछ विद्वानों ने इस खास 'भू-भाग' को 'वीर भूमि' के नाम से भी अलंकृत किया है। प्राचीन युग की राज वंश परम्परा और उत्तम शासन व्यवस्था के प्रमाण हमें 'उक्त' भू-भाग' कांगड़ा के कटोच राजवंश के इतिहास से प्राप्त हो जाते हैं। आप, भारतीय सेना में 'डोगरा सूरमाओं' के सैन्य कौशल से सुपरिचित होंगे। एक समय यही कटोच राज वंश अत्यन्त वीर समझा जाता था। महामना गोपाल शर्मा जी शास्त्री, ने अपने ग्रन्थ 'हिमाचल प्रशस्ति' की भूमिका में इस बात का उल्लेख किया है कि "महाभारत युद्ध में वीर अर्जुन को अवरुद्ध करने का काम 'सप्तक' सेना को ही सौंपा गया था। त्रिगर्त वासी ही संसप्तक कहलाते हैं। इन कटोच्चों के बल पर ही द्रोणाचार्य ने चक्रव्यूह की रचना की थी तथा उसके दृढ़ पंजों से अर्जुन निकल न पाता था। अन्ततः पाण्डवों को वीर अभिमन्यु के जीवन से हाथ धोने पड़े थे।' शास्त्री जी आगे लिखते हैं कि 'महाभारत युद्ध में कटोच्च वंश का राजा सुशर्म चन्द्र कौरवों की ओर से लड़ा था।'

---

1. त्रैगर्ताः संसप्तकाः :[देखें हिमाचल प्रशस्ति छठा भाग ले: कवि मार्तण्ड गोपाल शर्मा शास्त्री . . . पृ03–4–]

अस्तु इतना तो सिद्ध हो ही जाता है कि हिमाचल प्रदेश का इतिहास काफी पुराना है। स्वंय अलैकजेंडर कुन्निंघम तक ने यह स्वीकार किया है कि 'जब कटोच्च वंश कांगड़ा प्रदेश की 'सर जमीन' पर अपना शासन चला रहा था, उस समय तमाम पाश्चात्य जगत असभ्य था। हां रोमन साम्राज्य ने अवश्य जन्म ले लिया था और वह कुछ कुछ आंखे खोलने लगा था इसी प्रकार सर लैपल एच ग्रिफिन जी का मत है कि प्राचीनता के अतिरिक्त कटोच्च वंश की परम्परा निरन्तर अक्षुण्ण एवं अटूट रही है। सुशर्म चन्द्र इसी वंश से सम्बन्धित एक महान योद्धा था। [द्रष्टव्य कांगड़ा डिस्ट्रिक्ट गजेटीयर, भा 10: 1904]।

कटोच्च वंश का प्रवर्तक :

उक्त इतिहास एवं पुराण प्रतिष्ठित प्राचीनतम राज वंश का प्रवर्तक राजा भूमि चन्द्र था। मान्यता यह है कि भूमि चन्द्र भगवती दुर्गा का 'मानस पुत्र' था क्योंकि उसका जन्म दुर्गा के श्रमसीकरों के दिव्य पुंज में से हुआ था। कटोच्च वंश का जो मान चित्र शास्त्री जी ने तैयार किया है, उसके अनुसार सन् 1690 ई० तक, जब राजा आलम चन्द सिंह सिंहासनारूढ़ हुआ, तो 474 राजा इस राज वंश में हो चुके थे। इसी क्रम में इसी लेख के नायक महाराजा संसार चन्द 481वें राजा थे, जो अपने पिता राजा तेग चन्द की मृत्यु के बाद सन् 1774 ई० में सिंहासन पर बैठे। तथ्य यह हैं कि राजा तेग चन्द मात्र छ: सात महीने ही राज काज सम्भाल पाए थे। हां उनके पिता राजा घमण्ड चन्द के कार्यकलापों से उसके पोते संसार चन्द को निश्चय ही बहुत बल एवं प्रेरणा प्राप्त हुई थी।

अभी राजा घमण्ड चन्द अन्य पर्वतीय राज्यों को अपने अधीन लाने के उपक्रम में संलग्न था, जब उसे पौत्र जन्म की शुभ सूचना प्राप्त हुई। जनवरी 1765 ई० को संसार चन्द का जन्म लम्बा गांव से 5 किलोमीटर के फासले पर स्थित बीजा पुर (विजयपुर) में हुआ था। आज तो इस नगर एवं दुर्ग का महज नाम ही शेष रह गया है। संसार चन्द की जन्मशाला के द्वार पर संगमरमर का एक सुन्दर नाम पट्ट लगा हुआ है। पांच साल तक संसार चन्द का पालन पोषण बीजापुर दुर्ग में ही हुआ। मान्यता है कि उनके जन्म पर प्रदेश भर में खुशियां मनाई गई।

शिक्षा प्राप्ति के लिए बालक संसार चन्द को एक अलग भवन में ठहराया गया। वहां पर राज पुरोहित ने उन्हें हिन्दी के माध्यम से शिक्षा दी और साथ साथ 'टांकरी' लिपि का भी बोध करवाया। उनकी उपासना एवं पूजा पाठ की रूचि थी और एतदर्थ राज कुमार के पास चांदी की 'दुर्गा' की मूर्ति थी। उनके दादा घमण्ड चन्द का विश्वास था कि रामायण, महाभारत और अन्य पौराणिक गाथाएं चरित्र निर्माण में सहायक सिद्ध हो सकती हैं। इसके अतिरिक्त निज पुरखों के शौर्य कलापों एवं चित्रों का भी संसार चन्द के मन मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ा था। युद्ध विद्या में भी वह शीघ्र निष्णात् हो गया था। यही कारण है कि केवल 16 वर्ष की उम्र में ही संसार चन्द ने कवच पहन कर "सैन्य बल" से कोटा कांगड़ा को विजित किया था। इन सब गुणों के बावजूद यह मानना पड़ेगा कि संसार चन्द की शिक्षा अधूरी ही रह गई थी।

अभी आप दस वर्ष के होंगे कि आपको जीवन के व्यावहारिक क्षेत्र में पदार्पण करना पड़ा। उनका राज्यारम्भ का वह काल वस्तुत: अत्यन्त अद्भुत है। देश भर में, उस समय अशांति का बोल बाला था, और सम्पूर्ण भारत वर्ष एक संक्रमण काल की सी दशा में से गुजर रहा था। निकट पड़ोसी प्रांत पंजाब भर में सर्वत्र गड़बड़ी की स्थिति थी। वह प्रदेश अनेक राजाओं में बटा कटा था। तथा सिक्ख मिसलें दिन प्रति दिन जोर पकड़ती जा रही थीं, रामगढ़िया कुछ समय से कांगड़ा (कोट) में विराजमान था।

परन्तु जिस समय संसार चन्द शासनारूढ़ हुआ, तब रामगढ़िया सरदार का निर्वासन हो चुका था। स्वाभाविक था कि वह एक स्वतन्त्र शासक बनता। राजा बनते ही उन्हें नवाब 'शेफ अली खां' की मृत्यु का समाचार मिला। अतः राजा ने तुरन्त कांगड़ा दुर्ग को घिराव में ले लिया। उस समय सरदार गुरुबक्श सिंह ने राजा संसार चन्द की बहुत सहायता की। उसी की कूटनीति एवं चातुर्य के फलस्वरूप कांगड़ा दुर्ग जीवन खां के कब्जे से निकल कर उनके हाथ लगा था। परन्तु जय सिंह की निष्ठा छिछली थी वह तो दुर्ग को अपने अधीन हुआ मान चुका था, क्योंकि वह भलीभांति समझता था कि कांगड़ा दुर्ग उस पहाड़ी जनपद में कितना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता था। निस्संदेह उन दिनों यह दुर्ग समस्त कांगड़ा प्रदेश की कुंजी माना जाता था। भाव यह था कि जिसका यह दुर्ग, उसी का कांगड़ा राज्य पर शासन। राजा घमण्ड चन्द ने चाहा होगा कि कम से कम उसका पोता संसार चन्द अवश्य 'कोटा कांगड़ा' को प्राप्त कर सकेगा। पर इतिहास का क्रम कुछ दूसरी दिशा में घूम गया। सरदार जय सिंह ने जब इसे अपने अधीन कर लिया तो लगभग दस वर्षों तक वह रावी और सतलुज के मध्यवर्ती प्रदेश का प्रमुख एवं कुशल शासक रहा।

डा० हच्ची सन तथा वोगल वैसे विदेशी इतिहासकारों का मत है कि महाराजा संसार चन्द का मुख्य उद्देश्य पूर्वजों के 'कांगड़ा दुर्ग' को प्राप्त करना था। इस ओर अनेकों प्रयत्न भी हुए, शक्ति संचयन भी रहा, परन्तु संसार चन्द को सफलता प्राप्त न हुई।

कांगड़ा दुर्ग को राजा संसार चन्द ने वस्तुतः किस प्रकार हस्तगत किया इसके सन्दर्भ में एक सफल प्रमाण दीवान सर्वदयाल का मत है जिसे शास्त्री गोपाल शर्मा जी ने भी काफी तर्क संगत माना है। उनका कथन है कि सन् 1780 ई० में, जब कि दुर्ग पर जय सिंह का अधिकार था, संसार चन्द ने आक्रमण किया। जय सिंह संसार चन्द के सामने ठहर न सका और हार कर अपने घर बटाला का मार्ग लिया। इस तरह कई सदियां गुजरने के बाद 'कोटा कांगड़ा' फिर से कटोच्च वंश के हाथ में आया जो परम्परा से उसका असली उत्तराधिकारी था[1]।

आलमपुर की चित्र दीर्घा में एक चित्र मौजूद था जिस में राजा संसार चन्द के 'कांगड़ा दुर्ग' के घेराव का परिदृष्य अंकित किया गया है। चित्र के अधोपृष्ठ पर टांकरी में लिखा था—'सम्वतः 1837 काति पृ० 23 कोट, कांगड़ा शहर संसार चन्द ने फते कर लिया।'

यह चित्र महाराजा संसार चन्द के जीवन काल की एक जीवन्त निधि माना जाएगा, क्योंकि इससे यह तय हो जाता है कि सन् 1781 ई० में संसार चन्द ने कोट कांगड़ा को कन्हैया मिसल के नेता स० जय सिंह से प्राप्त कर लिया। कहना न होगा कि कोट कांगड़ा ज्वालामुखी की संधि के बाद ही संसार चन्द के हाथ आया था। यों इतिहासकारों में इस तथ्य को लेकर काफी मत भेद रहा है। स्वयं हिमाचल प्रशस्ति के प्रणेता शास्त्री जी दुर्ग प्राप्ति का समय सन् 1785 मानते हैं। जो हो इतना तो सुनिश्चित है कि 'कोट कांगड़ा' की विजय से राजा संसार चन्द ने कटोच्च वंश की यश वृद्धि में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। दुर्ग की शक्ति ने राजा के 'राज्य विस्तार' के कार्य क्रम में यथेष्ट योग दिया और वह पर्वतीय प्रदेश में एक उच्च सत्ताधारी शासक बन सका। यही नहीं, संसार चन्द ने अपने प्रदेश तथा कुल की विभिन्न इतिहास सम्मत परम्पराओं को पुनर्जीवित किया तथा जालन्धर के अनेकों छोटे मोटे राज्यों में अपना विशिष्ट स्थान बना लिया। उसने निज सैन्य बल संगठित किया जिसके फल स्वरूप कई पड़ौसी पहाड़ी रजवाड़ों ने आपकी 'प्रमुखता' स्वीकार की तथा धन जन की सहायता देकर आपके सैन्य बल को और भी पुष्ट किया।

---

[1]द्रष्टव्य हिमाचल प्रशस्ति . . . . पृ 32.

संसार चन्द महान एवं उत्कृष्ट शासक :

उपर्युक्त विवरण से यह सिद्ध हो जाता है कि राजा संसार चन्द अपने समय के एक सर्वोत्कृष्ट शासक थे। उन्होंनें अपने शत्रु राजाओं चम्बा, बिलासपुर तथा सिरमौर को विजय किया और कोटला, नालागढ़, नूरपुर और सुकेत के राजाओं को अपने अधीन किया। मण्डी और कुल्लू से भी कर वसूल करना शुरू किया। जिस प्रकार एक समय में दिल्ली के शाही हुकमरानों (शासकों) के हुक्म (आज्ञा) का पालन होता था, ठीक उसी रोब और दबदबे के साथ महाराजा संसार चन्द का आज्ञा पालन होने लगा था।

महाराजा संसार चन्द वीर पुरुषों का भारी आदर करते थे। यों भी सब प्रकार के गुणी जनों का सम्मान वे हमेशा किया करते थे। उनके बहु-आयामी व्यक्तित्व से प्रभावित होकर मूर क्राफट ने लिखा है कि '... महाराजा संसार चन्द में रंग का भेद भाव बिल्कुल नहीं था। शायद इसी वजह से मैं सुजान पुर में राजा का अतिथि बनने पर उनके परिवार के एक सदस्य की भांति रह सका। दुश्मन हो या दोस्त, राजा सब के साथ 'मित्रवत' पेश आता था। संसार चन्द का खुद का रंग 'श्याम' था, शरीर लम्बा तथा राजकीय वेश भूषा से वह सदैव सुसज्जित रहता था। वह सर्वथा मेहरबान और तरस खाने वाला व्यक्ति था, चाहे एक सबल एवं कुशल योद्धा भी माना जाता था। ...... । [द्रष्टव्य मूर क्राफट यात्रा पुस्तक 1, पृ0 18] ।

महाराजा का सौंन्दर्य बोधः

इतना तो सभी मानते हैं कि महाराजा संसार चन्द एक वीर योद्धा होने के साथ गजब के सौंदर्य बोधी, एवं कला प्रेमी थे। पहाड़ी चित्र कलम में 'कांगड़ा कलम' का अपना एक खास मुकाम है। उक्त कांगड़ा कलम को सब से ज्यादा बल और संरक्षण महाराजा संसार चन्द के राज्य काल में प्राप्त हुआ, जिसके फलस्वरूप पहाड़ी चित्र कला का बहुत विकास हुआ। इस शैली के अधिकांश सुन्दर चित्र जो आज प्राप्य हैं वे उनके दरबार में प्रतिष्ठित 'चितेरों' के हाथों के कमाल के द्योतक हैं। उनका समय कांगड़ा चित्र कला का स्वर्ण युग था। कांगड़ा चित्रों को यह गौरव एवं श्रेय प्राप्त हुआ कि उनकी मोहकता ने संसार के कला पारखियों के दृष्टिकोण को बदला तथा भारतीय चित्र कला का लोहा भी विदेशी लोग मानने लगे। अत: विश्व भर की प्रसिद्ध चित्र दीर्घाओं में आज कांगड़ा शैली की तस्वीरें उनका शोभावर्द्धन कर रही हैं। वस्तुतः कांगड़ा कलम का विकास और एतदर्थ महाराजा का योगदान अपने में एक अलग लेख की मांग करता है। कुशल एवं सर्वश्रेष्ठ चित्रकारों को राज्य की ओर से भूमि प्रदान की जाती थी।

विनोद प्रिय होने के साथ साथ संसार चन्द धार्मिक विचारों में भी अभिरुचि दर्शाते थे। गौ तथा ब्राह्मण के प्रति उनके मन में काफ़ी आस्था थी। यज्ञ-यागादि और दान-पुण्य के क्रिया कलापों में राजा का समय बीतता था। राजा का ईष्ट थी 'दुर्गामाता', मगर अन्य देवी देवताओं जैसे शिव, विष्णु आदि की पूजा भी राजा विशिष्ट श्रद्धा-भक्ति से करता था। उनकी यह निष्ठा इस सीमा तक विकसित हो चुकी थी कि उन्होंने अनेकों मन्दिर, राम, कृष्ण, शिव तथा 'दुर्गा' के नाम पर निर्मित करवाए हैं तथा उन्हें जागीरें भी प्रदान की थीं।

सहृदय एवं रसज्ञ भी 'महाराजा' कुछ कम नहीं थे। अत: विभिन्न धार्मिक अथवा दूसरे तीज-त्यौहारों के अवसर पर होने वाले उत्सवों को बड़ी धूम-धाम एवं समारोह के साथ मनाते थे। इनमें प्रमुख पर्व थे रामनवमी, शिवरात्रि, कृष्णजन्माष्टमी, दशहरा, मिंजर (चम्बा का मेला) और बसंत पंचमी तथा होली। कहते हैं कि 'होली' यदि खेली है तो भगवान् कृष्ण ने या फिर महाराजा संसार चन्द ने। मैत्री काल में होली के उन्मादक एवं

रंगीन पर्व पर सिक्ख राजा रणजीत सिंह भी शामिल हुआ करता था। उनके राज्य काल का एक चित्र 'बसन्त पंचमी' पर्व से सम्बद्ध बताया गया है जिस में राजा खुद तथा अन्य राज्याधिकारी बासंती वस्त्र पहने दरबार में सजे धजे बैठे दर्शाए गये हैं। होली वाला एक दूसरा चित्र तो और भी आकर्षक है। उसमें महाराजा हाथी पर हैं, अधिकारीगण घोड़ों पर तथा जनता पैदल होली खेल रही है। सबके आगे वाद्य-वृन्द बाजे बजाते हुए चल रहे है। समारोह में शामिल 'फगुआटों,' के वस्त्र नाना रंगों से चित्रित हैं। होली का यह मोहक दृश्य सुजानपुर के सुन्दर चौगान का है। सुजानपुर की 'होली' आज भी प्रदेश भर में प्रसिद्ध है। इसका सांस्कृतिक पक्ष बहुत ही उज्ज्वल एवं जन प्रतिष्ठित रहा है। गोपाल शर्मा जी शास्त्री ने इस ऐतिहासिक 'होली-उत्सव' के रंगराग से पराभूत होकर लिखा है—

"राग रंग अनुराग संग, होली आई।
कुसुंभित, पराग पूर्ण गंध, घर घर छाई।।
मन्द गति मलय समीर, मधु कोकिल गाती।
सुतप्त चातक, चाहे, कब, मधु ऋतु आती।।

भ्रमर-मधुर रव सुन प्रमत्त, नाचे तितली।
आम्र मंजरी गंध मुग्ध, जन हृदय-तली।।
विजय प्रव पर रक्त रंजित, असि बल भारी।
खेलें फाग आज हम' भर पिचकारी।।

वक्ष स्थली तक तक मारी भर पिचकारी।
मटकाय नयन प्रेम रंग, रोरी डारी।।
नृत्य कर नर आत्म विभोर, होली गावें।
चतुरमुख, श्रीपति, रुद्र सब मिल सम भावें।।

ताण्डव-तुंगतरंग बहे, खर असिधारे।
चाहे बाला-लास्यगीत, मन मधु ढारे।
पर संसार चन्द नृप में, मिली वीरता।
ओज-पूर्ण मुख मण्डल पर वही धीरता।।

प्रजा-उल्लास उमंग में, जब मन डोले।
तब कुछ स्थान परतन्त्र पा, असि ले बोले।।
मोहराग सरिता में क्यों, बहते जावें।
अरि के चाल कुचक्र हम क्यों सहते जावें।।"

इस प्रकार हम देखते हैं कि महाराजा संसार चन्द के राज्यकाल में प्रदेश के कटोच्च वंश ने भारी प्रगति की। यद्यपि वे अन्त में रणजीत सिंह के विश्वासघात का शिकार हुए और कोट कांगड़ा से हाथ धो कर सुजानपुर टीह्रा में जीवन के अन्तिम दिन बिताने पर विवश हो गये। तथापि अपने 20 वर्ष के 'शौर्य काल' में उन्होंने प्रदेश और कांगड़ा जनपद की खूब श्रीवृद्धि की। तमाम पर्वतीय प्रदेश विद्वानों एवं कलाकारों का केन्द्र बन गया। संसार चन्द वस्तुतः एक प्रजा-वत्सल राजा थे और इस रूप में वे सदैव स्मरण किए जाते रहेंगे।

7/1, गोविन्द निवास,
शिमला-2

Scanned with CamScanner

गादी–पहाड़ी भाषा के अनेकार्थ शब्दों का विवेचनात्मक अध्ययन

—अमर सिंह रणपतिया

क्रम संख्या	शब्द	हिन्दी अर्थ	पहाड़ी वाक्य में उस का प्रयोग	विशेष कथन
1	2	3	4	5
1.	उंघ उंघी क्रिया उंघणा	(1) नींद आना (2) उंघ चुकणा बहाना करना। (3) चिंता में तल्लीन होना	(1) अरे उंघणा लग्गा। (2) उनी पलचणे ताए उंघ चुक्कू। (3) तु कजो हैं उंघदा, चिंदी करी कै वंणदा।	
2.	एला स्त्री लिंग में एली बहुवचन एले	(1) फल की वृक्ष से कच्ची पकड़ जल्दी गिरने वाला फल। (2) अधिक कोमल (3) जल्दी थकने वाला व्यक्ति	(1) एस बुट्टे रे दाणे बड़े एले हिन अते झट रड़ी पैंदे। (2) ए कम बड़ा सगत हा, ओ एला हा अते उनी किंह करना।	एला शब्द कभी कभी बेला (कमज़ोर) शब्द का पर्यायवाची बन जाता है परन्तु जहां बेला में व्यक्ति या पशु के लिये प्रयोग में लाया जाता है वहां एला विशेषतया फल या फूल के लिये प्रयोग में लाया जाता है।
3.	कलेस	(1) काला धब्बा (2) दोष	(1) चन्द्रा मंझ कलेस हा। (2) एस कलेसा जो अंऊ किंह उतारला ? (3) ए कलेस तेरे पैरे मढ़ना	

tharahkardu.in

1	2	3	4	5
4.	कंढा कंढी (पहाड़ का निचला भाग)	(1) पहाड़ का बहुत ऊंचा भाग (2) पहाड़ का चरागाह वाला भाग (3) थाली या पतीले का सिरे का भाग (4) कोट का कालर	(1) पार कंढे पुढ़ी बरखा लग्गी। (2) मेरा धण (रेवड़) कंढे पुढ़ी हा। (3) थाली रा कंढा त्रुटी गो। (4) सनाहणा (सुई) मेरे कोटे कंढे सिते (साथ) हा।	कंढी शब्द केवल कांगड़ा और गुरदासपुर के पहाड़ी भाग के लिये प्रयुक्त होता है। कहीं कहीं किसी कुतिया का नामकर्ण भी इसी शब्द से हुआ है। भुक्कू-सुन्नी कथा के नायक भूकू की कुतिया का नाम कंढी था।
5.	खल खलजगन खलही	(1) खलिहान (2) खलि (3) प्रकारांतर में खल्ही का अर्थ है किसी चीज का ढेर में गल सड़ जाना।	(1) मईं खला मंझ गाणहू पाई। (2) एगा कमज़ोर हा, एस जो खल खवा। (3) चोरेरी गली करी खलही भोई गई। (4) मईं तेरा ऋण भरी हा दितूरा (दे दिया है) जे तु दुबारा लैणा ता खल् जगना मंझ भरी दिन्नू।	पुरानी धर्म प्रथा के अनुसार मन्दिर या 'खलजगन दो बड़े न्याय साधन हैं जो हर व्यक्ति के लिये मान्य थे। उस समय आपसी झगड़े इसी तरह सुलझाए जाते थे।
6.	गभ गभीरी (बीच का भाग) गब्भण (गर्भावस्था में) गाबर गभीरी (मन्दिर का गर्भगृह)	(1) गर्भ धारण किये। (2) बीच का भाग। (3) गभीरी अर्थ में मन्दिरका गर्भगह।	(1) इनी गाई गभ लेई लेउ। (2) बगड़ीरे गब्भा मंझ कुकड़ी बड़ी हा। (3) ए बगड़ी बड़ी गाबर (ज़रखेज हा)। (4) घालेरी (घासनी का) गभीरी बड़ी हा फलूरी। (5) एगा गब्भण हा।	गर्भवती स्त्री को गब्भण नहीं कहेंगे उस को दुप्राणी कहेंगे।
7.	गलह गल्हेरना गल्हणा गल्हारा	(1) कई प्रकार की फसलों को काट कर ढेर में कुछ दिन गर्मी दे कर झाड़ या कूट कर आसानी से दाने निकालना। (2) अंडो को गर्मी देना। (3) छोटे बच्चों को गर्मी देना।	(1) षण्ह (सरसों) बडढी करी गल्हे रखा। (2) कुकड़ी (मुर्गी) गल्हे बैठी। (3) ए आंडे गल्हे रखणे।	जन्म जात शिशुओं को स्थानीय लोग एक बड़े टोकरे में धान की पराली या गेहूं का भूसा भर कर रखन के लिये प्रयोग में लाते हैं उसे गल्हारा' कहते हैं। यह शब्द भी गल्ह शब्द से रूपांतरित है।
8.	गाह्‌ण गाह्‌ण (क्रिया) गाह	(1) दानें निकालने के लिये खलिहान में फसल को बैलों से रौंदाना। (2) खेत के फसल को पशुओं से बरबाद करना। (3) किसी कार्य को व्यवस्थित ढंग से न करना। (4) पानी को बीज पड़ कर अबूर	(1) असे (हम ने) कणके री गाह्‌ण पाई। (2) मेरी सारी कणके री बगड़ी गाही छड्डी मु हरजाना लैणा। (3) तुसे कै गाह्‌ण पाई कम करना देआ। (4) तुसे म्यागे रे (प्रात: से) केती गाह गाहे? (5) प्राणी बड़ा हा गाह्‌ण मत दिंदा।	
9.	गाल (संज्ञा) गाल दुप्पड़ गाल मुआल गाल लगणा गाली लाणा	(1) गाली (2) गाली गलोच (3) धूप या गर्मी से बर्फ का पिघलना (4) आग की गर्मी से किसी चीज का पिघलना। (5) विवाह के समय वधुपक्ष की ओर से गाली लाना। (6) नष्ट या बरबाद होना	(1) उनी मुंज़ो गाली दित्ती (2) उनी गाल दुप्पड़ करी (3) गाल मत दियं (4) हिंउआं (बर्फ को) गाल लगी (5) घिउ गली गो (6) बैंधी गोरू गली गै (7) ओ लोका पुढ़ी जुलम करंदे तिआं जो भवगाने रा कोप भूणा (होता है) अते गली गाहणा।	'बैंधे डंगरों का एक भयानक रोग है जिस के होने से सभी डंगर पशु नष्ट हो जाते हैं। यह डंगरों की माहमारी है।

tharahkardu.in
Scanned with CamScanner

1	2	3	4	5
10.	गुढोश (संज्ञा)	(1) गुढोश (पर्यायवाची शब्दराड़ा पति के मर जाने पर दूसरे विवाह की रसम दूसरा विवाह ।	(1) उसेरा अज गुढोश हा	
		(2) दूसरे विवाह की रसम अदा करते समय सिर का गूंथना	(2) उनी से गुढ्ढी लेई	
	गुणा (क्रिया)	(3) साधारण तौर पर सिर गूंथना ।	(3) ओ गुढी गेई	
	गुढारी गुढीणा	(4) गुढीणा अर्थ में दूसरा पति धारण करना।	(4) अज उसेरे गुढोजरी धाम हा	
			(5) अउं धैर (सिर) हा गुढंदी साधारण अर्थ में।	
11.	घाणी (संज्ञा)	(1) शोर	(1) इंए निक्के बड़ी घाणी पाई	
	घाणी पाणा	(2) तेल निकालने के लिये तेल पदार्थ को कोल्हू में डालना के	(2) कोल्हू मंझ घाणी अब्बे लाई तेल निकलना दे ।	
	घाणी लाणा	(3) घाणोघा (वि0) अर्थ में शोर करने वाला या झगड़ालू ।	(3)	
	घाणोघा (वि0)	(4) किसी मसले का उलझ जाना	(4) ओ बड़ा घाणोघा हा उस सिते कोई सार-उधार न करना।	
			(5) से न मनंदा बेड़ी घाणी पेई	
12.	झमणा	(1) विवाह के समय पालकी को ढांपने का कपड़ा ।	(1) पालकी पुढ़ी झमणा देआ	बिना खस्सी किया बैल 'धौकर' कहलाता है पर खस्सी करने पर उसी को दादकहते हैं । इसी प्रकार लढ़ (मेंढा) और भेड़ु में अन्तर है।
	झंबारी झंब	(2) पुराने ढंग से बैल का खस्सी करना	(2) ए धौकर (बिना खस्सी किया बैल) दोते (कल) झमणा ।	
	झमारी झमीणा	(3) झमकणा अर्थ में वर्षा बरसते कम होना ।	(3) वरखा झमकी गेई, चला	

1	2	3	4	5
	झम झमकणा			
13.	झल	(1) धुएं की कालख	(1) रोटी जो झल मत लांदा काली भुचि गाहणी ।	आम तौर पर झलीढ़ शब्द अधिक काले व्यक्ति के लिये प्रयुक्त होता है या अधिक गंदे हो जाने या गंदे कपड़े के लिये प्रयोग में लाया जाता है। रंगे कपड़े के लिये इस का प्रयोग नहीं होता ।
	झल झड़ना	(2) कालख मिश्रित आग की लटा ।	(2) अग झल न छड़ंदी, फूकदे	
	झलेषा	(3) प्रकारांतर में झलेषा (कालख लगा/लगी) ।	(3) झलेषी रोटी मत खांदा	
	झलकंदा झलीढ़	(4) झलकंदा अर्थ में शीशे की तरह चमकदार ।	(4) ए चक्का बड़ा झलकंदा हा	
		(5) झलीढ़ अर्थ में काला	(5) ए थाली मैली हा एस जो मांजी करी झलका ।	
14.	झूर	(1) आग की टिम टिमाती लटा	(1) एस झूरा सिते रोटी न बणना लगी ।	झुरकरणा शब्द केवल एक दम भयभीत हो जाने के लिये ही प्रयुक्त होता है जिस से आदमी पागल या बेहोश भी हो सकता है ।
	झूरना	(2) झूरना-सोच विचार या चिंता में तल्लीन होना ।	(2) तू झूरना कजो बैठा	
	झुहं (जंगली जंतुओं की गहरी गार या तंग दरार)		(3) ए ता बरापेरी झुह हा	
	झुरकणा (भयानक चीज से या भ्रान्ती से डर जाना)		(4) तु किहा झुरकू	
15.	टार (संज्ञा)	(1) दरार	(1) एस चक्के जो घेरी करी टार छड़ भे लो इच्छा ।	कभी कभी 'टारेरना' शब्द परिवार के सदस्यों के अलग होने के अर्थ में भी आता है। परिवार के सदस्यों का अलग होना 'बखीणा' शब्द है जो कठोर शब्द है जबकि 'टारीणा' और 'टारेरना' इस के कोमल पक्ष हैं । बहुत अधिक संपर्क हो जाने पर धीरे धीरे बिना झगड़े अलग होना भी 'टारीणा' है ।
		(2) छेद	(2) टारा मते लो इंदी	

1	2	3	4	5
	टारा (वि0)	(3) प्रकारान्तर में टारा थोड़ी दूरी पर—अलग	(2) टारा मतें लो ईंदी।	
			(3) ओ टारा (अलग या दूर) भोईगो	
	टारीणा	(4) अलग होना	(4) ओ अबें टारें रहंदा	
	टारें	(5) अलग करना दरार या खिसकाना	(5) स्लेट टारेंर जे लो इच्छा	
	टारेंरना	(6) टारीणा –वर्षा थम जाना	(6) अम्बर टारी गो (थोड़ी वर्षा थम गई है)	
16.	टेरकू	(1) लड़का	(1) एक टेरकू कसैरे हिन।	वास्तव में "टेर करे सो टेरकू, सिद्धांत से ही टेरकू शब्द की उत्पति संभावित है। यह शब्द साधारण अर्थ में है। इसी तरह छोकरू/छोकरी शब्द है। छोकरू का विशेष अर्थ अनाथ से है। छोकरा शब्द युवक के लिए है। लड़के के लिए गोभरू और लड़की के लिए कुली शब्द भी उपयुक्त होते हैं। लड़का पैदा होने को गोभरू शब्द उपर्युक्त होता है ना कि टेरकू या छोकरू (इसी तरह लड़की पैदा होने पर कुली या कन्या कहा जाएगा। इस समय लड़के के लिए पुत्र कहा जायेगा 'गोभरू' आम शब्द है जबकि 'पुत्र' केवल निजी।
	टेरक	(2) प्रकारान्तर में लड़की।	(2) इतने सारे टेर कूहण किहां पालने।	
	टेरकी	(3) टेरकूहण शब्द दोनों लिंगों के लिए प्रयुक्त शब्द।	(3) तूहे ए कजो टेरे।	
	टेर कूहण	(4) टेर अर्थ में छेड़खानी या शरारत करना।	(4) एस कुते जो मत टेरंदा, खाला।	
	टेर		(5) बगड़ी बाई दित्ती, टेरा करा।	
	टेरा	(5) टेरा अर्थ में खेत में बीज बोने के बाद अवांछनीय घास फूस निकाल फेंकना।		
	टेरना			
17.	डक	(1) पशु को आंगन में रखने पर उन को बाहर जाने से रोकने के लिए दरवाजे या डियोढ़ी पर दरवाजा न लगा कर किसी अन्य साधन का प्रयोग।	(1) गोरू जो डक लाई अई।	
			(2) गोरू जो डक्की ले।	
			(3) दरिया (नदी) जो डक लगी गो।	
	डक्कण	(2) रोक	4) डक्की दान न भुंदे।	
	डकणा	(3) नदी या नाले का बीच में कुछ फंस जाने से पानी का रुकना	(5) एस बांदरा जो किह डकणा?	
	डक लगणा	(4) पशु को डंडा ले कर रोकना		
18.	डाली	(1) साधारण अर्थ में टहनी	(1) ए डाली बड़ी हा फलूरी	डाली (तोयफा) का रिवाज रियास्ती के समय अधिक था खुले तौर पर लोग अफसरों को 'डाली' ले जाते थे। अब यह प्रथा कम है। लेकिन कहीं कहीं प्रयोग प्रचलित है।
		(2) डाल बड़ी टहनी या शाखा	(2) खोड़ेरा डाल भज्जी पेउ।	
	डाली नल्ली	(3) किसी को फल अथवा अन्य खाद्य सामग्री का तोफा	अउ अबसरा (अफसर) जो डाली लेई चलू।	
		(4) किसी स्वस्थ्य और सुन्दर स्त्री के लिए प्रयुक्त शब्द।	(4) ओ बड़ी सुन्दर डाली हा, तेस जो बैंही लैणा चहीदा।	
19.	डप	(1) पक्षी को मारने के लिए एक स्थानीय साधन।	(1) मई चिड़ी पकड़ने जो डप टिक्कू	'डप टिकणा' एक स्थानीय साधारण कला है। इस के लिए तीन पतली छड़ियां एक रस्सी और एक भारी

Scanned with CamScanner

1	2	3	4	5
	ढपणा ढपीणा ढप लाणा ढप घुग्घु	(2) ढपणा बंद करना । (3) ढप घुग्घु ढप में फसां पक्षी।	(2) गोरू जो अदर ढपी दे (3) अऊं अन्दर हुड, मुंजो मत ढप्पे (4) तु ढप घुग्घु साही कै हैं करंदा?	स्लेट की आवश्यकता होती है। स्लेट लकड़ियों के सहारे तिरछी कर स्थिर की जाती है। नीचे लकड़ी पर चोग रख दी जाती है जब पक्षी चोग ठोंग मारता है भारी स्लेट एक दम गिर पड़ती है और पक्षी दब कर मर जाता है।
20.	त्राक	(1) खमीरा ।	(1) रोटी त्रकँणँ जो त्राक रखा।	
	त्रकणा त्रकोलू त्रकैहन	(2) खमीरा डालना । (3) त्राक पड़ना किसी चीज का सड़ जाना । (4) त्रकोलु—खमीरे से तैयार रोटी (5) त्रकैहन अर्थ में बदबू।	(2) अज कणके रे त्रकोलु वणा। (3) सेउ न बिके, घड़ी करी त्राक पँई। (4) घड़रे फलेरी त्रकैहन पई।	
21	दाग	(1) फल का दाग	(1) इआं फला जो अयणी रे दाग लगूरे ।	दागी व्यक्ति सरकार द्वारा सजा भुगता व्यक्ति है। समाज द्वारा ठहराया कसूरवार भी दागी व्यक्ति हुआ करता है।
	दागी दागोघा	(2) दागी अर्थ में फल का दागी होना या कसूरवार ठहराया व्यक्ति । (3) किसी चीज का निशान पड़ना	(2) ए फल दागी भोई गछूरे । (3) ए आदमी दागी (कसूरवार ठहराया) हा (4) इसेरे मत्थे पुढ़ी छुरीरा दाग हा ।	
22.	दाघ	(1) दया 2) दाघ देणा अर्थ में मरे व्यक्ति को अग्नि संस्कार से है।	(1) उस बचारे जो दुःखी हैरी मेरे चारे दाघ पँई	
	दाघला दाघोधा	(3) दाघला और दघोंधा दोनों दया के पात्र हैं। 4) पीड़ा अनुभव करना (5) पेटे दाघ पैणा-अधिक भूख लगना ।	(2) ओ मरी गो अत्ते उस जो ही दाघ दित्ता। 3) पैरेरी पीड़ बड़ी दाघली हा। (4) उस जो हवा हा लगूरी, मलथ मालिश) करदें उसी जो दाघ लगंदी । (5) मेरे भुखे पेटे दाघ पैई ।	
23.	दाणा	(1) किसी चीज, अन्न या फल का दाना	(1) एस साल कुकड़ी रे दाणे बड़े बड़े हिन।	'दाणों की बीमारी से मरे पशु के मांस का सेवन करने वाले व्यक्ति भी इसी रोग में ग्रस्त हो जाते हैं।
	दाणोधा	(2) भेड़ या बकरी का रोग जो फोड़ा होने पर मर जाते हैं। (3) दाणोधा अर्थ में 'दाणो' की बीमारी से मरने वाला पशु (4) दाना पानी	(2) आहे एक दाणा सेउएरा खड (3) मेरा लढ़ दाणरे रोगे मुआ (4) हाले ताएं एस जगारा दाण पाणी हा । (5) दाणोधा मास मत खा	
24.	दार	(1) दरवाजा	(1) घरेरा दार दितूरा हा (बंद है)	वास्तव में दर (दरार) शब्द से ही इन शब्दों की विभिन्न रूपों में उत्पात्ति हुई है।
	दारी, दारीण, दर।	(2) घर के लिए इमारती लकड़ी (3) दारी—छोटा दरवाजा और कभी-कभी दार (दरवाजे) का पर्यायवाची । (4) दारीण अर्थ में वह वृक्ष जो आसानी से इमारती लकड़ी के लिये चीरा या फाड़ा जा सके।	(2) ओ घरा जो दार पाणा रौणे गो (3) घरेरी दारी खुल्ही हा। (4) ए कलै (दयार) बड़ी दारीण हा	

1	2	3	4	5
		(5) वह पत्थर जो आसानी से सलेट या चक्के दे ।	(5) ए थोड़ी (बड़ा (पत्थर) बड़ी वारीण हा ।	
		(6) दर देना—दरार पड़ना	(6) घण बाहु तां एस नड़ा (पत्थर) दर दीणा ।	
25. पलेप	पलेटणा, पलेटा, पलेथा, पलहेर पलोड ।	(1) किसी गोल चीज का घेरा	(1) अज चन्द्र पलेप पैउ	सूखे के दिनों कभी-कभी चन्द्रमा के गिर्द रंगीन गैसीय धुंध सी दिखाई देती है इसी को 'चन्द्रपलेप' कहा जाता है। ऐसा होने पर कभी कभी वर्षा पड़ने या बादल गर्जने की संभावना हो जाती है ।
		(2) लपेट में लेना	(2) रौंगेरी तंवे कुकड़ी पलेटी लैई	
		(3) उलझ जाना	(3) जोड़े जो पलेटी लै	
		(4) सरदी के बचाओ के लिये कम्बल ओढ़ना (पलोड)	(4) जोड़ीरे पलेथा जो ठीक कर	
			(5) बाहर बड़ी ठंड हा, गरड़रा पलोड पाई लैं ।	
26. पिहण :	पिहणा, पीणहारु, पीणहारी, पिट्ठा ।	(1) घराट पीसने के लिये लाया अन्न या पीस आटा ।	(1) अजं घराटे पीहुण पीहणा	साधारण तौर पर पिट्ठ का अर्थ पीसे हुए आटे से है परन्तु पीहुण का अर्थ पीसने के लिये लाये अन्न से है। लेकिन यदि पीसे आटे को उठाए व्यक्ति को आप पूछेंगे—"क्या लाये हो तो वह उत्तर देगा—"पीहुण" लेकिन घर में रखे आटे को तो आटा या पिट्ठा ही कहेंगे।
		(2) बरबादी होना	(2) मेरा ता दुःखा करी पीहुण भुयि गो ।	
		(3) पीणहारु का अर्थ है वह व्यक्ति जो अाट आटा में पीसने लाया है	(3) गरीबा जो मत पीहा	
		(4) पीणहारी अर्थ में पीसने के लिये उठाया अन्न ।	(4) एस पीणहारूरी पीणहा री पीहुणा लाई ।	
		(5) पिट्ठा—पीसा हुआ आटा	(5) रोटी पकैणे जो पिट्ठा लैई अई ।	
27. बाड़ :	बाड़ेरना 'बाड़छ बाड़ी' घुगाड़ा बाड़ती ।	(1) सुरक्षा के लिये बाड़ लगाना	(1) फसल गोरु खाई गाहणी अते बाड़ लाणा जरूरी हा।	
		(2) सुरक्षा करना	(2) भगवान् सारे जो बाड़ दिंदा	
		(3) बाड़ेरना—बाड़ लगाना	(3) बगड़ी जो बाड़र नता उजाड़ी गाहणी ।	
		(4) बाड़ निजी जमीन के आस पास की बंजर भूमि जो चरान के लिये सुरक्षित रखी जाती है ।	(4) चक्के जो बाड़नी लाई करी खिपूल धुकणा पा।	
		(5) बाड़नी—बड़े पत्थर के इर्दगिर्द लगाई मिट्टी या गोबर की पतली परत ताकि बीच में किसी अन्न को सुखाया जा सके ।	(5) मंई अपणे घणा जो बक्कड़ा मंझ (चरागाह में) बाड़ लऊ।	
		(6) भेड़-बकरियों को बाहर बाड़ में रखना ताकि जंगली जन्तु हानि न पहुंचाएं ।		
28. बांठा	बांठी (स्त्रीलिंग), बांठीणा, बायड़ी ।	(1) दूध देते बंद हुई गाय या भैंस	(1) मेरी गा बांठी हा	बांठीण-पशु का दूध देते बंद होना
		(2) वे फूल जिन में फल न आयें	(2) ए सेउ बांठे फुल दिंदे	बायड़ोआ—काफी देर से दूध दे दे रही गाय।
		(3) दूध देते बंद हुई गाय या भैंस	(3) अबे गा बंठी गई	
		(4) बिना वर्षा के बादल	(4) ए बद्दल बांठे हिन	पंडणा—जिस ने किसी बच्चे को जन्म नहीं दिया वह गाय।
		(5) बायड़ी-जिसे दूध देते काफी समय हो गया हो ।	(5) ए गा बायड़ी हा इसेरा दुध घणा भुंदा ।	पंढ जनानी—बांझ औरत
29. राल	रालन, राल गाहुणा ।	(1) घी या तेल इत्यादि के कारण बर्तन से राल जमे रहना ।	(1) थाली जो राल बसी गई एसी जो भिरी मांज ।	
		(2) आसमान पर बारीक बादल की परत जम जाना ।	(2) अम्बरा पुर्डी राल बसी गई। धुप रुकी गैई।	
		(3) सलेटी पत्थर की फर्श बिछाना	(3) आहे (हम) खला मंझ चक्के हुउं (हैं) रालदे ।	

1	2	3	4	5
30. रैंड	रैंडीणा रैंडापा	(1) रांड औरत (2) बिगड़ैल औरत (3) विधवा हो जाना (रैंडीणा) (4) रैंडापा-विधवापन	(1) ओ रैंड न मंनदी। (2) ओ रैंडी गई। विधवा हो गई है। (3) अबे ओसा जो रंडापा आ।	
31. रौढ़	रोढ़, रुढ़ना	(1) नदी या नाले में पड़ा कोई बहुत बड़े वृक्ष का कटा लम्बा तना (2) बहुत बड़ा सांप (3) रोढ़–नदी या नाले में आई बहती लकड़ी।	(1) उसा रौढ़ा मंझ बड़ी लकड़ी हा (2) मंई अब्बे कीड़ेरी रौढ़ (सांप) हेरी (देखी)। (3) रोढ़ेरी छिढ़ी (लकड़ी) किट्ठी करी रखी।	रोढ़ से ही रौढ़ शब्द बना प्रतीत होता है। रोढ़ का साधारण अर्थ है पानी में बह आना।
32. सूत्र	सूत्रना	(1) सूत (2) दीवार की चिनवाई के लिए सूत डालना। (3) कम्बल बुनने के लिये सूत बिछाना। (4) कोई कार्य आरम्भ करना	(1) ओ सूत्र हा कतंदी (2) मिस्त्री घरा जो सूत्र पउ (3) उनी चादर सूत्री (4) तैईं (तुमने) कै कम सूत्रु (5) कम सूत्रा सिते (तरतीब से) करना चहींदा।	
33. हिड़म	हिड़मैंली	(1) एक देवी का नाम (2) बहुत अधिक वर्षा होना	(1) अज बड़ी हिड़म भुई (2) ए हिड़मेरा देहरा हा (3) अज हिड़मैंल आई (ज़ोर की वर्षा)	हिड़म शब्द हिड़म्बा का अपभ्रंश है।

राजकीय उच्च विद्यालय,
छतराड़ी, चम्बा, हिमाचल प्रदेश।

बौइन्द्रा देवता की देवगाथा

योगेश गम्भीर

बौइन्द्रा देवता को कांगड़ा क्षेत्र के नादौन से महासू क्षेत्र में आया हुआ माना जाता है । देवगाथा के प्रचलित लोकगीत से स्पष्ट होता है कि आजकल कोटखाई तहसील के 'दयोरी' नामक गांव में बौइन्द्रा देवता का मन्दिर है । इस गांव में लगभग 35 के करीब परिवार रहते हैं । प्रथा के अनुसार जब भी कुछ उथल-पुथल होती है तो देवता को स्नान कराने के लिये केदारनाथ, बद्रीनाथ व हरिद्वार आदि तीर्थ स्थानों पर ले जाया जाता है । बौइन्द्रा देवता के व्यय पर ही आसपास के कुछ देवता भी इन तीर्थ स्थानों पर बौइन्द्रा देवता के साथ नहाने जाते हैं ।

साथ जाने वाले लोगों को कुछ शर्तों का बहुत कड़ाई के साथ पालन करना पड़ता है । वह लोग दिन में केवल एक ही समय भोजन ले सकते हैं । उन्हें सारा रास्ता पैदल ही तय करना पड़ता है, रास्ते में चाहे कितना तूफान आ जाये या वर्षा हो वह कहीं आश्रय नहीं ले सकते । कोई भी व्यक्ति कोई चीज़ अकेले में नहीं खा सकता क्योंकि इससे देवता के कुपित हो जाने का भय रहता है । यदि वह कोई चीज़ अपने घर से भी खाने को लाया हो तो वह उसे सभी में बांट कर खानी होगी । रास्ते में होने वाला समस्त व्यय देवता द्वारा वहन किया जाता है । देवता के श्रद्धालु भक्तगण स्थान-स्थान पर देवता को भेंट चढ़ाते हैं ।

गांव में देवता के चले जाने के बाद सारे इलाके में शोक छा जाता है, कहीं भी कोई उत्सव आदि नहीं मनाया जा सकता । इस बार देवता के जाने के बाद 'देयोरी' गांव के लोगों को देवता की ओर से खबरें ही सुनने की अनुमति थी । इसलिए कहीं रेडियो पर गाने आदि भी नहीं लगाये जाते थे ।

देवता के साथ जाने वाले लोगों में से यदि रास्ते में किसी की मृत्यु भी हो जाये तो उसके बारे में उसके घर वालों को सूचना नहीं दी जाती और यदि उनके घर में भी जाने के बाद किसी की मृत्यु हो जाये तब भी उन्हें सूचित नहीं किया जाता है ।

इस तीर्थ यात्रा में लगभग तीन महीने का समय लग जाता है । जब देवताओं के साथ लोग वापिस पहुंचते हैं तो हर गांव में उनका हार्दिक स्वागत किया जाता है उन्हें नायक-पुरुष का सम्मान दिया जाता है । अन्त में रास्ते में मिले हजारों लोगों के साथ देवता बौइन्द्रा तथा अन्य देवता 'दयोरी' गांव में पहुंचते हैं । पहुंचने के दूसरे दिन वहां पर भोज का आयोजन किया जाता है जिसमें हजारों लोग भोज में बौइन्द्रा देवता का प्रसाद प्राप्त करते हैं ।

फिर बाकी देवता अपने गांवों में वापिस चले जाते हैं तथा बौइन्द्रा देवता अपने मन्दिर में प्रवेश करते हैं ।

इस बार (1978 में) बौइन्द्रा देवता के साथ तीन अन्य देवता क्रमशः देवता डीम, देवता पडारा, जोकि देवता बौइन्द्रा के भाई हैं तथा देवता चाम्बी मेहमान के रूप में साथ गये थे । इस यात्रा में कुल 28 लोगों ने भाग लिया । यात्रा के लिये देवता की ओर से कुल 12000/- रु० दिया गया था । आने जाने में कुल 6000/- रु० के लगभग व्यय हुआ ।

Scanned with CamScanner

वापिस आने पर जो ब्रह्म भोज हुआ उसमें आसपास के इलाकों से लगभग 10000/- के करीब लोग शामिल हुए।

इसी दौरान इस देवता से सम्बन्धित देवगाथा तथा देवता तीर्थ स्नान सम्बन्धी वर्णन गाया गया। इस देवगाथा से सम्बन्धित महासुई लोकगीत और उसका हिन्दी रूपान्तर इस प्रकार है:—

मुलै मलाइयै जाणी केरी मलाई देव देउला नवौणियै बारी-वेगाई

सभी सुणौ लोगुऔ तुऐ कानड़् लाई—देव गोआ बौइन्द्रा बारौ वा गाई"

अर्थात्:—सभी लोग बड़े ध्यान से सुनना देवता बौइन्द्रा जोकि नदौण के राजा हैं का गीत हम गाने जा रहे हैं।

"देव गाइऔन नाथीयै तूमी मौरथौंरी बातौं—कानौ गाशे खेलवे लागे चुंवरी हासौ—
माई देऊ पुडखै वे। धूघलौ हेरी-कंई नाथिया तुं छौतरो—मेरौ"

अर्थात् : खुले मैदान में देवता पुरुष खेल रहे हैं तथा वह अपने साथियों से कहते है कि तुमने मेरा छतर क्यों चुराया।

आत्म कथा

मूलै मूलाईये जाणी केरी मलाई-देव देऊला नवौणीयै बारौ वै गाई
सभी शूणौ लोगुऔ तुऐं कानड़् लाई-देव गोआ बौइन्द्रा बारौवा गाई॥

अर्थात् सभी लोग बड़े ध्यान से सुनना देवता बैन्द्रा, जोकि नदौन (कांगड़ा में) के राजा हैं, का गीत हम गाने जा रहे हैं।

देवै गाइऔ नाथीयै तूमी नौरथौ री बातौ-कानौ गाशै खेलेदे लागे चुपरी हासौ
माई देऊ पुड़खै देवा घूघलौ हेरौ,कंई खाओ नाथिया तूं छौतरौ मेरो।

खुले मैदान में पुरुष (देवता महाराजा) खेल रहे हैं और अपने (नाथिया) से कहते हैं कि तुमने मेरा छतर क्यों चुराया।

ऐंवी गोई खौबरौ नवौणौ थीं जाई-देवं तूं नाथिपै खोई दुर्गा माई
मां बापै वेऔरे तू पूछणा लेवा-माई सौंगे चुड़थै देवा खेलणा जुआ।

यह पता नदौण में चल गया कि उन्होंने दुर्गा की मूर्ति भी गुम कर ली। देवत के मां-बाप ने उससे पूछा कि तुमने क्या कोई जुआ वगैरा तो नहीं खेला।

देवा राजुआ बौइन्द्रा घौरे बीम जाऊ-मां-बौणं हागै भी खेली न जाऊ
देवै राजं बौइन्द्रै गोई बाणणेरी गाड़ी-राखी कौरियौ देओ री बाखी।

देवते ने अब घर से भागने की ठान ली है। अब घर अपनी मां-बहन के पास कैसे जा सकता हूं। इसलिए अपने से कहते हैं कि हे भगवान तुम ही रक्षा करना।

Scanned with CamScanner

देव राजै बौइन्द्रै कौरी लै बैड़ं गौऊ ग्राजू गौऊलौ पांजे पाजे रे चाणे
देबै हेरे राजियै गोश्रै मौनों रै जाणै-सीनें चेंई कौखै शींखरो कै जाणै ।

देव चाला बौइन्द्रा घाटियौ टोकै-सारी गाई मांणछो देवा साधु रे भेखै
गोश्रा मौला बाघली गाई ढाकरा गांव-देबै राजै देवरी से मठीलठी री नांव

देवते महाराज ने अब फैसला कर लिया कि पांडव की तरह वह भी बनवास लेंगे । ऊंचे-नीचे पर्वतों को लांघते हुए, साधु का रूप धारण कर एक गांव मलोठि पहुंचे जोकि ठाकुरों का गांव था ।

देव राजै बौइन्द्रै से कौरी लै बंड़े-भावकोटी धोशी गोएं कौरी एैं श्रोणे
देव राजा नदौ निया भौलियैघिशै-खाई लाई माणछौ देवा बिजली रेगेबै ।
सभी देणौ पौले देवरी रो नांव सभी गाई बोइन्द्रा देवरी रो नांव

देवता महाराज ने अब तय कर लिया कि गरीबों की सेवा करेंगे, और इतने में गांव के लोग उसके गांव के अत्याचारों की कहानी सुनाते हैं । वह खुद देवरी गांव ही जाने की सोचते हैं ।

देव गाऊ बौइन्द्रा से मौनौ दौ परैणै-भाण बौलू कौंलूआ तीर कोठी जाणे
देव चाला बौइन्द्रा सं हैड़ौ रै पाशै-ऐजी हुई बौतखो कोठी छापरो गाशै ।

देवता महाराज पंडित कौलू (नाम) से पूछते हैं कि उस गांव में क्या हुआ ।

कोटी श्रौ गशाई देवा खूंबली पाई-बौड़ो वाज्श्रो कठन पाड़ ली खाई
भाण कोटी बौलगौ रै गोश्रा बोदीयौ आणी-काडी देऊला बौलगौ री चांदीरी चाबी ।

सब लोगों ने देवते के सम्मुख मीटिंग की, बलग के पंडित ने मेहमानी का निमन्त्रण दिया कि अगर आप आओगे तो चांदी की घंटियां बना कर देंगे ।

गांगौ धोशी बौलगौ री तेलौ रा तूला-देव गोश्रा बौइन्द्रा जूबड़ी दा पूजी
फटाफट गोश्रा देवा जूबड़ी दौ उठी-धौखा दीता कौंलूए कांडा गोश्रा चूटी
धैखै राजा लोटीगोश्रा जूबड़ी फूटी-राजी गोश्रा श्रौ देवा जूबड़ी चूरी ।

देवता महाराज निमन्त्रण पर मैदान में पहुंचते हैं और जल्दी ही उठ जाते हैं मगर एक आदमी उनको धक्का देता है जिससे उनके पैर में कांटा चुभ जाता है । मगर मैदान ऐसा लग रहा था जैसे कि घट ही गया हो ।

देवे दीता हेरी लो रूखलौ रा टोपा श्राजी गोश्रा छेवड़ीयौ तुश्रौ मीन सुखा
देवै दीता हेरी लो रूख लौ रा टोपा –मुड़ा देश्रो कुठणै चौऊ देसो रा भूखा
रूलै रीमा सेरी दै होलै घीटकी एैंगूलै– कानू पौके छोटुश्रा राकमौ रै शुएं
पोरी देती नाजरै इनै टैली लाई पागल एैस छोटू देश्रो भीतरै पाई ।।

एक जगह पर कुछ औरतें मूड़ा (जोकि अनाज का बनता है) बना रही थी । उनसे मूड़ी मांगते हैं कहते हैं कि मैं चार दिन से भूंखा हूं मुझे कुछ खाने को दे दो । मगर औरतें उसे पागल समझ कर मज़ाक करती हैं कहती हैं कि हम तुझे घर में बन्द कर देंगी मगर वह तो मूड़ो का छलिया (कानू) खाने लग जाते हैं । जिसे देखकर औरतें हैरान रह जाती हैं ।

पावी रा पात्थरौ ज्ञाणी ददै पाड़ला खाई घोणौ रूखलै कौलू भाठा घाटी बाजी
कौठी बाजी लाई देवा बात छाड़ पाई धौड़ाधू कौलू-एँ झागड़ा शाही

घने जंगल में रुखला नामक जगह (गांव जो अब भी है) पर कौंलू पंडित घंटी बजाता रहता है और घटाघट देखने के लिए शाही (जानवर) का शिकार करने लगता है।

गोरू बाठी रौहियौ औलौ बाठणौ परैंणी-उबा लाणा ईऊठी के देवता चड़ेणें
चडेणें रै कालालें दो देओ गोलू भोठें बीजौ औरौ दएँ मूं केलवी बीजौ

भूख मिटा कर चढ़ाई चढ़ते हैं। चडैणा नामक गांव में गोलू पंडित से कुछ चीज़ मांगते हैं जिसका वह केलबी (देवदार) का बीज बना देते हैं।

देव गाणा बौइन्द्रा सोनेरा लोटा एड़के उड़यँ होड़े गाशँ बोठा
देव गाणा बौईन्दा सोनेरा लोटा ओरा कौरं कौंलूआं पाणी रा लोटा
माठ भौरौ कौंलू पाणीरा चौरू शुंकी धारौ दो देवतिया पाणी दीतो भौरी
उबी लागी रूखलै दौ लाम्बी कवाली आस भौरे कौंलुआं पाणी री नाली

थोड़ी दूर ऊपर जाकर होड़ा नामक जगह पर विश्राम के लिये बैठते (अब भी जगह सुरक्षित है) हैं और कौंलू पंडित से पानी का एक लोटा मांगते हैं मगर पानी न मिलने पर पंडित उनसे रुकने के लिये कहते हैं कि अभी-अभी भरता हूं। पानी के लिए हाथ फैलाते हैं। और पानी से चुलू भर लेते हैं। सूखी धार में न जाने कहां से पानी मिट गया।

भाटा भौरैं कौंलूआं पाणी री नाली ऊबा लागा देवा तूंए रूखलै री धारी
चाणी दीतो बाठणी सावतुओं लागी नीजो देवरी फैरौ दों कियो बोल्ली री बीजौ
देवें हेरी पाखड़ी गींवठी गाओ दूध चोरों, गौऊंचौ देओ आगि पाओ
देवें हेरी पाखड़ी नींवठी गाओ भूइलें री गवलीटीए तेरे खोपो ली गाओ।

पानी पीकर रुखला की चढ़ाई चढ़ते हैं और केलवी (देवदार) के वृक्षों का बीज फैंकते जाते हैं—बोते जाते हैं। यह जंगल पहले देवता का ही था मगर 1965 में सरकार ने अपने कब्जे में ले लिया यह जंगल आज भी हरा भरा पड़ा है चढ़ाई चढ़ कर घाट नामक जगह पर जहां मूइला गांव की गवालन गऊएं चराने लाई थी, देवता महाराज बैठते हैं और एक गाए को पकड़ कर उसका दूध पीने लग जाते हैं। मगर गवालन गऊ को कब से ढूंढ रही थी आखिर दिख ही गई।

मूइलें री गवालिए गोआ छीटकीए छुंआं ऊबै ऊंए मूणछा तूबीं जिववनि मूंआं
ऊबा मूणदां जिवदा की मूंआं-देव राजा नवौणीया जिबाकयगोआ

और डण्डे से देवता महाराज को धीरे से छती है, मगर वह सोये हुए थे जैसे ही डण्डा उनसे लगता है वह एकाएक जाग पड़ते हैं और गुस्सा आ जाता है। गवालन पर लाल पीले हो जाते है कि तूने मेरी नींद क्यों खराब की।

देवराजा नवौनिया बै सूईणौ गाई रातीं देऊला रेड़टीए बै शाठों बाई
मूइलंरी गवालिएं गोई केलवी री गाली ब झोशी देऊ ला मौलकौ ताखें गासणें गाढ़ी
मूइलें से गांवली गवाली पाई शापी– गोरू बीतें कौंलुएं मूईलें क हाको

देवता महाराज ने उसी समय उस भूइलां गांव की गवालन को शाप दे दिया और वह वहीं पर मूर्छित हो गई मगर पशु जोकि लोगों के थे कौंलू पंडित भूईला तक ले गये। (यह जगह आज भी हर साल की एक सक्रान्त को पूजी जाती है) जगह का नाम है घाटी री टीर ।

देवे ग्रौ कौलूएं सैभूइलै के जाई राता-राती भूइलै गैसै रौइला सनाई
ग्रोरूग्रौ भूइलौ ऐरौ शूनौ से पाई गोये पाखुए भूइलै बौसदै जाई
राजा कोटी भूइलै ऐबै ग्रो ग्राजियौ सबैरै बौड़ौं बाड़ग्रौ कठिन एबै कातन मोरै ।

देवता महाराज और कौलू पंडित रातोंरात भुईला पहुंचते हैं। एक तरफ का (पुराना गांव भुईला) गांव नष्ट करके रख दिया पाणु नामक खानदान वहां बसने लगे ।

देवै राजै नादौना रै ग्राजणै घौरै ग्रापू मांजे काटूए देवा 55 भौंणें
कौवै राजे बौइन्द्रै री उन्दारी गाणी षाठो, शावणो भौद्रो काठिनौ पाणी
कौठुए. रोठलों तूंऐं कौसुरै चाणी ठाणौदारौ री छेवड़ीयौ निगड़ौ दौ ग्राणी

असाढ़-श्रावण और भादो में लगातार वर्षा होती है मगर देवता महाराज ने घर (देवरी) पहुंचना था उसी समय वहां पर झगड़ा हो गया जिसमें 55 आदमी मारे गये । धाली गांव के "रोठल" (पुराना खानदान) आपस में झगड़ गये थे ।

देव गाणा बौइन्द्रा सोंने रा रूपो धाली गाशै रोठलै दीता देवतै धूपौ
देव गाणा बौइन्द्रा लांगड़ा वीरो तौंऐ पीटा शींखरै धाली री टीरौ
ऐखो छेजे मौलियै कोटी भागैलै ग्राफी देव राजा नदौनिया पूजणा ग्राफी

देवता बोइन्द्रा असली सोने का रूप है। अब सब लोग उनको जानने लग गये। धाली के रोठल ने भी उनको धूप दिया और उनको आने का निमन्त्रण दिया मगर देवता महाराज अपने आप खुद धाली की शिखर चोटी पर पहुंच गये ।

देव हेरा बौइन्द्रा सै जातरौ के चालीं एक रैली माणी देवा एक रैली शामी
लाई कौंलुए ग्रनु से भौलै री नाटी बुद्ध कौरूग्रा रौठलो भुग्रंलां काटी
तोवै गाशै लागी सारै रै घौरै ऐबी ग्रौसौ कंलवीं तौबै सौरपौ री चौड़ौ

देवता महाराज (जात्र) मेले को चल देते हैं मगर वहां पर देवता से दुर्व्यवहार होता है जिस पर देवता नाराज होकर वापिस लौटते हैं मगर धाली के गांव में एक अजीब हादसा होने लग जाता है। रोटी पकाने के तवे पर सांप के धड़ नज़र आते हैं ।

ऐबै मांतो छेवड़ीग्रों लोटकै ग्रोलौ तौए गाशी लागी देवा खौरपौ री चौड़ो
तूं लाई ग्रो रौठलै देवक चामड़ै री ग्राशौ धाबै रै कलालै दे सुंगटै बाशौ
ग्रांग्रों दा कंई बाड़ ग्रा देवा कंई रा दोषौ चाबै रै कालालै दे सूंगटै बाशौ
ग्रांग्रों दा कंई बाजुग्रा देवा कंई रा दोषौ दूधौ पाणी री गौंऊटो टैबो सालु रा माटौ
बेगियै गशालनी होई ग्रौबरै कै, जीग्रो खाड़ी बाठी बाशठ बेवा भूषदी लाग्रौ

तवे पर सांप नज़र आ रहे हैं । जंगलों में शेर दहाड़ रहे है । ओबरे से (जहां पशु बन्धें होते हैं) पशु ऊपर वाली मन्जिल से बातें कर रहे हैं। दूध और लस्सी का पानी बन गया । रोटी की जगह चमड़े की रोटियां बन गई । इससे गांव वाले घबरा कर देवता (नदौन के राजा) के पास क्षमा मांगने आते हैं।

चोरा जेआं रोठला ऐरैला काओ तेरी रांजुआ देवतिया हेरौ ओ काओ
देवा बोलू राजिया तू भी हेरे न खाई पूरो मोइरी ध्यालौ देऊ ला गराई
पूरो गोइरो थाली दौ देऊला गराई रैइका देई मोईरो देव दे औसौ दे लाई
पुजारो हाबी राजिया हेरू ला सेवा-पूजणै क औसतियै शिखेरोंक डेवा।

हे देवता महाराज! हमें क्षमा कर दो । हमने आपका क्या बिगाड़ा है। आप हमसे बदला लेने की मत सोचो । हम आप का पूरा सोने का (मोईरा) रूप बनायेंगे आप रैईक (जो कि वहां के पुच्यान थे) को ठीक कर लो । हम सब आप के पुजारी बन कर ऊंचे शिखर पर मन्दिर बनाकर आपकी सेवा करेंगे।

ऐंठ कौलिया बालमूआ ऐरली खरमाली काटीं नहीं बालणी कैई का लाई
देव गाणा बौइन्द्रा सोने रा हारो-देवे गाणै री औसौ रैश्कौ री करौ।

बालमू नामक (कोली) हरिजन ने एक समस्या खड़ी कर दी कि उसने देवता को नहीं माना और मर गया जिसके बाद अब तक उसी गांव के हरिजन भाई देवरी में देवता बोंइन्द्रा के गीत गाते हैं । और गाने पड़ते हैं। (यह गाना भी उन्हीं का गाया हुआ है)

पोलकै कदारौ री देवा रसीया पाई
देव हेरा बौइन्द्रा बारौ दा गाई
मोरै तौ गाणा अभी नादौणों रा राजा
धौड़धड़ लागा देवा भूइजै बाजा।

नदौन के महाराज अब देवता बोइन्द्रा केदारनाथ की पहली यात्रा जब करते हैं तो मानों देवरी की भूमि नाच उठती है। चारों ओर ढोल नगारे नरसिंगे बज उठते हैं जय जय कार हो रही है।

आज भी देवता बोइन्द्रा का स्थान ज़िला शिमला के कोटखाई से 3 किलो मीटर दूर देवरी नामक गांव में हैं । जहां पर हर रोज सुबह शाम दो समय वहीं के पुजारी उनकी पूजा करते हैं। मगर पन्द्रह सौ नामक परगना उनकी पूजा करते हैं और अपनी समस्या सुलझाने या पूछने देवरी आते हैं। देवता महाराज 20 साल के बाद केदार नाथ यात्रा पर जाते हैं।

देवता बौइन्द्रा की तीर्थ यात्रा

फूलौ लो फलड़ू फूलौ ला बेसौ
हरमन मेहते लागा देवौ रा दोशौ
हर मन मेहता गोआ देवरी के आई
देव बोलू कूलौ रै पूछणा लाई।

जिस समय देवता ने केदारनाथ जाना हो तो कुछ ऊथल पुथल शुरू होने लगती है । इसी तरह इस साल हरिमन मेहता (कोटी गांव के) जो कि देवता के कारदार हैं, को कुछ कष्टों का सामना करना पड़ा । वह देवरी आकर देवता को पूछते हैं कि मुझे क्या हो गया है । कुछ रक्षा करो ।

देवै लाई राजियै गांगौ नाणै री बाई
पन्द्रहौ शौरि तूं खूंम्बली कराई
देवै लाई राजियै नाणै री बाई
शौगौ पन्द्रहों उरो देवरी कै आई।

देवता महाराज बताते हैं कि मैं केदारनाथ तीर्थ यात्रा पर जाना चाहता हूं । उसी समय हरीमन मेहता (कारदार) सारे परगने (पन्द्रह सौ) घराने को संदेश भेजते हैं और सारे परगने के एक एक घर से एक एक आदमी देवरी बैठक में आ जाते हैं।

शौ आलो पन्द्रहों मोती रा हारो
दोष टालै देवतिया जै डेवणै कदारो
फूलौ ली फूलड़ू फूलौ ला बैसौ
पंडता ब्रह्माया बोडे गांगौ नाणै रो देसौ

पन्द्रह सौ परगने के सब लोग देवता के इस शुभ अवसर को मानते हैं और प्रार्थना करते हैं कि हम पर किसी प्रकार की कोई विपति न आये । ब्रह्मा पंडित शुभ मुहर्त देखते हैं।

फूलौ लो फूलड़ू फूलां रा बेसौ
सातौ गोड़ो चजौ गंगौं रो देसौ
बरशै लो पारणीया भूइयों गारो
चूलू खोलो देवते रो दुर्गे सुनारै।

ब्रह्मा पंडित ने सात चैत्र को मन्दिर से बाहर निकलने का (मुहर्त) दिन निकाला और देवता महाराज मन्दिर से बाहर आखाड़े में आ जाते हैं, जहां रात के बारह बजे मुकुट और अन्य चीजें निकाली (चोल) जाती है । चड़ोल गांव के दूर्गा सुनार के हाथों यह काम सम्पन्न होता है। उस समय का दृश्य बहुत ही आकर्षक और अजीब होता है । चार पांच हजार आदमी खुले मैदान में सर्दी में चुपचाप बैठे रहते हैं । यहां तक की दो घन्टे तक कुत्ता बिल्ली तो क्या तिनका भी नहीं हिलता । मन्दिर में एक पुजारी भण्डारी-कारदार और सुनार के इलावा कोई नहीं जा सकता । कहते हैं अगर किसी ने चोरी छिपे यह दृश्य देख लिया तो उसकी तुरन्त मौत हो जाती है ।

देव चाला गांगी के रौई देवटी शूनी
बैली लाणी आज की मोरे जूबडै चूनी
कुण राज्ञिया होलै पागड़ी लाई
केजा केजा बागियों तुंए देऔ रा कवारी।

देवता महाराज अब चोलू खोलकर उसी समय रात को चूनी (जो कि देवरी से 1 किलो मीटर है) के लिये रवाना हो जाते हैं। पांच हजार आदमियों का काफीला भी देवता की जय जय कार मनाते चूनी में सारी रात बताते हैं जोकि देवता के लिये कुर्बानी है। केदारनाथ जाने वाले यात्री भी पगड़ी बांध कर देवता के आशीर्वाद में आ जाते हैं। देवता पूछते हैं कि कौन कौन साथ जाने वाले हैं।

हरमन महते लाई शुरू दी बाई
देव सौंगें तेखी गोग्रा कदार ग्राजु नाई
देव चाला गांगो का फीरा सूरजो नैरा
दोनें देवै बागुई गोएं बालका पजंरा।

सबसे पहले कारदार हरिमन तैयार होते हैं। देवरी से देवता के दोनों पुजारी (देवै) भगत राम और रामेश्वर साथ में बालक राम जाने को तैयार हैं।

देव चाला गांगौ कै भोजोलै भाणै
केजं कंजें तंरूएं तुंए भूइलै रै भाणै
खरन्ठा चाला शिबिया भूइलै रै बाठौ
देवा देई ला देखैली तीर्थो री बाटौ

देवता महाराज तीर्थ पर जा रहे हैं सब में बड़ी खुशी है। भूइला गांव से खरन्ठा और शिबिया दोनों पंडितों को तैयार होने को कहा जाता है।

देव चाला गांगौ का मारै हौठी कामौ
जियालाल ठकालू चाला बालक रामौ
देव चाला गांगौ क मारै हौठी कामौ
कैरी दो बालडू चाला कौंल रामौ
देव चाला गांगौ का घौरै कै भी जाणा
कोटी दौ मनोहरू चाला झझोलीदौ शामा
देव चाला गागौ का हौठी गोई कामौ
कटैड़ी दौ चौंदरू चाला कौंल रामौ
बेली रामा मौतै लाई शुरू दी बाई
देव सौंगै डैवणै मेरे कदार आज, नहांई।

देवता महाराज तीर्थ यात्रा पर जा रहे हैं अब कोई परगने (पन्द्रह सौ) वाले शुभ काम ब्याह-शादी-कथा-पूजन (ढोल नगारा) नहीं कर सकते। ठकाल से जियालाल, बालक राम, क्यारी से कौंल राम, बालडू और चंदरु कोटी से मनोहरु, मेला राम, मझोली से रामानन्द, बेली राम मेहत्ता और अन्य यात्री तीर्थ यात्रा के लिये तैयार हो गये हैं।

देव चाला कवारक हौठी गोई कामौ
पांजों कौरी मेंबरों तुंए डैवणो इन्तजामौ
भैरीया भडारीया तुंए भडरी दे जांवें
देवै मैं कवारी दे जोड़ी परांवें।

सब केदार जाने वाले भाईयों के हाथों में (परंदे) रक्षा बन्धन के प्रकार के धागा बांध गये जो कि रक्षा के लिये बांधे जाते हैं । और चल देते हैं । देवता के भण्डारी बिहारी लाल जी अपने काम में लग जाते हैं और देवता से विदाई लेते हैं । पन्द्रह सौ परगने के चुने हुए पांच मैम्बर भी वापसी के इन्तजाम की तैयारी में जुट जाते हैं ।

खरौंण लाग्रौ शिबिया गूगलौ रै धूपौ
देव चाला नांदा आपणै रूपै
चाला गोआ नांदा औसौ पौलकी बाई
पौलें चैई सलामतो मारं देवरी री टाई ।

केदारनाथ जाने की यह पहली कारा बनी हुई है । देवता महाराज अपने विकिट रूप में चल पड़े हैं । खरुन्ठा और शिबिया पंडित दोनों धूप बती सारा सामान बांध लेते हैं।

देव गाणा बौइन्द्रा सोनै रो हारो,
बिशू री पौखी नाणीं हारीद्वारौ
देव राजै मारै सापौं दे भोलै
ऋषि केश नांईयों डेवै लछमन झूलै ।

बैसाख की संक्रान्त को हरिद्वार पहुंच जाते हैं । जहां सब लोग नहा धो सकते हैं और कपड़े बदल सकते हैं । ऋषिकेश लच्छमन झूला पार कर केदार नाथ के शिखरों में प्रवेश करते हैं ।

कुणै पाओ पौलै राजा चालने री हारौ
गंग आजौ नहाईयों तूए देऔरै कदारी
डटो गाऊ देऊरो ऊबो गाऊ पबाड़ों
26 बैशाख खुलणों देऔरो कवारै ।

नीचे गंगा मईया शीतल जल बहा रही है और ऊपर चांदी के समान चमकते पर्वत। कितने भाग्यशाली हैं आप सब यात्री एक देवता के साथ नहा कर वापिस आयेंगे । और रास्ते में पता लग जाता है कि 26 गते बैशाख को देवता का (केदारनाथ) कवाड़ खुलने वाला है।

केदारनाथ राजिया तुंए पहुंचे जाई
चाली दी तौ देवा ए पौलकी बाई
देवा नांई पौरवी आपणै रूपै
खरुन्ठा जालौ शिबिया गुगलौ धूपौ ।

केदार नाथ पहुंचते ही देवता का स्वागत होता है । और किवाड़ खुलते ही पुजारी (भगत राम) देवता के साथ जाता है और किवाड़ में प्रवेश करते ही जय-जयकार शुरू होती है। पंडित बाहर धूप बत्ती जलाते हैं।

बीजै औलै देओ रं। साबा बामणो बाई
गांगो नांहीयों देवता गोआ देवरी क आई

देव गाऊ राजिया भौजणी माणी
गांगी नाईयों देवता पूजा नाई रै हाठी।

देवता महाराज के स्नान करने के बाद सब यात्री भी स्नान करते हैं उसी समय घर के लिये रवाना हो जाते हैं। टीहरी गढ़वाल इत्यादि होकर देवता अब हाटकोटी दुर्गा माता के मन्दिर में पहुंच गये हैं।

दयानन्दा बाबग्रा गोश्रा ग्रागड़ ग्राई
देव घौरे पहुंची लागा ग्रौर तू देवरी कजाई
फूली लो फूलाड़ू फूलो वीरी
गांगां नाहियों देव पूजा सराड़ री टीरौ।

हाटकोटी से दयानन्द बाबा (जो कि देवता का माली होता है) आगे निकल जाते हैं ताकि घर पर सूचना दी जा सके कि सब लोग ठीक ठाक पहुंच गये हैं। घर पर सूचना मिलते ही परगने का बच्चा बच्चा खुश हो जाता है और ढोल-नगारे दो महीने के बाद बजने शुरू हो जाते हैं। देवता महाराज देवरी से 7 किलोमीटर दूर सराड़ नामक जगह पर पहुंच जाते हैं।

शाठै कियै नालटिये कियै मौहाललै
नाचदी गोऐ खैलदी तुए खनैठी क चालै
शौएं कियो पन्द्रहं इन्हें देग्रौरी नाग्रों
गांग गोश्रा नाहियों `वता घौरी के ग्राई।

देवरी से लेकर खनेटी तक लोगों का समूह उमड़ पड़ा। जगह जगह पर पटाखे चल रहे हैं। बच्चे बूढ़े नौजवान स्त्री-पुरुष सब लोग देवता के स्वागत को जा रहे हैं। पन्द्रह सौ परगना का बच्चा बच्चा आज इस शुभ अवसर पर शामिल है। सब खुश हैं कि देवता गंगा मईया नहा कर वापिस आ गये। नाचते गाते सब लोग खनेठी पहुच जाते हैं।

बावै लाग्रौ तुंए इनें कुंगी रा टीका
शौएं इनें पौन्द्रहें दैंपणी वीता
देसकै सूरजी गाऊ रात कै तारै
एक दैंपण देवरी वीतो बूजो पडारै।

देवता की वापसी पर पन्द्रह सौ परगने वालों ने (जग) दैंवण दिया जिसमें कि 10 हजार लोगों ने खाना खाया

देव चाला राजिया देवही कै बाई
शौगी पन्द्रहों बौणी के ग्राई
देवाहेरा राजिया तू बारी दा गाई
देवा कवारिया एबैं शौखिया पाई।

सब लोग मन्दिर के नीचे इकठ्ठे हो गये देवता महाराज अपनी पुरानी जगह (पालकी पर) विराजमान हो गये हैं सब लोग हाथ जोड़कर देवता से प्रार्थना करते हैं कि अब हमारी रक्षा करना ।

देव गाणा देवरी मोरं गाणा ग्रापू
बारी चैंई ऊमरी ग्राकाशवाणी रा बाबू
देव ग्रौसी गाणं री रैहकी री कारो,
देव चाला मिलदा मूलकी सारा
चाबियां कुखड़ ग्रा बाशी लो कंई
वोनें चंई बाबू तूंए ऊमरी तंई।

हि0 कला संस्कृति भाषा अकादमी, परीमहल,
शिमला–9 ।

"I wonder how people find
time to hate when the life is
too short to love."

—Tagore.

"सोमसी" पत्रिका के तीन वर्षों के बारह अंको में क्षेत्रीय अध्ययन के लेख

"सोमसी" पत्रिका हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी की त्रैमासिक पत्रिका है । जनवरी, 1975 से आरम्भ हुई थी और दिसम्बर, 1977 तक इस के बारह अंक प्रकाशित हो चुके हैं । उस के पश्चात् 1978 के दो अंक जनवरी, 1978 और अप्रैल, 1978 भी प्रकाशित हो चुके हैं । दिसम्बर, 1977 तक के बारह अंकों में प्रकाशित रचनाओं की सर्वेक्षण सूची बनाने के कई तरीके हो सकते हैं । यथा विषयवार, क्षेत्रवार, साहित्यिक विधावार एक ही विषय के शीर्षकों को ग्रुपबद्ध करके शीर्षक शृंखलावार, लेखावार आदि, इन सभी के उद्देश्य और प्रयोजन अलग अलग होते हैं । प्रस्तुत सूची के आठ उपशीर्षक तो क्षेत्रवार है और शेष तीन 9,10,11 विविध हैं । लगभग एक सौ पृष्ठों की इस पत्रिका में लगभग अस्सी प्रतिशत भाग हिमाचल प्रदेश के सांस्कृतिक क्षेत्रीय अध्ययन का होता है । इस भाग को हम हिमाचल प्रदेश के आठ जनपदों और सामान्य हिमाचली संस्कृति के नौ संदर्भों में रख सकते हैं ।

इस दृष्टि से देखने पर रचनाओं की गिनती इस प्रकार बैठती है:—

1. कांगड़ा, हमीरपुर, ऊना		15
2. बिलासपुर		11
3. चम्बा		8
4. मण्डी		4
5. कुल्लू		9
6. सिरमौर		8
7. महासू (शिमला सोलन)		26
8. लाहुल स्पिति किन्नौर		7
9. सामान्य हिमाचली के शीर्षक से		33
10. हिन्दी और हिमाचल की दो पहाड़ी उप-भाषाओं की तुलनात्मक वाक्यावली		2
		123
11. अन्य-सैद्धांतिक और सामान्य	..	24
कुल योग	..	147

इन 133 रचनाओं का विवरण सामान्य पाठकों की जानकारी के लिये हम दे रहे हैं ताकि जो कोई जिस किसी अंक की आवश्यकता अनुभव करे वह उसे मंगवा सके ।

"सोमसी" परिवार की ओर से इस स्थूल सर्वेक्षण का लाभ उठाते हुए हम यत्न करेंगे, कि विशेष रूप से हिमाचल प्रदेश अथवा हिमालय क्षेत्र के जिन जनपदों का सांस्कृतिक परिचय अभी तक नहीं आया है, उसे उपार्जित करने का प्रयत्न किया जायेगा, तथा भाषा साहित्य और कला-संस्कृति की साम्प्रतिक जानकारी और अधिक समाविष्ट करने का प्रयास किया जायेगा ।

—सरोज शर्मा,

Scanned with CamScanner

1. कांगड़ा, हमीरपुर, ऊना

क्रमांक	अंक	लेख	लेखक
1.	जनवरी, 75	कांगड़ी लोक गीतों में कल्पना का स्वरूप	डा0 गौतम व्यथित
2.	जुलाई, 75	कांगड़ी लोक साहित्य एक अध्ययन	डा0 आत्मा राम
3.	जनवरी, 76	कांगड़ी लोक गीतों में गालियां	डा0 मनोहर लाल
4.	जुलाई, 76	कांगड़ा क्षेत्र के संस्कार गीत	श्री राम कृष्ण कौशल
5.	जुलाई, 76	कांगड़ी कविता में मध्यवर्गीय जन-जीवन	श्री सुख देव शर्मा
6.	अक्तूबर, 76	कांगड़ी के कुछ शब्दों का तुलनात्मक अध्ययन	श्री सुदर्शन वशिष्ट
7.	जनवरी, 77	कांगड़ा के लोक नाट्य	श्री अशोक शर्मा
8.	जनवरी, 77	कांगड़ी लोक साहित्य में जन्म गीत	विमला कुठियाला
9.	अप्रैल, 77	बावभिति चित्र साहित्य और कांगड़ा कला के सन्दर्भ में	दलजीत खरे
10.	अप्रैल, 77	कांगड़ा के लोक गीतों में काव्यत्व	डा0 मनोहर लाल
11.	अक्तूबर, 77	ऊना क्षेत्र में प्रचलित मुहावरे और लोकोक्तियां	श्री खुशी राम
12.	अक्तूबर, 77	कांगड़ी लोकोक्तियां तथा मुहावरे	श्री दुर्गादत शास्त्री
13.	अक्तूबर, 77	कांगड़ी लोकोक्तियां	श्री ओंकार लाल भारद्वाज
14.	अक्तूबर, 77	कांगड़ा क्षेत्र लोकोक्तियां तथा पहेलियां	श्रीमती सुदर्शन डोगरा
15.	अक्तूबर, 77	हमीरपुर की लोकोक्तियां तथा मुहावरे	डा0 आत्मा राम

2. बिलासपुर

1.	जुलाई, 75	बिलासपुर जन जीवन में विशिष्ट अर्थ वाले शब्दों का अध्ययन ।	श्री मनसा राम शर्मा
2.	अक्तूबर, 75	कहलूरी उपभाषा में संस्कृत के शब्द	श्री शुकदेव शर्मा
3.	जनवरी, 76	बिलासपुर हमीरपुर क्षेत्र में प्रचलित लोक गाथायें	श्री बालक राम भारद्वाज
4.	जनवरी, 76	बिलासपुरी लोकोक्तियां में वेदना	श्री पद्मनाभ गौतम
5.	अप्रैल, 76	बिलासपुरी लोकगीत मोहना	श्री सीता राम खजूरिया
6.	जुलाई, 76	कहलूरी उपभाषा के कतिपय शब्द	श्री मनसा राम शर्मा अरुण
7.	अक्तूबर, 76	बिलासपुर के राजा भीमचन्द के गुरु गोविन्द सिंह के साथ सम्बन्ध ।	डा0 एम0 एस0 आहलूवालिया
8.	जनवरी, 77	जनरल जोरावर सिंह कहलूरिया	शक्ति सिंह चन्देल
9.	अप्रैल, 77	रुकमणी कुण्ड	श्री हुकम सिंह ठाकुर
10.	जुलाई, 77	कहलूरी कविता एक अध्ययन	सरोज शर्मा
11.	अक्तूबर, 77	कहलूरी जनपद के मुहावरे और लोकोक्तियां	सरोज शर्मा

3. चम्बा

1.	जनवरी, 75	मरकुला मन्दिर	श्री खेमराज गुप्त
2.	अक्तूबर, 75	चम्बा के साहू क्षेत्र की कृषि सम्बन्धी शब्दावली	श्री हरिप्रसाद सुमन

क्रमांक	अंक	लेख	लेखक
3.	जनवरी, 76	पहाड़ी चित्रकला में चम्बा कलम	श्री हरिश्चन्द्र राय
4.	जुलाई, 76	गद्दी जीवन के तीज त्यौहार	हरि प्रसाद सुमन
5.	जुलाई, 76	गादी पहाड़ी एक परिचय	अमर सिंह रणपतिया
6.	अप्रैल, 77	गद्यार क्षेत्र का त्यौहार बसो	श्री अमर सिंह रणपतियां
7.	जुलाई, 77	लोकोक्तियों में गद्दी जनजीवन	श्री बसन्त शर्मा
8.	अक्तूबर, 77	चम्बा क्षेत्र की लोकोक्तियां और मुहावरे	श्री हरि प्रसाद सुमन

4. मण्डी

1.	अक्तूबर, 75	कृषि परक मण्डियाली शब्दावली	डा0 कांशी राम पठानियां
2.	अप्रैल, 76	मण्डियाली लोकगीतों में भाव सौंदर्य	डा0 कांशी राम पठानियां
3.	अक्तूबर, 76	गढ़ों की धरती माण्डव्य नगर	डा0 कांशी राम पठानिय
4.	अक्तूबर, 77	मण्डियाली लोकोक्तियां	डा0 कांशी राम पठातियां

5. कुल्लू

1.	जनवरी, 76	कुल्लू जनपद के विवाह संस्कार सम्बन्धी शब्दों का सांस्कृतिक धरातल।	श्री चन्द्रशेखर बेबस
2.	जुलाई, 76	कुल्लू का लोकनृत्य नाटी	श्री चन्द्रशेखर बेबस
3.	अक्तूबर, 76	हिमाचल का सांस्कृतिक स्थल मणिकर्ण	श्री मुरलीधर शर्मा
4.	अक्तूबर, 76	औटर सिराज कुल्लू के लोकगीतों में भावों का प्रवाह	ठाकुर दत्त शर्मा
5.	जनवरी, 77	गणतंत्र पद्धति का विशिष्ट आदर्श मलाणा	ठाकुर मौलू राम
6.	अप्रैल, 77	पुण्य स्थल पराशर झील	विद्या चन्द ठाकुर
7.	जुलाई, 77	फागली	श्री नरेन्द्र कुमार
8.	अक्तूबर, 77	कुल्लू जनपद में लोकोक्तियों का प्रयोग	कु0 विद्या शर्मा
9.	अक्तूबर, 77	कुल्लूई लोकोक्तियां	श्री बाल कृष्ण

6. सिरमौर

1.	अप्रैल, 75	सुकेती का जीवाशेष उद्यान	श्री कैलाश भारद्वाज
2.	जुलाई, 75	प्वाड़ा झांखो अजवा	श्री विद्यानन्द सरैक
3.	जुलाई, 75	सिरमौर का एक लोक नायक होकू मिया	अमर सिंह चौहान
4.	अप्रैल, 76	पझोता आंदोलन	वैद्यसूरत सिंह
5.	जुलाई, 76	सिरमौरी लोक नृत्य	विद्यानन्द सरैक
6.	अक्तूबर, 76	भगवान भृगुनाथ परशुराम	मदन मोहन कमल
7.	अप्रैल, 77	सिरमौरी पहाड़ी कविता एक सर्वेक्षण	मीना ठाकुर
8.	अक्तूबर, 77	सिरमौर क्षेत्र की लोकोक्तियां	रामदयाल नीरज

Scanned with CamScanner

क्रमांक	अंक	लेख	लेखक

7. महासू

1.	जनवरी, 75	सरहान क्षेत्र (जिला शिमला की सांस्कृतिक पृष्ठ भूमि) ।	अकादमी द्वारा
2.	जुलाई, 75	बरलाज	केशवानन्द
3.	जुलाई, 75	महासई लोकगीतों में सामाजिक परिवेश	जगदीश शर्मा
4.	अक्तूबर, 75	महासुवी की शब्द सम्पदा	हरि राम जसटा
5.	जनवरी, 76	मेला जागरा	काहन सिंह जमाल
6.	अप्रैल, 76	महासू	सी0 आर0 बी0 ललित
7.	अप्रैल, 76	महासूई कविता एक परिचय	मीना ठाकुर
8.	अक्तूबर, 76	बघाटी के धातु शब्द	ईश्वरीदत
9.	अक्तूबर, 76	महासूई उपभाषा के कतिपय पारिवारिक शब्दों का संस्कृत सम्बन्ध ।	रामानन्द आचार्य
10.	जनवरी, 77	विभिन्न संस्कृतियों का संगम महासू जनपद	गोवर्धन सिंह
11.	जनवरी, 77	महासू के रोढ़ू क्षेत्र की कुछ लोकोक्तियां	आशा चौहान
12.	जनवरी, 77	हिमाचल रचनाकार संगम की जुब्बल में साहित्य गोष्ठी	सी0 आर0 बी ललित
13.	अप्रैल, 77	क्योंथल जन पद और विवाहगीत	शकुन्तला शर्मा
14.	जुलाई, 77	महासू क्षेत्र एवं जनसंख्या	हरि राम जसटा
15.	जुलाई, 77	ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य	गोवर्धन सिंह
16.	जुलाई, 77	महासू के धार्मिक संदर्भ में	कलावती जसटा
17.	जुलाई, 77	महासू के मेले और त्यौहार	ललित
18.	जुलाई, 77	विवाहगीत	जगदीश शर्मा
19	जुलाई, 77	लोक संगीत	सलीम
20.	जुलाई, 77	महासू के वेशभूषा और खान पान	भुवनेशवरी राठौर
21.	जुलाई, 77	महासूई उपभाषा और साहित्य	मीना ठाकुर
22.	जुलाई, 77	हिन्दी महासूई तुलनात्मक वाक्यावली	हरि राम जसटा
23.	जुलाई, 77	महासूई बोलियों की वाक्यवली	अकादमी द्वारा संकलित
24.	अक्तूबर, 77	शिमला क्षेत्र की लोकोक्तियां	हरि राम जसटा
25.	अक्तूबर, 77	क्योंथल जनपद की लोकोक्तियां	उमा शर्मा
26.	अक्तूबर, 77	सोलन क्षेत्र की पहेलियां	नरेन्द्र अरुण

8. लाहुल स्पिति और किन्नौर

1.	अक्तूबर, 75	किन्नौरी बोलियां	श्री ठाकुर सेन नेगी
2.	अक्तूबर, 75	लाहुल की किराती-कनाशी बोलियां	श्री के अंगरूप लाहुली
3.	अप्रैल, 76	लाहुल में विवाह प्रथा	श्री बलराम

Scanned with CamScanner

क्रमांक	अंक	लेख	लेखक
4.	जुलाई, 76	लाहुल स्पिति और किन्नौर बौद्ध धर्म और कला	कुमारी त्रिभुवन रेखा राठौर
5.	अप्रैल, 77	लाहुल के मन्दिर और गोम्पे	श्री बलराम
6.	अक्तूबर, 77	लाहुल की लोकोक्तियां प्रयोग एवं प्रसंग	श्री के अंगरूप लाहुली
7.	अक्तूबर, 77	किन्नर क्षेत्र की लोकोक्तियां	डा0 बंशी राम

9. हिमाचली (सामान्य पहाड़ी) की भाषा संस्कृति सम्बन्धी

1.	जनवरी, 75	हिमाचली वास्तुकला: परम्परा और शैली	आचार्य दिवाकर दत्त शर्मा
2.	जनवरी, 75	हिमाचल का लोक नाट्य करियाला	श्री ओम चन्द हांडा
3.	जनवरी, 75	पहाड़ी मुहावरे और कहावतें	श्री हरि राम जसटा
4.	जनवरी, 75	पहाड़ी भाषा लिपि	श्री मौलू राम ठाकुर
5.	अप्रैल, 75	हिमाचली भाषा सर्वेक्षण का महत्व	डा0 श्याम लाल
6.	अप्रैल, 75	हिमाचल प्रदेश के लोकवाद्यों का वर्गीकरण	श्री राम दयाल नीरज
7.	अप्रैल, 75	हिमाचली ललित कलाओं के पारखी	डा0 नील मणि उपाध्याय
8.	अप्रैल, 75	हिमाचली कहावतों में बालक	श्री राजन्य जय सिंह
9.	अप्रैल, 75	हिमाचली वास्तुकला के वाङमय की सूची	श्रीमती भुवनेश्वरी राठौर
10.	जुलाई, 75	हिमाचली संस्कृति एवं आयुर्वेद	श्री लाल चन्द प्रार्थी
11.	जुलाई, 75	पहाड़ी भाषा की उप भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन	श्री मोलू राम ठाकुर
12.	अक्तूबर, 75	ग्रियर्सन का पहाड़ी भाषाओं के सम्बन्ध में मत :—एक विश्लेषण।	डा0 बंशी राम शर्मा
13.	अक्तूबर, 75	भाषा का स्वभाव और पहाड़ी भाषा जनपद	शशी रानी
14.	अक्तूबर, 75	शैली विज्ञान और पहाड़ी काव्य भाषा	आशा गोयल
15.	अक्तूबर, 75	हिमाचल प्रदेश के मन्दिरों की शैली तथा सूची	त्रिभुवन रेखा
16.	जनवरी, 76	हिमाचल जन जीवन पर गोरखा आक्रमण का प्रभाव	शक्ति सिंह चन्देल
17.	जनवरी, 76	पहाड़ी लोक महाभारत पण्डमायण में प्रयुक्त शब्दावली का समाज शास्त्रीय अध्ययन	भुवनेश्वरी राठौर
18.	जनवरी, 76	हिमाचल की हेला या बुआरा प्रथा	रवीन्द्र रणदेव
19.	जनवरी, 76	हिमाचली में चीश पाणी	श्यामा कुमारी
20.	अप्रैल, 76	पहाड़ी पक्षियों की नामावली और उन सम्बन्धी उक्तियां	मौलू राम ठाकुर
21.	अप्रैल, 76	ठेठ पहाड़ी के ठाठ	हरि राम जसटा
22.	अप्रैल, 76	हिमाचली लोक गीतों में सामाजिक चेतना	डा0 गौतम व्यथित
23.	अप्रैल, 76	हिमाचल का लोक नाट्य बांठड़ा	वासुदेव शर्मा
24.	अक्तूबर, 76	अमर कोश की परम्परा में पहाड़ी भाषा के शब्दों का अध्ययन	आचार्य शालग राम
25.	अक्तूबर, 76	हिमाचल की आधुनिक हिन्दी कविता	सरोज शर्मा
26.	जनवरी, 77	पहाड़ी हिमाचली भाषा में लिखित साहित्य	हरि राम जसटा

मांक	अंक	लेख	लेखक
27.	जनवरी, 77	हिमाचल में सूर्य पूजा	डा0 लालता प्रसाद पाण्डेय
28.	जनवरी, 77	पहाड़ी शब्दों की व्युत्पत्ति	लेख राम
29.	जनवरी, 77	लोक नाट्य-परम्परा और सम्भावना	कैलाश आहलूवालिया
30.	अप्रैल, 77	पर्वतीय क्षेत्र में महाभारत काल में बहुपति प्रथा	सत्यपाल शर्मा
31.	अप्रैल, 77	हिमाचल में आयुर्वेद का अतीत	सुरेन्द्र कुमार
32.	जुलाई, 77	हिमाचल लोक नृत्य परम्परा	हरि राम जसटा
33.	अक्तूबर, 77	हिमाचल में समय वाचक गलाण खुआणे	डा0 श्याम लाल

10. तुलनात्मक अध्ययन

1.	जनवरी, 77	हिन्दी महासूई कुल्लूई तुलनात्मक वाक्यावली (1—36 वाक्य)	मीना ठाकुर, विद्या शर्मा
2.	अप्रल, 77	हिन्दी महासूई कुल्लूई तुलनात्मक वाक्यावली (37—74 वाक्य)	मीना ठाकुर, विद्या शर्मा

11. अन्य सैद्धान्तिक एवं सामान्य

1.	जनवरी, 75	पूर्विका (सोमसी के सम्बन्ध में)	श्री लाल चन्द प्रार्थी
2.	जनवरी, 75	ग्राम्य धर्म, रंगमंच के संदर्भ में	हरि चन्द पराशर
3.	अप्रैल, 75	चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, जीवन और व्यक्तित्व	डा0 पीयूष गुलेरी
4.	अप्रैल, 75	कालिदास के ग्रन्थों में हिमालय वर्णन	सरोज शर्मा
5.	अप्रैल, 75	शिवरात्री-देवात्मा नटराज शिव	वरतू देवी
6.	जुलाई, 75	उन्नीसवी शती की रंगकला का एक पृष्ठ-कसबाई मण्डवे	हरि चन्द पराशर
7.	जुलाई, 75	वैष्णो देवी की यात्रा	दुर्गादत्त शास्त्री
8.	जुलाई, 75	पश्चिमी पहाड़ी का परम्परागत क्षेत्र	हरिचन्द पराशर
9.	जुलाई, 75	विष्णु पुराण गाथा के प्रतीक	विद्या शर्मा
10.	जुलाई,75	हमारा सूक्ति संसार	अंजान
11.	अक्तूबर, 75	भर्तृहरि का शब्दशास्त्रीय ग्रन्थ वाक्यपदीय	डा0 शांति भिक्षु शास्त्री
12.	अक्तूबर, 75	हमारा सूक्ति संसार	सरोज शर्मा
13.	अक्तूबर, 75	पल भर साथ एक साये का	किशोरी लाल वैद्य
14.	जनवरी, 76	हिमाचल के हिन्दी कवि बृजराज का कर्तृत्व	श्रीकांत प्रत्यूष गुलेरी
15.	जनवरी, 76	सांस्कृतिक समन्वय के उन्नायक बहुभाषा विद-खुसरो	विद्या शर्मा
16.	जनवरी, 76	शब्द श्री स्थायी स्तम्भ जनवरी, 76 से	अकादमी द्वारा संयोजित
17.	अप्रैल, 76	सांस्कृतिक विसरण और समन्वय	हरि चन्द पराशर

क्रमांक	अंक	लेख	लेखक
18.	जुलाई, 76	Studies in the systematics of Himachal linguistics (जुलाई, 76 से लेकर अक्तूबर, 1977 तक	डॉ0 सिद्धेश्वर वर्मा
19.	अक्तूबर, 76	संस्कृत को शकारों का संक्षिप्त परिचय तथा अमरकोश में शब्द विन्यास	केशव शर्मा
20.	अक्तूबर, 76	भाषा-वसुओं की धातृ	हरि चन्द पराशर
21.	अप्रैल, 77	हस्तशिल्प और लोक कलाएं	शाम सुन्दर जैतिक
22.	अक्तूबर, 77	यशपाल स्मृति कैसे स्थायी हो	डा0 प्रभाकर माचवे
23.	अक्तूबर, 77	लोकोक्ति का साहित्यक महत्व	हरि चन्द पराशर
24.	अक्तूबर, 77	यशपाल की कहानियों में पहाड़ी जीवन शैली की कुछ झलकियां	देवकला

आर0 एन0 28271/75

1. निदेशक, शिक्षा विभाग, हि0 प्र0 द्वारा पत्रांक इ0डी0एन0एच0 6(8)-(b)-(3)1/75, दिनांक 24 फरवरी, 1975 के अधीन समस्त कालेजों, स्कूलों और जिला पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत।

2. निदेशक, पंचायत विभाग, हि0 प्र0 द्वारा पत्र संख्या 7-3/66-पंच3, दिनांक 21 जुलाई, 197 के अनुसार प्रदेश के खण्ड विकास तथा पंचायत पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत ।

हिमाचल कला-संस्कृति-भाषा अकादमी, शिमला द्वारा प्रकाशित तथा नियंत्रक, मुद्रण तथा लेखन सामग्री, हि0 प्र0 द्वारा मुद्रित।